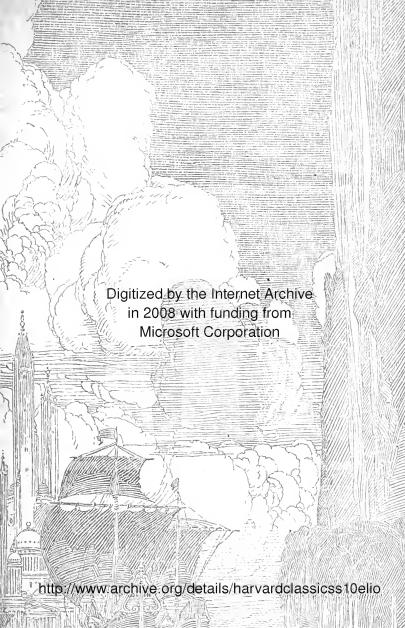


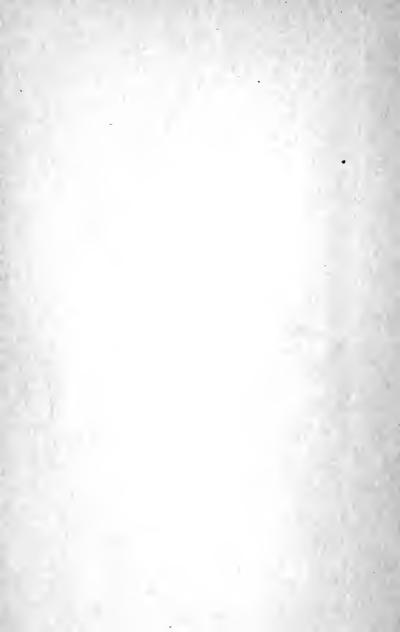


# THE LIBRARY OF THE UNIVERSITY OF CALIFORNIA LOS ANGELES

FROM THE LIBRARY OF JIM TULLY

GIFT OF MRS. JIM TULLY





#### WASHINGTON IRVING'S HOME SUNNYSIDE



### THE HARVARD CLASSICS SHELF OF FICTION SELECTED BY CHARLES W ELIOT LL D



#### AMERICAN FICTION

EDGAR ALLAN POE EDWARD EVERETT HALE
WASHINGTON IRVING FRANCIS BRET HARTE
NATHANIEL HAWTHORNE
MARK TWAIN



EDITED WITH NOTES AND INTRODUCTIONS
BY WILLIAM ALLAN NEILSON Ph D

P F COLLIER & SON NEW YORK

#### Published under special arrangement with The Houghton Mifflin Company

Copyright, 1892 and 1899 By Bret Harte

Copyright, 1917 By P. F. Collier & Son

## CONTENTS

|              |            |          |      |      |      |      |      |     |          |     |    | PAGE       |
|--------------|------------|----------|------|------|------|------|------|-----|----------|-----|----|------------|
| Fiction in A | MERICA .   |          | •    | •    |      |      |      | •   | •        | •   | •  | iii        |
|              | NATH       | IANIEL   | HA   | .w   | HC   | RN   | E    |     |          |     |    |            |
| BIOGRAPHICA  | NOTE .     |          |      |      |      |      |      |     |          |     |    | хi         |
| CRITICISMS A | ND INTERPR | ETATIONS | :    | •    | •    | •    | •    | •   | •        | •   | •  |            |
|              | Y HENRY JA |          |      |      |      |      |      |     |          | _   |    | xiii       |
|              | Y GEORGE E |          | RRY  |      |      |      |      |     |          |     |    | xiv        |
| III. B       | Y ARTHUR   | SYMONS   |      |      |      |      |      |     |          |     |    | xvii       |
|              | y BLISS PE |          |      |      |      |      |      |     |          |     |    | xix        |
| V. B         | Y ANDREW   | LANG .   |      |      |      |      |      |     |          |     |    | xxi        |
|              |            |          |      |      |      |      |      |     |          |     |    | xxv        |
| THE CUSTOM   |            |          |      |      |      |      | ARI  | ET  | i<br>Lea | TER | ,, | 1          |
| THE SCARLET  |            |          |      | •    |      |      |      |     |          |     |    | -          |
| CHAPTER      |            |          |      |      |      |      |      |     |          |     |    |            |
| * I.         | THE PRISO  | N-Door   |      |      |      |      |      |     |          |     |    | 39         |
| 11.          | THE MARKE  |          | •    | •    | :    | •    | :    | •   | •        | •   | •  | 39<br>41   |
| III.         | THE RECOGN |          | :    | :    |      | :    |      | :   | :        | •   | •  | 51         |
| IV.          | THE INTER  |          | •    | •    | •    | •    | •    | •   | •        | •   | •  | 60         |
| V.           | HESTER AT  |          | EDIE | •    | :    | •    | :    | :   | •        | •   | •  | 67         |
| VI.          | PEARL .    |          |      | :    |      | :    | :    | :   | •        | •   | •  | 76         |
| VII          | THE GOVER  |          |      | •    | •    |      | :    | :   | :        | •   | •  | 86         |
| VIII.        | THE ELF-C  |          |      | M    | VIC. |      |      | :   | •        | •   | •  | 93         |
| IX.          | THE LEECH  |          |      |      |      | LL   | •    | :   | :        | •   | •  | 102        |
| Χ.           | THE LEECH  |          |      |      |      | •    | :    | :   | •        | •   | •  | 112        |
| XI.          | THE INTER  |          |      |      |      | :    | :    | :   | :        | •   | •  | 121        |
| XII.         | THE MINIS  |          |      |      | •    | •    | :    | :   | •        | •   | •  | 128        |
| XIII.        | ANOTHER V  |          |      |      | •    | :    |      |     |          | •   | •  | 139        |
| XIV.         | HESTER AND |          |      |      |      | :    |      | :   | •        | •   | •  | 147        |
| XV.          | HESTER AND |          |      |      |      |      | :    | :   | :        | •   | •  | 153        |
| XVI.         | A FOREST   |          |      |      | :    | •    | •    | :   | •        | •   | •  | 160        |
| XVII.        | THE PASTOR |          | -    |      |      | epp  | •    | :   | :        | •   | •  | 166        |
| XVIII.       | A FLOOD OF |          |      |      |      | , ER |      |     | -        | •   | •  | 175        |
| XIX.         | THE CHILD  |          |      |      |      | •    | :    |     | •        | •   | •  | 181        |
| XX.          | THE MINIS  |          |      |      | IDE  | •    |      | ٠   | ٠        | •   | •  | 188        |
| XXI.         | THE NEW    |          |      |      | -    | •    | ٠    | •   | •        | •   | •  |            |
| XXII.        | THE PROCES |          |      |      |      |      | •    | •   | •        | •   | •  | 199<br>208 |
| XXII.        |            |          |      |      |      |      |      |     | ٠        | •   | •  |            |
| XXIII.       | THE REVEL  |          | THE  | . SC | ARL  |      | LET' | LER | •        | •   | •  | 218        |
| AAIV.        | Conclusion |          | ٠    | ٠    | ٠    | •    | •    | •   | •        | •   | •  | 227        |
| RAPPACCINI'S | DAUGHTER   |          |      |      |      | •    |      | •   | •        | •   |    | 233        |

#### WASHINGTON IRVING

|  |     |     |    |   |   |   |    | PAGE |
|--|-----|-----|----|---|---|---|----|------|
| BIOGRAPHICAL NOTE                      |     |     |    |   |   |   |    | 267  |
| CRITICISMS AND INTERPRETATIONS:        |     |     |    |   |   |   |    |      |
| I. By George E. Woodberry              |     |     | •  | • |   |   |    | 27 I |
| II. By Leon H. Vincent                 |     |     |    |   |   |   |    | 273  |
| RIP VAN WINKLE, A POSTHUMOUS           |     |     |    |   |   |   | CH |      |
| Knickerbocker                          |     |     | ٠  | • | • | • | •  | 275  |
| Note and Postscript                    |     | •   | ٠  | ٠ | • | ٠ | •  | -    |
| THE LEGEND OF SLEEPY HOLLOW POSTSCRIPT | •   | •   | •  | • | • | • | •  | 293  |
| Postscript                             |     | •   | •  | • | • | • | •  | 324  |
| EDGAR ALLA                             | N P | ЭE  |    |   |   |   |    |      |
| BIOGRAPHICAL NOTE                      |     |     |    |   |   |   |    | 327  |
| Criticisms and Interpretations:        | •   | •   | •  | • | • | • | •  | 32/  |
| I. By Edmund C. Stedman .              |     |     |    |   |   | _ |    | 329  |
| II. By George E. Woodberry             | •   | •   | :  |   | : |   |    |      |
| III. By John Mackinnon Robei           |     |     |    |   |   |   |    |      |
| ELEONORA                               |     |     |    |   |   |   |    |      |
| THE FALL OF THE HOUSE OF USHER         |     |     |    |   |   |   |    |      |
| THE PURLOINED LETTER                   |     |     |    |   |   |   |    |      |
| THE TORDONAL BEITER                    |     |     |    | - | - |   |    |      |
| FRANCIS BRET                           | HΑ  | RTE | Ξ  |   |   |   |    |      |
|  |     |     | _  |   |   |   |    |      |
| BIOGRAPHICAL NOTE                      |     |     |    |   |   |   |    | 383  |
| CRITICISMS AND INTERPRETATIONS:        |     |     |    |   |   |   |    |      |
| I. By Parke Godwin                     |     |     |    |   |   | ٠ |    |      |
| II. By Henry Seidel Canby .            |     |     |    | • | • | • |    | 386  |
| THE LUCK OF ROARING CAMP               |     |     | •  | ٠ | • | ٠ | •  | 387  |
| THE OUTCASTS OF POKER FLAT             |     |     |    | • |   |   |    |      |
| THE IDYL OF RED GULCH                  | • • | -   | •  | • | • | • | •  | 411  |
| SAMUEL L. CL                           | EM  | ENS |    |   |   |   |    |      |
|  |     |     |    |   |   |   |    |      |
| BIOGRAPHICAL NOTE                      |     | •   | ٠  | • | • | • | •  | 423  |
| CRITICISMS AND INTERPRETATIONS:        |     |     |    |   |   |   |    |      |
| I. By T. EDGAR PEMBERTON               |     | •   |    |   |   |   |    |      |
| II. By Albert Bigelow Paini            |     |     |    | • |   | ٠ |    | 426  |
| III. By Archibald Henderson            |     |     | ٠  |   | • |   |    |      |
| JIM SMILY AND HIS JUMPING FROG         |     | •   | ٠  | • | • | ٠ | •  | 429  |
| EDWARD EVERE                           | TT  | HAI | LE |   |   |   |    |      |
| BIOGRAPHICAL NOTE                      |     |     |    |   |   |   |    | 439  |
| Criticism and Interpretation:          |     | •   | •  | • | • | • | •  | 737  |
| By Henry Seidel Caney                  |     |     |    |   |   |   |    | 441  |
|  |     |     |    |   |   |   |    | 443  |
|  | -   |     |    |   |   |   |    |      |

#### FICTION IN AMERICA

THEN Irving's "Sketch Book" appeared in 1819 the history of American fiction was a short and sorry chapter. While Puritanism held sway, prose fiction, like drama, was discredited as idle, if not actually wicked. With the period of the American Revolution this ban was indeed removed; but the claims of the state, except upon a few sentimentalists of inconsiderable genius, exerted a pressure which stifled the American novel until, between 1798 and 1804, Charles Brockden Brown adapted to American scenes the romance of terror-the so-called "Gothic Romance." Brown, though he is not improperly called "the father of the American novel," has deservedly failed to arouse general interest: his plots are badly constructed and nearly incredible, his characters pride themselves upon their morbid unusualness, and his scenes are only occasionally real. Such was the modest beginning.

All the more remarkable are the achievements of Irving, Cooper, and Poe between 1820 and 1840: they added to American literature the legendary narrative sketch, the historical novel, the novel of the sea, the novel of forest and

stream, and the short story.

Irving's love of legend and of humor, manifest in his delightful "Knickerbocker History of New York" (1809), reappeared in the "Sketch Book" (1819), notably in "Rip Van Winkle" and the "Legend of Sleepy Hollow." A delightfully pure and well-modulated style and a sure eye for the half-comic, half-romantic legends of his native locality make these chapters preeminent in what is probably the best example of their author's genius. They are, indeed, well-nigh perfect in their kind. If Irving had not the power to originate and sustain an elaborate human drama, he could at least—as these tales and the inimitable sketch of "The Stout Gentleman" in "Bracebridge Hall" sufficiently prove—set forth single figures, quaint and slightly legendary, with

ample background and a masterly display of comic

portraiture.

With Cooper the case is quite different: careless about style, deficient in humor, yet genuinely American and thoroughly acquainted with his scenes and people, Cooper has made in "The Pilot," "The Spy," "Red Rover," and especially in the five Leather Stocking novels, a really massive contribution to American fiction. The conventional ridicule of his noble Indians and his "females," his woodcraft, and his overanxiety to preach has not greatly diminished the high regard in which those who love large, clean, and vigorous work have agreed to hold the creator of Long Tom Coffin, Uncas, Chingachgook, and Leather Stocking.

While these stories were being written, the center of literary activity had shifted to New England, where by 1840 Emerson, Longfellow, Lowell, and the other great figures of the "New England Renaissance" had kindled American literature to a real blaze. Perhaps it was the ancient Puritanism of the region—Lowell said it was "all pulpit when I was growing up"—perhaps it was the academic strain in the Concord and Cambridge writers; but for some reason prose fiction plays a small part in this great chapter of our literature. Emerson, Lowell, Whittier, and Thoreau never attempted it; in the work of Longfellow it is inconsiderable; with Holmes it is more a means than an end. Hawthorne, however, gave it his almost undivided attention and in it achieved a lastingly important place.

The importance of Hawthorne's contribution to American fiction is indicated in Poe's well-known review (1842) of the "Twice-told Tales." Next to the short narrative in verse, says Poe, the most exacting form of literature is the short tale in prose. But it must be strictly organic: there must be a single preconceived effect, and toward that effect every detail must lead. With Hawthorne this singleness of purpose is probably not the result of an effort to meet an obligation imposed upon him by the technique of the short story, but a natural consequence of his preoccupation with a world of symbols and abstract ethical situations. Whoever will take the pains to compare Hawthorne's "Note Books" with his tales will soon perceive that the themes of Haw-

thorne's narratives as they first take shape in his mind are strictly unified.

This contribution to the technique of the American short story, though of great importance, was not unique; almost simultaneously with Hawthorne, Poe, with more attention to technique and a wider range of subject and of mood, was strengthening what has so far been our most distinctive American contribution to prose fiction. The detective story, the tale of horror, and the story of the grotesque were all executed by Poe with the same attention to form. Whatever one may think of his sense of probability and of his somewhat tricky use of devices for hypnotizing the reader, one cannot possibly deny the service of his stories—or the service of the criticism with which they were accompanied-to the upbuilding of an important school. It is singular, in view of the humor and the formlessness of so much early American writing, that both Poe and Hawthorne should have thus persistently combined masterly correctness with an almost obstinate preference for horror, mystery, and gloom.

In these two great founders of our fiction there is no marked localization: both are vivid—Poe brilliantly and Hawthorne quietly so—yet neither is much interested in studying any particular region. Their successors have, however, almost with one accord, studied the landscape, the dialect, and most of all the manner of life in various American localities.

Of these writers of American short stories distinguished for their careful employment of "local color," Bret Harte deserves special notice, because of the novelty of his material and the tremendous sensation which his California stories produced in the seventies. Since his day every section of the country has been more or less successfully, but always carefully, represented in the short story.

A consequence of the westward expansion of the United States was the emergence of Western writers, among whose aims was not merely the introduction of Western characters, but the use of what has become known as American humor, the marks of which seem to be exaggeration and irreverence. Preposterous falsehoods, told with a grave face and an

imperturbable hostility to established traditions, characterize this element in our fiction. Mark Twain's "Innocents Abroad," though not fiction, is one of the best examples of this tendency, which reappears in his "Connecticut Yankee at the Court of King Arthur" and in other works. No doubt the rebuke of the complacent New England attitude toward European fashions and reputations was, on the whole, a benefit in the formation of a national spirit in American literature.

Of equal benefit and of much more excellence as literary art has been the so-called "international novel" as it has been written by Howells, James, and others. Here the provincialism, ignorance, and bumptiousness of certain earlier writers, and of masses of their fellow countrymen, are satirized with great minuteness and with admirable reserve. The best examples of this school, though too subtle to have attained

great popularity, seem sure of a permanent place.

Akin to the international novel there should be noted a kind of story done with particular success by Howells, in which the characteristics of different regions in the United States are studiously contrasted. Howells delights to bring a family from the Middle West to New York and to work out in the minutest detail the contrast between the two regions. He does the same with the Marches, who go from New England to New York. In like manner, he brings Southerners and other types to unfamiliar regions, in order that his characters may study each other for the benefit of the reader.

In all this development the influence of the magazine has been apparent. Concentrated in the East, especially in New York, the magazine has of recent years been the most powerful of all literary vehicles. Naturally it has emphasized the short story as the literary form most suited to its purpose. Then, too, the short story seems to have prevailed in American literature because American writers have so frequently lacked the ability to originate and sustain large works of fiction. More powerful still has been the haste of modern American life and the consequent impatience at long books. For many reasons, therefore, it is natural that the short story should have been the kind of fiction

most frequently attempted in America. In the enormous mass of American fiction there is nothing particularly to our credit. But there is much cause for satisfaction in the wide prevalence of fairly correct technique and in the uniformity with which American writers have kept their work pure and chivalrous.

C. N. G.



## THE SCARLET LETTER RAPPACCINI'S DAUGHTER

BY
NATHANIEL HAWTHORNE



#### BIOGRAPHICAL NOTE

ATHANIEL HAWTHORNE was born at Salem, Massachusetts, on July 4, 1804, the descendant of a family that had settled in New England as early as 1630. Among his ancestors, who called themselves "Hawthorne," he numbered a persecutor of Quakers and another of witches; the more recent members of the family had been ship captains. His father died when the young Nathaniel was only four, and ten years later the family moved to the shores of Sebago Lake, in Maine. At fifteen the youth returned to Salem to prepare for college, and from 1821 till 1825 he attended Bowdoin College, where he made friends of two fellow students destined to become famous—Henry W. Longfellow and Franklin Pierce.

From his schooldays he had shown an inclination toward literature, and on leaving college he devoted himself to solitary walks, study, and writing. The beginnings of his reputation were made in "The Token," an annual to which many prominent writers were then contributing. But recognition came very slowly. His first book, "Twice-told Tales," was favorably reviewed by Longfellow in the "North American Review," but had a very modest success.

The prospect of making a living by his pen seeming very remote, he accepted a situation as weigher at the port of Boston, but lost it after two years, owing to a change of administration. In 1841 he joined the Utopian settlement at Brook Farm, and stood it for nearly a year. On leaving it, he married Sophia Peabody of Salem, and settled in the Old Manse at Concord, Mass., just beside the revolutionary battle field. He was now contributing to the "Democratic Review" and writing a set of children's stories called the "Grandfather's Chair." In 1846 another collection of his writings appeared under the title of "Mosses from an Old Manse," and among these was "Rappaccini's Daughter." The

Democrats having now returned to power, Hawthorne was appointed surveyor of the customhouse at Salem, an experience of which there remains an immortal record in the introduction to "The Scarlet Letter," published in 1850 after

another political change had lost him his position.

His next residence was at Lenox in the Berkshires, where he produced "The House of the Seven Gables" and "The Wonder-Book;" and at West Newton, near Boston, were written "The Blithedale Romance," in which he drew on his experiences at Brook Farm, and "The Snow Image and Other Twice-told Tales" (1852). He now bought an old house at Concord called "The Wayside" where he wrote a campaign biography of Franklin Pierce, when that old college friend was a candidate for the presidency. He received his reward in an appointment to the consulate at Liverpool, in which he spent five years, and during the remaining two years of his sojourn in Europe he produced "Transformation, or the Marble Faun."

On his return to America he again settled at "The Wayside," but except for the volume of his impressions of England, "Our Old Home," he wrote nothing more of note. He died on May 19, 1864, at Plymouth, N. H., and is buried in

Sleepy Hollow at Concord.

The fiction of Hawthorne is of an individual and rare distinction. He had a great curiosity as to exceptional and even morbid types of character; he loved to explore the more mysterious influences that play upon the human spirit; and he was especially devoted to the study of the workings of conscience. His most powerful work, "The Scarlet Letter." presents the classic picture of Puritan New England, but its fundamental truth to human nature and its profound analysis of emotion give it a value far beyond that of an interpretation of a bygone epoch. "Rappaccini's Daughter," which here represents his short stories, is a characteristic instance of his treatment of the weird and mysterious. Both stories exemplify a quality which, as much as his reading of character, have given him a place among the greater English novelists -his almost perfect style. No American writer and few English have attained such a mastery of prose. W. A. N.

#### CRITICISMS AND INTERPRETATIONS

I

#### BY HENRY JAMES

O speak of Hawthorne, as M. Emile Montégut does, as a romancier pessimiste, seems to me very much beside the mark. He is no more a pessimist than an optimist, though he is certainly not much of either. He does not pretend to conclude, or to have a philosophy of human nature; indeed, I should even say that at bottom he does not take human nature as hard as he may seem to do. bitterness," says M. Montégut, "is without abatement, and his bad opinion of man is without compensation... His little tales have the air of confessions which the soul makes to itself; they are so many little slaps which the author applies to our face." This, it seems to me, is to exaggerate almost immeasurably the reach of Hawthorne's relish of gloomy subjects. What pleased him in such subjects was their picturesqueness, their rich duskiness of colour, their chiaroscuro; but they were not the expression of a hopeless, or even of a predominantly melancholy, feeling about the human soul. Such at least is my own impression. He is to a considerable degree ironical—this is part of his charm part even, one may say, of his brightness; but he is neither bitter nor cynical-he is rarely even what I should call tragical. There have certainly been story-tellers of a gayer and lighter spirit; there have been observers more humorous more hilarious-though on the whole Hawthorne's observation has a smile in it oftener than may at first appear; but there has rarely been an observer more serene, less agitated by what he sees and less disposed to call things deeply into question. As I have already intimated, his "Note Books" are full of this simple and almost childlike serenity. That dusky preoccupation with the misery of human life and the wickedness of the human heart which such a critic as M. Emile Montégut talks about, is totally absent from them: and if we may suppose a person to have read these Diaries before looking into the tales, we may be sure that such a reader would be greatly surprised to hear the author described as a disappointed, disdainful genius. "This marked love of cases of conscience," says M. Montégut, "this taciturn, scornful cast of mind, this habit of seeing sin everywhere and hell always gaping open, this dusky gaze bent always upon a damned world and a nature draped in mourning, these lonely conversations of the imagination with the conscience. this pitiless analysis resulting from a perpetual examination of one's self, and from the tortures of a heart closed before men and open to God-all these elements of the Puritan character have passed into Mr. Hawthorne, or to speak more justly, have filtered into him, through a long succession of generations." This is a very pretty and very vivid account of Hawthorne, superficially considered; and it is just such a view of the case as would commend itself most easily and most naturally to a hasty critic. It is all true indeed, with a difference: Hawthorne was all that M. Montégut says, minus the conviction. The old Puritan moral sense, the consciousness of sin and hell, of the fearful nature of our responsibilities and the savage character of our Taskmaster -these things had been lodged in the mind of a man of fancy whose fancy had straightway begun to take liberties and play tricks with them-to judge them (Heaven forgive him!) from the poetic and aesthetic point of view, the point of view of entertainment and irony. This absence of conviction makes the difference; but the difference is great. -From "Nathaniel Hawthorne" (1870).

#### Π

#### By George E. Woodberry

T is noticeable that the clergyman, the physician, and the artist are the only specific types that attracted Hawthorne; he held them all romantically, and science he conceived as alchemy. This same predisposition appears in "Rappaccini's Daughter"; she was the experiment of her

father in creating a live poison-woman, a vitalized flower, the Dryad as it were of the poison-tree humanized in mortal shape: the physical object is here the flowering tree, with its heavy fragrance; and the plot lies only in the gradual transformation of the young man by continuous and unconscious inoculation until he is drawn into the circle of death to share the woman's isolation as a lover, both being shut off from their kind by the poison atmosphere that exhales from them: the catastrophe lies in the moral idea that for such poison there is no antidote but death, and the lady dies in drinking the draught that should free her. The fact that Hawthorne, when writing the story, said he did not know how it would end, is interesting as indicating that his literary habit was to let the story tell itself from within according to its impulses, and not to shape it from without by his own predetermined purpose; a pure allegorist, it may be observed. would have followed naturally the latter method. This may account for the indefiniteness and mystery of effect often felt, as well as for the inartistic didacticism in the concluding sentences, frequently to be observed, where it appears as one or more afterthoughts possibly to be drawn from the story, but not exhausting its moral significance. In this case, powerful as the tale is, the moral intention is left vague, though except as a parable the invention is meaningless. . . .

"The Scarlet Letter" is a great and unique romance, standing apart by itself in fiction; there is nothing else quite like it. Of all Hawthorne's works it is most identified with his genius in popular regard, and it has the peculiar power that is apt to invest the first work of an author in which his originality finds complete artistic expression. It is seldom that one can observe so plainly the different elements that are primary in a writer's endowment coalesce in the fully developed work of genius; yet in this romance there is nothing either in method or perception which is not to be found in the earlier tales; what distinguishes it is the union of art and intuition as they had grown up in Hawthorne's practice and had developed a power to penetrate more deeply into life. Obviously at the start there is the physical object in which his imagination habitually found its spring, the fantastically embroidered scarlet letter on a woman's bosom

which he had seen in the Puritan group described in "Endicott and the Red Cross." It had been in his mind for years, and his thoughts had centred on it and wandered out from it, tracking its mystery. It has in itself that decorative quality, which he sought in the physical object—the brilliant and rich effect, startling to the eye and yet more to the imagination as it blazes forth with a secret symbolism and almost intelligence of its own. It multiplies itself, as the tale unfolds, with greater intensity and mysterious significance and dread suggestion, as if in mirrors set round about it—in the slowly disclosed and fearful stigma on the minister's hidden heart over which he ever holds his hand, where it has become flesh of his flesh; in the growing elf-like figure of the child, who, with her eyes always fastened on the open shame of the letter on her mother's bosom or the hidden secret of the hand on her father's breast, has become herself the symbol, half revealed and half concealed, is dressed in it. as every reader remembers, and fantastically embodies it as if the thing had taken life in her; and, as if this were not enough, the scarlet letter, at a climax of the dark story, lightens forth over the whole heavens as a symbol of what cannot be hid even in the intensest blackness of night. The continual presence of the letter seems to have burnt into Hawthorne's own mind, till at the end of the narrative he says he would gladly erase its deep print from the brain where long meditation had fixed it. In no other work is the physical symbol so absorbingly present, so reduplicated, so much alive in itself. It is the brand of sin on life. Its concrete vividness leads the author also by a natural compulsion as well as an artistic instinct to display his story in that succession of high-wrought scenes, tableaux, in fact, which was his characteristic method of narrative, picturesque, pictorial, almost to be described as theatrical in spectacle. The background, also, as in the early tales, is of the slightest, no more than will suffice for the acting of the drama as a stage setting sympathetic with the central scene—a town. with a prison, a meeting-house, a pillory, a governor's house, other habitations on a street, a lonely cottage by the shore, the forest round about all; and for occasion and accessories, only a woman's sentence, the incidental death of Winthrop

unmarked in itself, a buccaneering ship in the harbor, Indians, Spanish sailors, rough matrons, clergy; this will serve, for such was Hawthorne's fine economy, knowing that this story was one in which every materialistic element must be used at its lowest tone. Though the scene lay in this world, it was but transitory scaffolding; the drama was one of the eternal life.—From "Nathaniel Hawthorne" (1902).

#### III

#### By ARTHUR SYMONS

LL Hawthorne's work is one form or another of "handling sin." He had the Puritan sense of it in the blood, and the power to use it artistically in the brain. With Tolstoi, he is the only novelist of the soul, and he is haunted by what is obscure, dangerous, and on the confines of good and evil; by what is abnormal, indeed, if we are to accept human nature as a thing set within responsible limits, and conscious of social relations. Of one of his women he says that she "was plucked up out of a mystery, and had its roots still clinging to her." It is what is mysterious, really, in the soul that attracts him, "When we find ourselves fading into shadows and unrealities": that is when he cares to concern himself with humanity. And, finding the soul, in its essence, so intangible, so mistlike, so unfamiliar with the earth, he lays hold of what to him is the one great reality, sin, in order that he may find out something definite about the soul, in its most active, its most interesting, manifestations.

To Hawthorne what we call real life was never very real, and he has given, as no other novelist has given, a picture of life as a dream, in which the dreamers themselves are, at intervals, conscious that they are dreaming. At a moment of spiritual crisis, as at that moment when Hester Prynne and Arthur Dimmesdale meet in the forest, he can render their mental state only through one of his ghostly images: "It was no wonder that they thus questioned one another's actual bodily existence, and even doubted of their own. So

strangely did they meet, in the dim wood, that it was like the first encounter, in the world beyond the grave, of two spirits, who had been intimately connected in their former life, but now stood coldly shuddering in mutual dread, as not wonted to this companionship of disembodied spirits." To Hawthorne, by a strange caprice or farsightedness of temperament, the supreme emotion comes only under the aspect of an illusion, for the first time recognized as being real, that is, really an illusion. "He himself, as was perceptible by many symptoms," he says of Clifford, "lay darkly behind his pleasure and knew it to be a baby-play, which he was to toy and trifle with, instead of thoroughly believing." To Clifford, it is mental ruin, a kind of exquisite imbecility, which brings this consciousness; to Hester Prynne, to Arthur Dimmesdale, to Donatello, to Miriam, it is sin. Each. through sin, becomes real, and perceives something of the

In this strange pilgrim's progress, the first step is a step outside the bounds of some moral or social law, by which the soul is isolated, for its own torture and benefit, from the rest of the world. All Hawthorne's stories are those of persons whom some crime, or misunderstood virtue, or misfortune, has set by themselves, or in a worse companionship of solitude. Hester Prynne "stood apart from moral interests, yet close beside them, like a ghost that revisits the familiar fireside, and can no longer make itself seen or felt." The link between Hester and Arthur Dimmesdale, between Miriam and Donatello, was "the iron link of mutual crime, which neither he nor she could break. Like all other sins, it brought along with it its obligations." Note how curious the obsession by which Hawthorne can express the force of the moral law, the soul's bond with itself, only through the consequences of the breaking of that law! And note, also, with how perfect a sympathy he can render the sensation itself, what is exultant, liberating, in a strong sin, not yet become one's companion and accuser. "For, guilt has its rapture, too. The foremost result of a broken law is ever an ecstatic sense of freedom."—From "Studies in Prose and Verse" (1904).

#### IV

#### By BLISS PERRY

HY did Hawthorne's imagination fasten upon subjects like these? It is not enough to say that he wrote under the influence of Puritanism. much has been made, by his critics, of such phrases as "Puritan gloom" and "the morbid New England conscience." It is true that Hawthorne inherited from Puritan ancestors a certain tenseness of fibre, a sensitiveness of conscience, a conviction of the reality of the moral life. It is also true that he was intensely interested in Puritanism as an historic phenomenon. It gave him the material he needed. How thoroughly he apprehended both the spirit and the outward form of life in early New England is evidenced by his "Legends of the Province House," "Goodman Brown," "The Gentle Boy," "The Minster's Black Veil." Yet neither his inheritance in Puritanism nor his profound study of it is enough to account satisfactorily for his choice of themes for his stories. Judged by his reading, by his friends and associations, by the spiritual emancipation which was already liberalizing New England when he began to write, he was Transcendentalist rather than Puritan. Puritan theology, as such, had no hold upon him personally; he was not even a church-goer. One can only say that he was drawn to moral problems by the natural gravitation of his own mind. just as Newman was inevitably attracted to theology, or Darwin to science. From the days of Job to the day of Ibsen and Maeterlinck there has been here and there a person able to find in the moral nature of man material for the creative imagination. Hawthorne was one of these persons; he was nurtured by Puritanism, but not created by it. . . .

And what a writer this provincial New Englander is! We talk glibly nowadays about painting and writing with one's eye on the object. Hawthorne could do this when he chose; but think of writing with your eye on the conscience of Arthur Dimmesdale and Hester Prynne, and never relaxing your gaze till the book is done! What concentration of

vision! What exposing power! Hawthorne's vocabulary is not extraordinarily large; -nothing like Balzac's or Meredith's; but the words are chosen like David's five smooth stones out of the brook. The sentences move in perfect poise. Their ease is perhaps a little self-conscious; - pains have been taken with their dressing,—it is not the careless inevitable grace of Thackeray,-but it is a finished grace of their own. It is a style exquisitely simple, except in those passages where Hawthorne's fancy gets the better of him, and leads him into forced humor, all the worse for its air of cultivated exuberance. Yet even when he sins against simplicity, he is always transparently clear. The certainty of word and phrase, the firmness of outline are marvelous. when we consider the airy nature of much of his material; he may be building cloud-castles, but it is in so pure a sky that the white battlements and towers stand out sharp-edged as marble.

Because Hawthorne gave his work such an elaborate finish, some readers are apt to forget its underlying strength. Our own day of naturalistic impressionism and correct historical costuming has invented a hundred sensational and clever ways of tearing a passion to tatters. But it is well for us to remember that the real strength of a work of fiction is in the conception underlying it, and that the deepest currents of thought and feeling are

#### Too full for sound and foam.

Strong-fibred, sane, self-controlled, as was Hawthorne, one may nevertheless detect in his style that melancholy vibration which marks the words of all—or almost all—those who have interpreted through literature the more mysterious aspects of life. This pathos is profound, though it is quiet; it is an undertone, but not the fundamental tone; "the gloom and terror may lie deep, but deeper still is this eternal beauty."

Yet the most marked quality of Hawthorne's style is neither simplicity, nor clearness, nor reserve of strength, nor undertone of pathos. It is rather its unbroken melody, its verbal richness. Its echoes linger in the ear; they wake old echoes in the brain. The touch of a few other men may be

as perfect, the notes they evoke more brilliant, certainly more gay; but Hawthorne's deep-toned instrument yields harmonies inimitable and unforgetable. The critics who talk of the colorless life of New England and its colorless reflection in literature had better open their Hawthorne once more. His pages are steeped in color. They have a dusky glory like the great window in Keats's "Eve of St. Agnes":

... diamonded with panes of quaint device
Innumerable of stains and splendid dyes,
As are the tiger-moth's deep-damask'd wings;
And in the midst, 'mong thousand heraldries,
And twilight saints, and dim emblazonings,
A shielded scutcheon blush'd with blood of queens and kings.

This subdued splendor of Hawthorne's coloring is a part of the very texture of his style; compared with it the brushwork of his successors seems thin and washy, or else crude and hard; it is like comparing a rug woven in Bokhara with one manufactured in Connecticut. But surely our New England soil is not wholly barren if even for once it has flowered into such a consummate artist as Nathaniel Hawthorne, who, while he devoted his art to the interpretation of truth, was nevertheless dowered with such instinct for beauty that his very words glow like gems and echo like music, and grant him a place among the few masters of English style.—From "The Centenary of Hawthorne," in "The Atlantic Monthly" (August, 1904).

#### v

#### By Andrew Lang

AINTE-BEUVE says somewhere that it is impossible to speak of "The German Classics." Perhaps he would not have allowed us to talk of the American classics. American literature is too nearly contemporary: Time has not tried it. But, if America possesses a classic author (and I am not denying that she may have several), that author is decidedly Hawthorne. His renown is unimpeached: his greatness is probably permanent, because he is at once such

an original and personal genius, and such a judicious and determined artist.

Hawthorne did not set himself to "compete with life." He did not make the effort—the proverbially tedious effort—to say everything. To his mind, fiction was not a mirror of commonplace persons, and he was not the analyst of the minutest among their ordinary emotions. Nor did he make a moral, or social, or political purpose the end and aim of his art. Moral as many of his pieces naturally are, we cannot call them didactic. He did not expect, nor intend, to better people by them. He drew the Rev. Arthur Dimmesdale without hoping that his Awful Example would persuade readers to "make a clean breast" of their iniquities and their secrets. It was the moral situation that interested him, not the edifying effect of his picture of that situation upon the minds of novel-readers.

He set himself to write Romance, with a definite idea of what Romance-writing should be; "to dream strange things, and make them look like truth." Nothing can be more remote from the modern system of reporting commonplace things, in the hope that they will read like truth. As all painters must do, according to good traditions, he selected a subject, and then placed it in a deliberately arranged light -not in the full glare of the noonday sun, and in the disturbances of wind, and weather, and cloud. Moonshine filling a familiar chamber, and making it unfamiliar, moonshine mixed with the "faint ruddiness on walls and ceiling" of fire, was the light, or a clear brown twilight was the light by which he chose to work. So he tells us in the preface to "The Scarlet Letter." The room could be filled with the ghosts of old dwellers in it; faint, yet distinct, all the life that had passed through it came back, and spoke with him, and inspired him. He kept his eyes on these figures, tangled in some rare knot of Fate, and of Desire: these he painted, not attending much to the bustle of existence that surrounded them, not permitting superfluous elements to mingle with them, and to distract him. . . .

Hawthorne's way was never too ruddily and robustly human. Perhaps, even in "The Scarlet Letter," we feel too distinctly that certain characters are moral conceptions, not

warmed and wakened out of the allegorical into the real. The persons in an allegory may be real enough, as Bunyan has proved by examples. But that culpable clergyman, Mr. Arthur Dimmesdale, with his large, white brow, his melancholy eyes, his hand on his heart, and his general resemblance to the High Church Curate in Thackeray's "Our Street," is he real? To me he seems very unworthy to be Hester's lover, for she is a beautiful woman of flesh and blood. Mr. Dimmesdale was not only immoral; he was unsportsmanlike. He had no more pluck than a church-mouse. His miserable passion was degraded by its brevity; how could he see this woman's disgrace for seven long years, and never pluck up heart either to share her shame or peccare fortiter? He is a lay figure, very cleverly, but somewhat conventionally made and painted. The vengeful husband of Hester, Roger Chillingworth, is a Mr. Casaubon stung into jealous anger. But his attitude, watching ever by Dimmesdale, tormenting him, and yet in his confidence, and ever unsuspected, reminds one of a conception dear to Dickens. He uses it in "David Copperfield," where Mr. Micawber (of all people!) plays this trick on Uriah Heep; he uses it in "Hunted Down"; he was about using it in "Edwin Drood"; he used it (old Martin and Pecksniff) in "Martin Chuzzlewit." The person of Roger Chillingworth and his conduct are a little too melodramatic for Hawthorne's genius.—From "Adventures Among Books" (1905).



#### LIST OF CHARACTERS

Hester Prynne.
Pearl, her child.
Roger Chillingworth, her husband.
Rev. Arthur Dimmesdale.
Governor Bellingham.
Rev. John Wilson.
Master Brackett, Jailer.
Mistress Hibbins, a witch, sister to Governor Bellingham.
A ship captain.
Citizens of Boston, sailors, Indians, etc.



#### THE CUSTOM-HOUSE

#### INTRODUCTORY TO "THE SCARLET LETTER"

T is a little remarkable, that—though disinclined to talk overmuch of myself and my affairs at the fireside, and - to my personal friends—an autobiographical impulse should twice in my life have taken possession of me, in addressing the public. The first time was three or four years since, when I favoured the reader—inexcusably, and for no earthly reason that either the indulgent reader or the intrusive author could imagine-with a description of my way of life in the deep quietude of an Old Manse. And now-because, beyond my deserts, I was happy enough to find a listener or two on the former occasion-I again seize the public by the button, and talk of my three years' experience in a Custom-House. The example of the famous "P.P., Clerk of this Parish," was never more faithfully followed. The truth seems to be, however, that when he casts his leaves forth upon the wind, the author addresses, not the many who will fling aside his volume, or never take it up, but the few who will understand him better than most of his schoolmates or lifemates. Some authors, indeed, do far more than this, and indulge themselves in such confidential depths of revelation as could fittingly be addressed only and exclusively to the one heart and mind of perfect sympathy; as if the printed book, thrown at large on the wide world, were certain to find out the divided segment of the writer's own nature, and complete his circle of existence by bringing him into communion with it. It is scarcely decorous, however, to speak at all, even where we speak impersonally. But, as thoughts are frozen and utterance benumbed, unless the speaker stand in some true relation with his audience, it may be pardonable to imagine that a friend, a kind and apprehensive, though not the closest friend, is listening to our talk; and then, a native reserve being thawed by this genial consciousness, we may prate of the circumstances that lie around us, and even of ourself, but still keep the inmost Me behind its veil. To this extent, and within these limits, an author, methinks, may be autobiographical, without violating either the reader's rights or his own.

It will be seen, likewise, that this Custom-House sketch has a certain propriety, of a kind always recognised in literature, as explaining how a large portion of the following pages came into my possession, and as offering proofs of the authenticity of a narrative therein contained. This, in fact—a desire to put myself in my true position as editor, or very little more, of the most prolix among the tales that make up my volume—this, and no other, is my true reason for assuming a personal relation with the public. In accomplishing the main purpose, it has appeared allowable, by a few extra touches, to give a faint representation of a mode of life not heretofore described, together with some of the characters that move in it, among whom the author happened to make one.

In my native town of Salem, at the head of what, half a century ago, in the days of old King Derby, was a bustling wharf-but which is now burdened with decayed wooden warehouses, and exhibits few or no symptoms of commercial life: except, perhaps, a bark or brig, half-way down its melancholy length, discharging hides; or, nearer at hand, a Nova Scotia schooner, pitching out her cargo of firewood at the head, I say, of this dilapidated wharf, which the tide often overflows, and along which, at the base and in the rear of the row of buildings, the track of many languid years is seen in a border of unthrifty grass-here, with a view from its front windows adown this not very enlivening prospect, and thence across the harbour, stands a spacious edifice of brick. From the loftiest point of its roof, during precisely three and a half hours of each forenoon, floats or droops, in breeze or calm, the banner of the republic; but with the thirteen stripes turned vertically, instead of horizontally, and thus indicating that a civil, and not a military, post of Uncle Sam's government is here established. Its front is ornamented with a portico of half-a-dozen wooden pillars, sup-

porting a balcony, beneath which a flight of wide granite steps descends towards the street. Over the entrance hovers an enormous specimen of the American eagle, with outspread wings, a shield before her breast, and, if I recollect aright, a bunch of intermingled thunderbolts and barbed arrows in each claw. With the customary infirmity of temper that charactizes this unhappy fowl, she appears by the fierceness of her beak and eye, and the general truculency of her attitude, to threaten mischief to the inoffensive community; and especially to warn all citizens careful of their safety against intruding on the premises which she overshadows with her wings. Nevertheless, vixenly as she looks, many people are seeking at this very moment to shelter themselves under the wing of the federal eagle; imagining, I presume, that her bosom has all the softness and snugness of an eiderdown pillow. But she has no great tenderness even in her best of moods, and, sooner or later-oftener soon than late—is apt to fling off her nestlings with a scratch of her claw, a dab of her beak, or a rankling wound from her barbed arrows.

The payement round about the above-described edifice which we may as well name at once as the Custom-House of the port-has grass enough growing in its chinks to show that it has not, of late days, been worn by any multitudinous resort of business. In some months of the year, however, there often chances a forenoon when affairs move onward with a livelier tread. Such occasions might remind the elderly citizen of that period, before the last war with England, when Salem was a port by itself; not scorned, as she is now, by her own merchants and ship-owners, who permit her wharves to crumble to ruin while their ventures go to swell, needlessly and imperceptibly, the mighty flood of commerce at New York or Boston. On some such morning, when three or four vessels happen to have arrived at onceusually from Africa or South America-or to be on the verge of their departure thitherward, there is a sound of frequent feet passing briskly up and down the granite steps. Here, before his own wife has greeted him, you may greet the sea-flushed ship-master, just in port, with his vessel's paper's under his arm in a tarnished tin box. Here, too. comes his owner, cheerful, sombre, gracious or in the sulks, accordingly as his scheme of the now accomplished voyage has been realized in merchandise that will readily be turned to gold, or has buried him under a bulk of incommodities such as nobody will care to rid him of. Here, likewise-the germ of the wrinkle-browed, grizzly-bearded careworn merchant -we have the smart young clerk, who gets the taste of traffic as a wolf-cub does of blood, and already sends adventures in his master's ships, when he had better be sailing mimic boats upon a mill-pond. Another figure in the scene is the outward-bound sailor, in quest of a protection; or the recently arrived one, pale and feeble, seeking a passport to the hospital. Nor must we forget the captains of the rusty little schooners that bring firewood from the British provinces: a rough-looking set of tarpaulins, without the alertness of the Yankee aspect, but contributing an item of no slight importance to our decaying trade.

Cluster all these individuals together, as they sometimes were, with other miscellaneous ones to diversify the group. and, for the time being, it made the Custom-House a stirring More frequently, however, on ascending the steps, you would discern-in the entry if it were summer time, or in their appropriate rooms if wintry or inclement weather -a row of venerable figures, sitting in old-fashioned chairs, which were tipped on their hind legs back against the wall. Oftentimes they were asleen, but occasionally might be heard talking together, in voices between a speech and a snore, and with that lack of energy that distinguishes the occupants of alms-houses, and all other human beings who depend for subsistence on charity, on monopolized labour, or anything else but their own independent exertions. These old gentlemen-seated, like Matthew at the receipt of custom, but not very liable to be summoned thence, like him, for apostolic errands-were Custom-House officers.

Furthermore, on the left hand as you enter the front door, is a certain room or office about fifteen feet square, and of a lofty height, with two of its arched windows commanding a view of the aforesaid dilapidated wharf, and the third looking across a narrow lane, and along a portion of Derby Street. All three give glimpses of the shops of grocers,

block-makers, slop-sellers, and ship-chandlers, around the doors of which are generally to be seen, laughing and gossiping, clusters of old salts, and such other wharf-rats as haunt the Wapping of a seaport. The room itself is cobwebbed, and dingy with old paint; its floor is strewn with grey sand, in a fashion that has elsewhere fallen into long disuse; and it is easy to conclude, from the general slovenliness of the place, that this is a sanctuary into which womankind, with her tools of magic, the broom and mop, has very infrequent access. In the way of furniture, there is a stove with a voluminous funnel; an old pine desk with a three-legged stool beside it; two or three wooden-bottom chairs, exceedingly decrepit and infirm; and—not to forget the library—on some shelves, a score or two of volumes of the Acts of Congress, and a bulky Digest of the Revenue Laws. A tin pipe ascends through the ceiling, and forms a medium of vocal communication with other parts of the edifice. And here, some six months ago—pacing from corner to corner, or lounging on the long-legged stool, with his elbow on the desk, and his eyes wandering up and down the columns of the morning newspaper—you might have recognised, hon-oured reader, the same individual who welcomed you into his cheery little study, where the sunshine glimmered so pleasantly through the willow branches on the western side of the Old Manse. But now, should you go thither to seek him, you would inquire in vain for the Locofoco Surveyor. The besom of reform hath swept him out of office, and a worthier successor wears his dignity and pockets his emoluments.

This old town of Salem—my native place, though I have dwelt much away from it both in boyhood and maturer years—possesses, or did possess, a hold on my affection, the force of which I have never realized during my seasons of actual residence here. Indeed, so far as its physical aspect is concerned, with its flat, unvaried surface, covered chiefly with wooden houses, few or none of which pretend to architectural beauty—its irregularity, which is neither picturesque nor quaint, but only tame—its long and lazy street, lounging wearisomely through the whole extent of the peninsula, with Gallows Hill and New Guinea at one end, and a view of the

alms-house at the other-such being the features of my native town, it would be quite as reasonable to form a sentimental attachment to a disarranged checker-board. And vet. though invariably happiest elsewhere, there is within me a feeling for Old Salem, which, in lack of a better phrase, I must be content to call affection. The sentiment is probably assignable to the deep and aged roots which my family has stuck into the soil. It is now nearly two centuries and a quarter since the original Briton, the earliest emigrant of my name, made his appearance in the wild and forest-bordered settlement which has since become a city. And here his descendants have been born and died, and have mingled their earthly substance with the soil, until no small portion of it must necessarily be akin to the mortal frame wherewith, for a little while, I walk the streets. In part, therefore, the attachment which I speak of is the mere sensuous sympathy of dust for dust. Few of my countrymen can know what it is; nor, as frequent transplantation is perhaps better for the stock, need they consider it desirable to know.

But the sentiment has likewise its moral quality. The figure of that first ancestor, invested by family tradition with a dim and dusky grandeur, was present to my boyish imagination as far back as I can remember. It still haunts me, and induces a sort of home-feeling with the past, which I scarcely claim in reference to the present phase of the

town.

I seem to have a stronger claim to a residence here on account of this grave, bearded, sable-cloaked, and steeple-crowned progenitor—who came so early, with his Bible and his sword, and trode the unworn street with such a stately port, and made so large a figure, as a man of war and peace—a stronger claim than for myself, whose name is seldom heard and my face hardly known. He was a soldier, legislator, judge; he was a ruler in the Church; he had all the Puritanic traits, both good and evil. He was likewise a bitter persecutor; as witness the Quakers, who have remembered him in their histories, and relate an incident of his hard severity towards a woman of their sect, which will last longer, it is to be feared, than any record of his better deeds, although these were many. His son, too, inherited the

persecuting spirit, and made himself so conspicuous in the martyrdom of the witches, that their blood may fairly be said to have left a stain upon him. So deep a stain, indeed, that his dry old bones, in the Charter-street burial-ground, must still retain it, if they have not crumbled utterly to dust! I know not whether these ancestors of mine bethought themselves to repent, and ask pardon of Heaven for their cruelties; or whether they are now groaning under the heavy consequences of them in another state of being. At all events, I, the present writer, as their representative, hereby take shame upon myself for their sakes, and pray that any curse incurred by them—as I have heard, and as the dreary and unprosperous condition of the race, for many a long year back, would argue to exist—may be now and henceforth removed.

Doubtless, however, either of these stern and black-browed Puritans would have thought it quite a sufficient retribution for his sins that, after so long a lapse of years, the old trunk of the family tree, with so much venerable moss upon it, should have borne, as its topmost bough, an idler like myself. No aim that I have ever cherished would they recognise as laudable; no success of mine-if my life, beyond its domestic scope, had ever been brightened by success-would they deem otherwise than worthless, if not positively disgraceful. "What is he?" murmurs one grey shadow of my forefathers to the other. "A writer of story books! What kind of business in life-what mode of glorifying God, or being serviceable to mankind in his day and generation—may that be? Why, the degenerate fellow might as well have been a fiddler!" Such are the compliments bandied between my great grandsires and myself, across the gulf of time! And yet, let them scorn me as they will, strong traits of their nature have intertwined themselves with mine.

Planted deep, in the town's earliest infancy and childhood, by these two earnest and energetic men, the race has ever since subsisted here; always, too, in respectability; never, so far as I have known, disgraced by a single unworthy member; but seldom or never, on the other hand, after the first two generations, performing any memorable deed, or so much as putting forward a claim to public notice. Gradually I—2

they have sunk almost out of sight; as old houses, here and there about the streets, get covered half-way to the eaves by the accumulation of new soil. From father to son, for above a hundred years, they followed the sea; a grey-headed shipmaster, in each generation, retiring from the quarter-deck to the homestead, while a boy of fourteen took the hereditary place before the mast, confronting the salt spray and the gale which had blustered against his sire and grandsire. boy, also in due time, passed from the forecastle to the cabin, spent a tempestuous manhood, and returned from his worldwanderings, to grow old, and die, and mingle his dust with the natal earth. This long connexion of a family with one spot, as its place of birth and burial, creates a kindred between the human being and the locality, quite independent of any charm in the scenery or moral circumstances that surround him. It is not love but instinct. The new inhabitant -who came himself from a foreign land, or whose father or grandfather came—has little claim to be called a Salemite; he has no conception of the ovster-like tenacity with which an old settler, over whom his third century is creeping, clings to the spot where his successive generations have been embedded. It is no matter that the place is joyless for him: that he is weary of the old wooden houses, the mud and dust, the dead level of site and sentiment, the chill east wind, and chillest of social atmospheres: - all these, and whatever faults besides he may see or imagine, are nothing to the purpose. The spell survives, and just as powerfully as if the natal spot were an earthly paradise. So has it been in my case. I felt it almost as a destiny to make Salem my home; so that the mould of features and cast of character which had all along been familiar here—ever, as one representative of the race lay down in the grave, another assuming, as it were, his sentry-march along the main streetmight still in my little day be seen and recognised in the old town. Nevertheless, this very sentiment is an evidence that the connexion, which has become an unhealthy one, should at least be severed. Human nature will not flourish, any more than a potato, if it be planted and re-planted, for too long a series of generations, in the same worn-out soil. My children have had other birth-places, and, so far as their

tortunes may be within my control, shall strike their roots into unaccustomed earth.

On emerging from the Old Manse, it was chiefly this strange, indolent, unjoyous attachment for my native town that brought me to fill a place in Uncle Sam's brick edifice, when I might as well, or better, have gone somewhere else. My doom was on me. It was not the first time, nor the second, that I had gone away—as it seemed, permanently—but yet returned, like the bad halfpenny, or as if Salem were for me the inevitable centre of the universe. So, one fine morning I ascended the flight of granite steps, with the President's commission in my pocket, and was introduced to the corps of gentlemen who were to aid me in my weighty responsibility as chief executive officer of the Custom-House.

I doubt greatly-or, rather, I do not doubt at all-whether any public functionary of the United States, either in the civil or military line, has ever had such a patriarchal body of veterans under his orders as myself. The whereabouts of the Oldest Inhabitant was at once settled when I looked at them. For upwards of twenty years before this epoch, the independent position of the Collector had kept the Salem Custom-House out of the whirlpool of political vicissitude. which makes the tenure of office generally so fragile. soldier-New England's most distinguished soldier-he stood firmly on the pedestal of his gallant services; and, himself secure in the wise liberality of the successive administrations through which he had held office, he had been the safety of his subordinates in many an hour of danger and heart-quake. General Miller was radically conservative: a man over whose kindly nature habit had no slight influence; attaching himself strongly to familiar faces, and with difficulty moved to change, even when change might have brought unquestionable improvement. Thus, on taking charge of my department, I found few but aged men. They were ancient seacaptains, for the most part, who, after being tossed on every sea, and standing up sturdily against life's tempestuous blast, had finally drifted into this quiet nook, where, with little to disturb them, except the periodical terrors of a Presidential election, they one and all acquired a new lease of existence. Though by no means less liable than their fellowmen to age and infirmity, they had evidently some talisman or other that kept death at bay. Two or three of their number, as I was assured, being gouty and rheumatic, or perhaps bed-ridden, never dreamed of making their appearance at the Custom-House during a large part of the year; but, after a torpid winter, would creep out into the warm sunshine of May or June, go lazily about what they termed duty, and, at their own leisure and convenience, betake themselves to bed again. I must plead guilty to the charge of abbreviating the official breath of more than one of these venerable servants of the republic. They were allowed, on my representation, to rest from their arduous labours, and soon afterwards-as if their sole principle of life had been zeal for their country's service—as I verily believe it was—withdrew to a better world. It is a pious consolation to me that, through my interference, a sufficient space was allowed them for repentance of the evil and corrupt practices into which, as a matter of course, every Custom-House officer must be supposed to fall. Neither the front nor the back entrance of the Custom-House opens on the road to Paradise.

The greater part of my officers were Whigs. It was well for their venerable brotherhood that the new Surveyor was not a politician, and though a faithful Democrat in principle. neither received nor held his office with any reference to political services. Had it been otherwise—had an active politician been put into this influential post, to assume the easy task of making head against a Whig Collector, whose infirmities withheld him from the personal administration of his office-hardly a man of the old corps would have drawn the breath of official life within a month after the exterminating angel had come up the Custom-House steps. According to the received code in such matters, it would have been nothing short of duty, in a politician, to bring every one of those white heads under the axe of the guillotine. It was plain enough to discern that the old fellows dreaded some such discourtesy at my hands. pained, and at the same time amused me, to behold the terrors that attended my advent, to see a furrowed cheek, weather-beaten by half a century of storm, turn ashy pale at the glance of so harmless an individual as myself; to detect, as one or another addressed me, the tremor of a voice which, in long-past days, had been wont to bellow through a speaking-trumpet, hoarsely enough to frighten Boreas himself to silence. They knew, these excellent old persons, that, by all established rule—and, as regarded some of them, weighed by their own lack of efficiency for business—they ought to have given place to younger men, more orthodox in politics, and altogether fitter than themselves to serve our common Uncle. I knew it, too, but could never quite find in my heart to act upon the knowledge. Much and deservedly to my own discredit, therefore, and considerably to the detriment of my official conscience, they continued. during my incumbency, to creep about the wharves, and loiter up and down the Custom-House steps. They spent a good deal of time, also, asleep in their accustomed corners, with their chairs, tilted back against the walls; awaking, however, once or twice in the forenoon, to bore one another with the several thousandth repetition of old sea-stories and mouldy jokes, that had grown to be passwords and countersigns among them.

The discovery was soon made, I imagine, that the new Surveyor had no great harm in him. So, with lightsome hearts and the happy consciousness of being usefully employed—in their own behalf, at least, if not for our beloved country-these good old gentlemen went through the various formalities of office. Sagaciously, under their spectacles, did they peep into the holds of vessels! Mighty was their fuss about little matters, and marvellous, sometimes, the obtuseness that allowed greater ones to slip between their fingers! Whenever such a mischance occurred—when a waggon-load of valuable merchandise had been smuggled ashore, at noonday, perhaps, and directly beneath their unsuspicious nosesnothing could exceed the vigilance and alacrity with which they proceeded to lock, and double-lock, and secure with tape and sealing-wax, all the avenues of the delinquent vessel. Instead of a reprimand for their previous negligence, the case seemed rather to require an eulogium on their praiseworthy caution after the mischief had happened; a grateful recognition of the promptitude of their zeal the moment that there was no longer any remedy.

Unless people are more than commonly disagreeable, it is my foolish habit to contract a kindness for them. The better part of my companion's character, if it have a better part, is that which usually comes uppermost in my regard, and forms the type whereby I recognise the man. As most of these old Custom-House officers had good traits, and as my position in reference to them, being paternal and protective, was favourable to the growth of friendly sentiments, I soon grew to like them all. It was pleasant in the summer forenoons-when the fervent heat, that almost liquefied the rest of the human family, merely communicated a genial warmth to their half torpid systems—it was pleasant to hear them chatting in the back entry, a row of them all tipped against the wall, as usual; while the frozen witticisms of past generations were thawed out, and came bubbling with laughter from their lips. Externally, the jollity of aged men has much in common with the mirth of children; the intellect, any more than a deep sense of humour, has little to do with the matter: it is, with both, a gleam that plays upon the surface, and imparts a sunny and cheery aspect alike to the green branch and grey, mouldering trunk. In one case, however, it is real sunshine; in the other, it more resembles the phosphorescent glow of decaying wood.

It would be sad injustice, the reader must understand, to represent all my excellent old friends as in their dotage. the first place, my coadjutors were not invariably old; there were men among them in their strength and prime, of marked ability and energy, and altogether superior to the sluggish and dependent mode of life on which their evil stars had cast them. Then, moreover, the white locks of age were sometimes found to be the thatch of an intellectual tenement in good repair. But, as respects the majority of my corps of veterans, there will be no wrong done if I characterize them generally as a set of wearisome old souls, who had gathered nothing worth preservation from their varied experience of life. They seemed to have flung away all the golden grain of practical wisdom, which they had enjoyed so many opportunities of harvesting, and most carefully to have stored their memory with the husks. They spoke with far more interest and unction of their morning's breakfast, or yesterday's, to-day's, or to-morrow's dinner, than of the ship-wreck of forty or fifty years ago, and all the world's wonders which they had witnessed with their youthful eyes.

The father of the Custom-House—the patriarch, not only of this little squad of officials, but, I am bold to say, of the respectable body of tide-waiters all over the United Stateswas a certain permanent Inspector. He might truly be termed a legitimate son of the revenue system, dyed in the wool, or rather born in the purple; since his sire, a Revolutionary colonel, and formerly collector of the port, had created an office for him, and appointed him to fill it, at a period of the early ages which few living men can now remember. This Inspector, when I first knew him, was a man of fourscore years, or thereabouts, and certainly one of the most wonderful specimens of winter-green that you would be likely to discover in a lifetime's search. With his florid cheek, his compact figure smartly arrayed in a bright-buttoned blue coat, his brisk and vigorous step, and his hale and hearty aspect, altogether he seemed-not young, indeedbut a kind of new contrivance of Mother Nature in the shape of man, whom age and infirmity had no business to touch. His voice and laugh, which perpetually re-echoed through the Custom-House, had nothing of the tremulous quaver and cackle of an old man's utterance; they came strutting out of his lungs, like the crow of a cock, or the blast of a clarion. Looking at him merely as an animal—and there was very little else to look at—he was a most satisfactory object, from the thorough healthfulness and wholesomeness of his system, and his capacity, at that extreme age, to enjoy all, or nearly all, the delights which he had ever aimed at or conceived of. The careless security of his life in the Custom-House, on a regular income, and with but slight and infrequent apprehensions of removal, had no doubt contributed to make time pass lightly over him. The original and more potent causes, however, lay in the rare perfection of his animal nature, the moderate proportion of intellect, and the very trifling admixture of moral and spiritual ingredients; these latter qualities, indeed, being in barely enough measure to keep the old gentleman from walking on all-fours. He possessed no power of thought, no depth of feeling, no

troublesome sensibilities: nothing, in short, but a few commonplace instincts, which, aided by the cheerful temper which grew inevitably out of his physical well-being, did duty very respectably, and to general acceptance, in lieu of a heart. He had been the husband of three wives, all long since dead; the father of twenty children, most of whom, at every age of childhood or maturity, had likewise returned to dust. Here, one would suppose, might have been sorrow enough to imbue the sunniest disposition through and through with a sable tinge. Not so with our old Inspector! One brief sigh sufficed to carry off the entire burden of these dismal reminiscences. The next moment he was as ready for sport as any unbreeched infant: far readier than the Collector's junior clerk, who at nineteen years was much the elder and graver man of the two.

I used to watch and study this patriarchal personage with. I think, livelier curiosity than any other form of humanity there presented to my notice. He was, in truth, a rare phenomenon; so perfect, in one point of view; so shallow, so delusive, so impalpable such an absolute nonentity, in every other. My conclusion was that he had no soul, no heart, no mind; nothing, as I have already said, but instincts; and yet, withal, so cunningly had the few materials of his character been put together, that there was no painful perception of deficiency, but, on my part, an entire contentment with what I found in him. It might be difficult-and it was so-to conceive how he should exist hereafter, so earthly and sensuous did he seem; but surely his existence here, admitting that it was to terminate with his last breath had been not unkindly given; with no higher moral responsibilities than the beasts of the field, but with a larger scope of enjoyment than theirs, and with all their blessed immunity from the dreariness and duskiness of age.

One point in which he had vastly the advantage over his four-footed brethren was his ability to recollect the good dinners which it had made no small portion of the happiness of his life to eat. His gourmandism was a highly agreeable trait; and to hear him talk of roast meat was as appetizing as a pickle or an oyster. As he possessed no higher attribute, and neither sacrificed nor vitiated any spiritual endow-

ment by devoting all his energies and ingenuities to subserve the delight and profit of his maw, it always pleased and satisfied me to hear him expatiate on fish, poultry, and butcher's meat, and the most eligible methods of preparing them for the table. His reminiscences of good cheer, however ancient the date of the actual banquet, seemed to bring the savour of pig or turkey under one's very nostrils. There were flavours on his palate that had lingered there not less than sixty or seventy years, and were still apparently as fresh as that of the mutton chop which he had just devoured for his breakfast. I have heard him smack his lips over dinners, every guest at which, except himself, had long been food for worms. It was marvellous to observe how the ghosts of bygone meals were continually rising up before him—not in anger or retribution, but as if grateful for his former appreciation, and seeking to repudiate an endless series of enjoyment, at once shadowy and sensual. A tender loin of beef, a hind-quarter of yeal, a spare-rib of pork, a particular chicken, or a remarkably praiseworthy turkey, which had perhaps adorned his board in the days of the elder Adams, would be remembered; while all the subsequent experience of our race, and all the events that brightened or darkened his individual career, had gone over him with as little permanent effect as the passing breeze. The chief tragic event of the old man's life, so far as I could judge, was his mishap with a certain goose, which lived and died some twenty or forty years ago: a goose of most promising figure, but which, at table, proved so inveterately tough, that the carving-knife would make no impression on its carcase, and it could only be divided with an axe and handsaw.

But it is time to quit this sketch; on which, however, I should be glad to dwell at considerably more length, because of all men whom I have ever known, this individual was fittest to be a Custom-House officer. Most persons, owing to causes which I may not have space to hint at, suffer moral detriment from this peculiar mode of life. The old Inspector was incapable of it; and, were he to continue in office to the end of time, would be just as good as he was then, and sit down to dinner with just as good an appetite.

There is one likeness, without which my gallery of Custom-House portraits would be strangely incomplete, but which my comparatively few opportunities for observation enable me to sketch only in the merest outline. It is that of the Collector, our gallant old General, who, after his brilliant military service, subsequently to which he had ruled over a wild Western territory, had come hither, twenty years before, to spend the decline of his varied and honourable life. The brave soldier had already numbered, nearly or quite, his three-score years and ten, and was pursuing the remainder of his earthly march, burdened with infirmities which even the martial music of his own spirit-stirring recollections could do little towards lightening. The step was palsied now, that had been foremost in the charge. It was only with the assistance of a servant, and by leaning his hand heavily on the iron balustrade, that he could slowly and painfully ascend the Custom-House steps, and, with a toilsome progress across the floor, attain his customary chair beside the fireplace. There he used to sit, gazing with a somewhat dim serenity of aspect at the figures that came and went, amid the rustle of papers, the administering of oaths, the discussion of business, and the casual talk of the office; all which sounds and circumstances seemed but indistinctly to impress his senses, and hardly to make their way into his inner sphere of contemplation. His countenance, in this repose, was mild and kindly. If his notice was sought, an expression of courtesy and interest gleamed out upon his features, proving that there was light within him, and that it was only the outward medium of the intellectual lamp that obstructed the rays in their passage. The closer you penetrated to the substance of his mind, the sounder it appeared. When no longer called upon to speak or listen-either of which operations cost him an evident effort-his face would briefly subside into its former not uncheerful quietude. It was not painful to behold this look; for, though dim, it had not the imbecility of decaying age. The framework of his nature, originally strong and massive, was not yet crumpled into ruin.

To observe and define his character, however, under such disadvantages, was as difficult a task as to trace out and

build up anew, in imagination, an old fortress, like Ticonderoga, from a view of its grey and broken ruins. Here and there, perchance, the walls may remain almost complete; but elsewhere may be only a shapeless mound, cumbrous with its very strength, and overgrown, through long years of peace and neglect, with grass and alien weeds.

Nevertheless, looking at the old warrior with affectionfor, slight as was the communication between us, my feeling towards him, like that of all bipeds and quadrupeds who knew him, might not improperly be termed so,-I could discern the main points of his portrait. It was marked with the noble and heroic qualities which showed it to be not a mere accident, but of good right, that he had won a distinguished name. His spirit could never, I conceive, have been characterized by an uneasy activity; it must, at any period of his life, have required an impulse to set him in motion; but once stirred up, with obstacles to overcome, and an adequate object to be attained, it was not in the man to give out or fail. The heat that had formerly pervaded his nature, and which was not yet extinct, was never of the kind that flashes and flickers in a blaze; but rather a deep red glow, as of iron in a furnace. Weight, solidity, firmnessthis was the expression of his repose, even in such decay as had crept untimely over him at the period of which I speak. But I could imagine, even then, that, under some excitement which should go deeply into his consciousness-roused by a trumpet-peal, loud enough to awaken all of his energies that were not dead, but only slumbering-he was yet capable of flinging off his infirmities like a sick man's gown, dropping the staff of age to seize a battle-sword, and starting up once more a warrior. And, in so intense a moment his demeanour would have still been calm. Such an exhibition, however, was but to be pictured in fancy; not to be anticipated, nor desired. What I saw in him—as evidently as the indestructible ramparts of Old Ticonderoga, already cited as the most appropriate simile—was the features of stubborn and ponderous endurance, which might well have amounted to obstinacy in his earlier days; of integrity, that, like most of his other endowments, lay in a somewhat heavy mass, and was just as unmalleable or unmanageable as a ton of

iron ore; and of benevolence which, fiercely as he led the bayonets on at Chippewa or Fort Erie, I take to be of quite as genuine a stamp as what actuates any or all the polemical philanthropists of the age. He had slain men with his own hand, for aught I know—certainly, they had fallen like blades of grass at the sweep of the scythe before the charge to which his spirit imparted its triumphant energy—but, be that as it might, there was never in his heart so much cruelty as would have brushed the down off a butterfly's wing. I have not known the man to whose innate kindliness I would more confidently make an appeal.

Many characteristics-and those, too, which contribute not the least forcibly to impart resemblance in a sketch-must have vanished, or been obscured, before I met the General. All merely graceful attributes are usually the most evanescent: nor does nature adorn the human ruin with blossoms of new beauty, that have their roots and proper nutriment only in the chinks and crevices of decay, as she sows wallflowers over the ruined fortress of Ticonderoga. Still, even in respect of grace and beauty, there were points well worth noting. A ray of humour, now and then, would make its way through the veil of dim obstruction, and glimmer pleasantly upon our faces. A trait of native elegance, seldom seen in the masculine character after childhood or early youth, was shown in the General's fondness for the sight and fragrance of flowers. An old soldier might be supposed to prize only the bloody laurel on his brow; but here was one who seemed to have a young girl's appreciation of the floral tribe.

There, beside the fireplace, the brave old General used to sit; while the Surveyor—though seldom, when it could be avoided, taking upon himself the difficult task of engaging him in conversation—was fond of standing at a distance, and watching his quiet and almost slumberous countenance. He seemed away from us, although we saw him but a few yards off; remote, though we passed close beside his chair; unattainable, though we might have stretched forth our hands and touched his own. It might be that he lived a more real life within his thoughts than amid the unappropriate environment of the Collector's office. The evolutions of the

parade; the tumult of the battle; the flourish of old heroic music, heard thirty years before—such scenes and sounds, perhaps, were all alive before his intellectual sense. Meanwhile, the merchants and ship-masters, the spruce clerks and uncouth sailors, entered and departed; the bustle of this commercial and Custom-House life kept up its little murmur round about him; and neither with the men nor their affairs did the General appear to sustain the most distant relation. He was as much out of place as an old sword—now rusty, but which had flashed once in the battle's front, and showed still a bright gleam along its blade—would have been among the inkstands, paper-folders, and mahogany rulers on the Deputy Collector's desk.

There was one thing that much aided me in renewing and re-creating the stalwart soldier of the Niagara frontier—the man of true and simple energy. It was the recollection of those memorable words of his—"I'll try, Sir!"—spoken on the very verge of a desperate and heroic enterprise, and breathing the soul and spirit of New England hardihood, comprehending all perils, and encountering all. If, in our country, valour were rewarded by heraldic honour, this phrase—which it seems so easy to speak, but which only he, with such a task of danger and glory before him, has ever spoken—would be the best and fittest of all mottoes for the General's shield of arms.

It contributes greatly towards a man's moral and intellectual health to be brought into habits of companionship with individuals unlike himself, who care little for his pursuits, and whose sphere and abilities he must go out of himself to appreciate. The accidents of my life have often afforded me this advantage, but never with more fulness and variety than during my continuance in office. There was one man, especially, the observation of whose character gave me a new idea of talent. His gifts were emphatically those of a man of business; prompt, acute, clear-minded; with an eye that saw through all perplexities, and a faculty of arrangement that made them vanish as if by the waving of an enchanter's wand. Bred up from boyhood in the Custom-House, it was his proper field of activity; and the many intricacies of business, so harassing to the interloper, pre-

sented themselves before him with the regularity of a perfectly comprehended system. In my contemplation, he stood as the ideal of his class. He was, indeed, the Custom-House in himself; or, at all events, the mainspring that kept its variously revolving wheels in motion; for, in an institution like this, where its officers are appointed to subserve their own profit and convenience, and seldom with a leading reference to their fitness for the duty to be performed, they must perforce seek elsewhere the dexterity which is not in them. Thus, by an inevitable necessity, as a magnet attracts steel-filings, so did our man of business draw to himself the difficulties which everybody met with. With an easy condescension, and kind forbearance towards our stupiditywhich, to his order of mind, must have seemed little short of crime-would he forthwith, by the merest touch of his finger, make the incomprehensible as clear as daylight. merchants valued him not less than we, his esoteric friends, His integrity was perfect; it was a law of nature with him, rather than a choice or a principle; nor can it be otherwise than the main condition of an intellect so remarkably clear and accurate as his to be honest and regular in the administration of affairs. A stain on his conscience, as to anything that came within the range of his vocation, would trouble such a man very much in the same way, though to a far greater degree, than an error in the balance of an account, or an ink-blot on the fair page of a book of record. Here, in a word-and it is a rare instance in my life-I had met with a person thoroughly adapted to the situation which he held.

Such were some of the people with whom I now found myself connected. I took it in good part, at the hands of Providence, that I was thrown into a position so little akin to my past habits; and set myself seriously to gather from it whatever profit was to be had. After my fellowship of toil and impracticable schemes with the dreamy brethren of Brook Farm; after living for three years within the subtle influence of an intellect like Emerson's; after those wild, free days on the Assabeth, indulging fantastic speculations, beside our fire of fallen boughs, with Ellery Channing; after talking with Thoreau about pine-trees and Indian

relics in his hermitage at Walden; after growing fastidious by sympathy with the classic refinement of Hillard's culture; after becoming imbued with poetic sentiment at Longfellow's hearthstone—it was time, at length, that I should exercise other faculties of my nature, and nourish myself with food for which I had hitherto had little appetite. Even the old Inspector was desirable, as a change of diet, to a man who had known Alcott. I looked upon it as an evidence, in some measure, of a system naturally well balanced, and lacking no essential part of a thorough organization, that, with such associates to remember, I could mingle at once with men of altogether different qualities, and never murmur at the change.

Literature, its exertions and objects, were now of little moment in my regard. I cared not at this period for books: they were apart from me. Nature-except it were human nature—the nature that is developed in earth and sky, was, in one sense, hidden from me; and all the imaginative delight wherewith it had been spiritualized passed away out of my mind. A gift, a faculty, if it had not been departed, was suspended and inanimate within me. There would have been something sad, unutterably dreary, in all this, had I not been conscious that it lay at my own option to recall whatever was valuable in the past. It might be true, indeed, that this was a life which could not, with impunity, be lived too long; else, it might make me permanently other than I had been, without transforming me into any shape which it would be worth my while to take. But I never considered it as other than a transitory life. There was always a prophetic instinct, a low whisper in my ear, that within no long period, and whenever a new change of custom should be essential to my good, change would come.

Meanwhile, there I was, a Surveyor of the Revenue, and, so far as I have been able to understand, as good a Surveyor as need be. A man of thought, fancy, and sensibility (had he ten times the Surveyor's proportion of those qualities), may, at any time, be a man of affairs, if he will only choose to give himself the trouble. My fellow-officers, and the merchants and sea-captains with whom my official duties brought me into any manner of connection, viewed me in no

other light, and probably knew me in no other character. None of them, I presume, had ever read a page of my inditing, or would have cared a fig the more for me if they had read them all: nor would it have mended the matter, in the least, had those same unprofitable pages been written with a pen like that of Burns or of Chaucer, each of whom was a Custom-House officer in his day, as well as I. It is a good lesson—though it may often be a hard one—for a man who has dreamed of literary fame, and of making for himself a rank among the world's dignitaries by such means, to step aside out of the narrow circle in which his claims are recognized and to find how atterly devoid of significance, beyond that circle, is all that he achieves, and all he aims at. I know not that I especially needed the lesson, either in the way of warning or rebuke; but at any rate, I learned it thoroughly; nor, it gives me pleasure to reflect, did the truth, as it came home to my perception, ever cost me a pang, or require to be thrown off in a sigh. In the way of literary talk, it is true, the Naval Officer-an excellent fellow, who came into the office with me, and went out only a little later—would often engage me in a discussion about one or the other of his favourite topics. Napoleon or Shakespeare. The Collector's junior clerk, too—a young gentleman who, it was whispered, occasionally covered a sheet of Uncle Sam's letter-paper with what (at the distance of a few yards) looked very much like poetry-used now and then to speak to me of books, as matters with which I might possibly be conversant. This was my all of lettered intercourse; and it was quite sufficient for my necessities.

No longer seeking or caring that my name should be blazoned abroad on title-pages, I smiled to think that it had now another kind of vogue. The Custom-House marker imprinted it, with a stencil and black paint, on pepper-bags, and baskets of anatto, and cigar-boxes, and bales of all kinds of dutiable merchandise, in testimony that these commodities had paid the impost, and gone regularly through the office. Borne on such queer vehicle of fame, a knowledge of my existence, so far as a name conveys it, was carried where it had never been before, and, I hope, will never go again.

But the past was not dead. Once in a great while, the thoughts that had seemed so vital and so active, yet had been put to rest so quietly, revived again. One of the most remarkable occasions, when the habit of bygone days awoke in me, was that which brings it within the law of literary propriety to offer the public the sketch which I am now writing.

In the second storey of the Custom-House there is a large room, in which the brick-work and naked rafters have never been covered with panelling and plaster. The edifice originally projected on a scale adapted to the old commercial enterprise of the port, and with an idea of subsequent prosperity destined never to be realized—contains far more space than its occupants know what to do with. This airy hall. therefore, over the Collector's apartments, remains unfinished to this day, and, in spite of the aged cobwebs that festoon its dusky beams, appears still to await the labour of the carpenter and mason. At one end of the room, in a recess, were a number of barrels piled one upon another, containing bundles of official documents. Large quantities of similar rubbish lay lumbering the floor. It was sorrowful to think how many days, and weeks, and months, and years of toil had been wasted on these musty papers, which were now only an encumbrance on earth, and were hidden away in this forgotten corner, never more to be glanced at by human eves. But then, what reams of other manuscripts-filled, not with the dulness of official formalities, but with the thought of inventive brains and the rich effusion of deep hearts—had gone equally to oblivion; and that, moreover, without serving a purpose in their day, as these heaped-up papers had, and-saddest of all-without purchasing for their writers the comfortable livelihood which the clerks of the Custom-House had gained by these worthless scratchings of the pen! Yet not altogether worthless, perhaps, as materials of local history. Here, no doubt, statistics of the former commerce of Salem might be discovered, and memorials of her princely merchants-old King Derbyold Billy Gray-old Simon Forrester-and many another magnate in his day, whose powdered head, however, was scarcely in the tomb before his mountain pile of wealth began to dwindle. The founders of the greater part of the families which now compose the aristocracy of Salem might here be traced, from the petty and obscure beginnings of their traffic, at periods generally much posterior to the Revolution, upward to what their children look upon as long-established rank,

Prior to the Revolution there is a dearth of records; the earlier documents and archives of the Custom-House having, probably, been carried off to Halifax, when all the king's officials accompanied the British army in its flight from Boston. It has often been a matter of regret with me; for, going back, perhaps, to the days of the Protectorate, those papers must have contained many references to forgotten or remembered men, and to antique customs, which would have affected me with the same pleasure as when I used to pick up Indian arrow-heads in the field near the Old Manse.

But, one idle and rainy day, it was my fortune to make a discovery of some little interest. Poking and burrowing into the heaped-up rubbish in the corner, unfolding one and another document, and reading the names of vessels that had long ago foundered at sea or rotted at the wharves, and those of merchants never heard of now on 'Change, nor very readily decipherable on their mossy tombstones; glancing at such matters with the saddened, weary, half-reluctant interest which we bestow on the corpse of dead activityand exerting my fancy, sluggish with little use, to raise up from these dry bones an image of the old town's brighter aspect, when India was a new region, and only Salem knew the way thither-I chanced to lay my hand on a small package, carefully done up in a piece of ancient vellow parchment. This envelope had the air of an official record of some period long past, when clerks engrossed their stiff and formal chirography on more substantial materials than at present. There was something about it that quickened an instinctive curiosity, and made me undo the faded red tape that tied up the package, with the sense that a treasure would here be brought to light. Unbending the rigid folds of the parchment cover, I found it to be a commission, under the hand and seal of Governor Shirley, in favour of one Jonathan Pue, as Surveyor of His Majesty's Customs for the

Port of Salem, in the Province of Massachusetts Bay. I remembered to have read (probably in Felt's "Annals") a notice of the decease of Mr. Surveyor Pue, about fourscore years ago; and likewise, in a newspaper of recent times, an account of the digging up of his remains in the little graveyard of St. Peter's Church, during the renewal of that edifice. Nothing, if I rightly call to mind, was left of my respected predecessor, save an imperfect skeleton, and some fragments of apparel, and a wig of majestic frizzle, which, unlike the head that it once adorned, was in very satisfactory preservation. But, on examining the papers which the parchment commission served to envelop. I found more traces of Mr. Pue's mental part, and the internal operations of his head, than the frizzled wig had contained of the venerable skull itself.

They were documents, in short, not official, but of a private nature, or, at least, written in his private capacity, and apparently with his own hand. I could account for their being included in the heap of Custom-House lumber only by the fact that Mr. Pue's death had happened suddenly, and that these papers, which he probably kept in his official desk, had never come to the knowledge of his heirs, or were supposed to relate to the business of the revenue. On the transfer of the archives to Halifax, this package, proving to be of no public concern, was left behind, and had remained ever since unopened.

The ancient Surveyor—being little molested, I suppose, at that early day with business pertaining to his office—seems to have devoted some of his many leisure hours to researches as a local antiquarian, and other inquisitions of a similar nature. These supplied material for petty activity to a mind that would otherwise have been eaten up with rust. A portion of his facts, by-the-by, did me good service in the preparation of the article entitled "Main Street," included in the present volume. The remainder may perhaps be applied to purposes equally valuable hereafter, or not impossibly may be worked up, so far as they go, into a regular history of Salem, should my veneration for the natal soil ever impel me to so pious a task. Meanwhile, they shall be at the command of any gentleman, inclined and competent, to take the

unprofitable labour off my hands. As a final disposition I contemplate depositing them with the Essex Historical Society.

But the object that most drew my attention to the mysterious package was a certain affair of fine red cloth, much worn and faded. There were traces about it of gold embroidery, which, however, was greatly fraved and defaced, so that none, or very little, of the glitter was left. It had been wrought, as was easy to perceive, with wonderful skill of needlework; and the stitch (as I am assured by ladies conversant with such mysteries) gives evidence of a now forgotten art, not to be discovered even by the process of picking out the threads. This rag of scarlet cloth—for time, and wear, and a sacreligious moth had reduced it to little other than a rag-on careful examination, assumed the shape of a letter. It was the capital letter A. By an accurate measurement, each limb proved to be precisely three inches and a quarter in length. It had been intended, there could be no doubt, as an ornamental article of dress; but how it was to be worn, or what rank, honour, and dignity, in by-past times, were signified by it, was a riddle which (so evanescent are the fashions of the world in these particulars) I saw little hope of solving. And yet it strangely interested me. My eves fastened themselves upon the old scarlet letter, and would not be turned aside. Certainly there was some deep meaning in it most worthy of interpretation, and which, as it were, streamed forth from the mystic symbol, subtly communicating itself to my sensibilities, but evading the analysis of my mind.

When thus perplexed—and cogitating, among other hypotheses, whether the letter might not have been one of those decorations which the white men used to contrive in order to take the eyes of Indians—I happened to place it on my breast. It seemed to me—the reader may smile, but must not doubt my word—it seemed to me, then, that I experienced a sensation not altogether physical, yet almost so, as of burning heat, and as if the letter were not of red cloth, but red-hot iron. I shuddered, and involuntarily let it fall upon the floor.

In the absorbing contemplation of the scarlet letter, I had hitherto neglected to examine a small roll of dingy paper,

around which it had been twisted. This I now opened, and had the satisfaction to find recorded by the old Surveyor's pen, a reasonably complete explanation of the whole affair. There were several foolscap sheets, containing many particulars respecting the life and conversation of one Hester Prynne, who appeared to have been rather a noteworthy personage in the view of our ancestors. She had flourished during the period between the early days of Massachusetts and the close of the seventeenth century. Aged persons, alive in the time of Mr. Surveyor Pue, and from whose oral testimony he had made up his narrative, remembered her, in their youth, as a very old, but not decrepit woman, of a stately and solemn aspect. It had been her habit, from an almost immemorial date, to go about the country as a kind of voluntary nurse, and doing whatever miscellaneous good she might: taking upon herself, likewise, to give advice in all matters, especially those of the heart, by which meansas a person of such propensities inevitably must—she gained from many people the reverence due to an angel, but, I should imagine, was looked upon by others as an intruder and a nuisance. Prving further into the manuscript, I found the record of other doings and sufferings of this singular woman. for most of which the reader is referred to the story entitled "THE SCARLET LETTER"; and it should be borne carefully in mind that the main facts of that story are authorized and authenticated by the document of Mr. Suryevor Pue. The original papers, together with the scarlet letter itself-a most curious relic-are still in my possession, and shall be freely exhibited to whomsoever induced by the great interest of the narrative, may desire a sight of them. I must not be understood as affirming that, in the dressing up of the tale, and imagining the motives and modes of passion that influenced the characters who figure in it. I have invariably confined myself within the limits of the old Surveyor's half-a-dozen sheets of foolscap. On the contrary, I have allowed myself, as to such points, nearly, or altogether, as much license as if the facts had been entirely of my own invention. What I contend for is the authenticity of the outline.

This incident recalled my mind, in some degree, to its old track. There seemed to be here the ground-work of a tale.

It impressed me as if the ancient Surveyor, in his garb of a hundred years gone by, and wearing his immortal wigwhich was buried with him, but did not perish in the grave -had met me in the deserted chamber of the Custom-House. In his port was the dignity of one who had borne His Maiesty's commission, and who was therefore illuminated by a ray of the splendour that shone so dazzlingly about the throne. How unlike alas! the hangdog look of a republican official, who, as the servant of the people, feels himself less than the least, and below the lowest of his masters. With his own ghostly hand, the obscurely seen, but majestic, figure had imparted to me the scarlet symbol and the little roll of explanatory manuscript. With his own ghostly voice he had exhorted me, on the sacred consideration of my filial duty and reverence towards him-who might reasonably regard himself as my official ancestor-to bring his mouldy and motheaten lucubrations before the public. "Do this." said the ghost of Mr. Surveyor Pue, emphatically nodding the head that looked so imposing within its memorable wig; "do this, and the profit shall be all your own! You will shortly need it: for it is not in your days as it was in mine, when a man's office was a life-lease, and oftentimes an heirloom. But I charge you, in this matter of old Mistress Prynne, give to your predecessor's memory the credit which will be rightfully due!" And I said to the ghost of Mr. Surveyor Pue-"I will!"

On Hester Prynne's story, therefore, I bestowed much thought. It was the subject of my meditations for many an hour, while pacing to and fro across my room, or traversing, with a hundredfold repetition, the long extent from the front door of the Custom-House to the side entrance, and back again. Great were the weariness and annoyance of the old Inspector and the Weighers and Gaugers, whose slumbers were disturbed by the unmercifully lengthened tramp of my passing and returning footsteps. Remembering their own former habits, they used to say that the Surveyor was walking the quarter-deck. They probably fancied that my sole object—and, indeed, the sole object for which a sane man could ever put himself into voluntary motion—was te get an appetite for dinner. And, to say the truth, an appetite,

sharpened by the east wind that generally blew along the passage, was the only valuable result of so much indefatigable exercise. So little adapted is the atmosphere of a Custom-House to the delicate harvest of fancy and sensibility, that, had I remained there through ten Presidencies yet to come, I doubt whether the tale of "The Scarlet Letter" would ever have been brought before the public eye. My imagination was a tarnished mirror. It would not reflect, or only with miserable dimness, the figures with which I did my best to people it. The characters of the narrative would not be warmed and rendered malleable by any heat that I could kindle at my intellectual forge. They would take neither the glow of passion nor the tenderness of sentiment, but retained all the rigidity of dead corpses, and stared me in the face with a fixed and ghastly grin of contemptuous defiance. "What have you to do with us?" that expression seemed to say. "The little power you might have once possessed over the tribe of unrealities is gone! You have bartered it for a pittance of the public gold. Go, then, and earn your wages!" In short, the almost torpid creatures of my own fancy twitted me with imbecility, and not without fair occasion.

It was not merely during the three hours and a half which Uncle Sam claimed as his share of my daily life that this wretched numbness held possession of me. It went with me on my sea-shore walks and rambles into the country, whenever—which was seldom and reluctantly—I bestirred myself to seek that invigorating charm of Nature which used to give me such freshness and activity of thought, the moment that I stepped across the threshold of the Old Manse. The same torpor, as regarded the capacity for intellectual effort; accompanied me home, and weighed upon me in the chamber which I most absurdly termed my study. Nor did it quit me when, late at night, I sat in the deserted parlour, lighted only by the glimmering coal-fire and the moon, striving to picture forth imaginary scenes, which, the next day, might flow out on the brightening page in many-hued description.

If the imaginative faculty refused to act at such an hour, it might well be deemed a hopeless case. Moonlight, in a familiar room, falling so white upon the carpet, and showing all its figures so distinctly—making every object so minutely

visible, yet so unlike a morning or noontide visibility-is a medium the most suitable for a romance-writer to get acquainted with his illusive guests. There is the little domestic scenery of the well-known apartment; the chairs, with each its separate individuality; the centre-table, sustaining a workbasket, a volume or two, and an extinguished lamp; the sofa; the book-case; the picture on the wall-all these details, so completely seen, are so spiritualised by the unusual light, that they seem to lose their actual substance, and become things of intellect. Nothing is too small or too trifling to undergo this change, and acquire dignity thereby. A child's shoe: the doll, seated in her little wicker carriage; the hobby-horsewhatever, in a word, has been used or played with during the day is now invested with a quality of strangeness and remoteness, though still almost as vividly present as by daylight. Thus, therefore, the floor of our familiar room has become a neutral territory, somewhere between the real world and fairy-land, where the Actual and the Imaginary may meet, and each imbue itself with the nature of the other. Ghosts might enter here without affrighting us. It would be too much in keeping with the scene to excite surprise, were we to look about us and discover a form, beloved, but gone hence, now sitting quietly in a streak of this magic moonshine, with an aspect that would make us doubt whether it had returned from afar, or had never once stirred from our fireside.

The somewhat dim coal-fire has an essential influence in producing the effect which I would describe. It throws its unobtrusive tinge throughout the room, with a faint ruddiness upon the walls and cciling, and a reflected gleam upon the polish of the furniture. This warmer light mingles itself with the cold spirituality of the moon-beams, and communicates, as it were, a heart and sensibilities of human tenderness to the forms which fancy summons up. It converts them from snow-images into men and women. Glancing at the looking-glass, we behold—deep within its haunted verge—the smouldering glow of the half-extinguished anthracite, the white moonbeams on the floor, and a repetition of all the gleam and shadow of the picture, with one remove further from the actual, and nearer to the imaginative. Then, at

such an hour, and with this scene before him, if a man, sitting all alone, cannot dream strange things, and make them look like truth, he need never try to write romances.

But, for myself, during the whole of my Custom-House experience, moonlight and sunshine, and the glow of firelight, were just alike in my regard; and neither of them was of one whit more avail than the twinkle of a tallow-candle. An entire class of susceptibilities, and a gift connected with them—of no great richness or value, but the best I had—was gone from me.

It is my belief, however, that had I attempted a different order of composition, my faculties would not have been found so pointless and inefficacious. I might, for instance, have contented myself with writing out the narratives of a veteran shipmaster, one of the Inspectors, whom I should be most ungrateful not to mention, since scarcely a day passed that he did not stir me to laughter and admiration by his marvellous gifts as a story-teller. Could I have preserved the picturesque force of his style, and the humourous colouring which nature taught him how to throw over his descriptions, the result, I honestly believe, would have been something new in literature. Or I might readily have found a more serious task. It was a folly, with the materiality of this daily life pressing so intrusively upon me, to attempt to fling myself back into another age, or to insist on creating the semblance of a world out of airy matter, when, at every moment, the impalpable beauty of my soap-bubble was broken by the rude contact of some actual circumstance. The wiser effort would have been to diffuse thought and imagination through the opaque substance of to-day, and thus to make it a bright transparency; to spiritualise the burden that began to weigh so heavily; to seek, resolutely, the true and indestructible value that lay hidden in the petty and wearisome incidents, and ordinary characters with which I was now conversant. The fault was mine. The page of life that was spread out before me seemed dull and commonplace only because I had not fathomed its deeper import. A better book than I shall ever write was there: leaf after leaf presenting itself to me, just as it was written out by the reality of the flitting hour, and vanishing as fast as written, only because my brain

wanted the insight, and my hand the cunning, to transcribe it. At some future day, it may be, I shall remember a few scattered fragments and broken paragraphs, and write them down, and find the letters turn to gold upon the page.

These perceptions had come too late. At the instant, I was only conscious that what would have been a pleasure once was now a hopeless toil. There was no occasion to make much moan about this state of affairs. I had ceased to be a writer of tolerably poor tales and essays, and had become a tolerably good Surveyor of the Customs. That was all. But, nevertheless, it is anything but agreeable to be haunted by a suspicion that one's intellect is dwindling away, or exhaling, without your consciousness, like ether out of a phial; so that, at every glance, you find a smaller and less volatile residuum. Of the fact there could be no doubt; and, examining myself and others. I was led to conclusions, in reference to the effect of public office on the character, not very favourable to the mode of life in question. In some other form, perhaps, I may hereafter develop these effects. Suffice it here to say that a Custom-House officer of long continuance can hardly be a very praiseworthy or respectable personage, for many reasons; one of them, the tenure by which he holds his situation, and another, the very nature of his business, which -though, I trust, an honest one-is of such a sort that he does not share in the united effort of mankind.

An effect—which I believe to be observable, more or less, in every individual who has occupied the position—is, that while he leans on the mighty arm of the Republic, his own proper strength departs from him. He loses, in an extent proportioned to the weakness or force of his original nature, the capability of self-support. If he possesses an unusual share of native energy, or the enervating magic of place do not operate too long upon him, his forfeited powers may be redeemable. The ejected officer—fortunate in the unkindly shove that sends him forth betimes, to struggle amid a struggling world—may return to himself, and become all that he has ever been. But this seldom happens. He usually keeps his ground just long enough for his own ruin, and is then thrust out, with sinews all unstrung, to totter along the difficult footpath of life as he best may. Conscious of his

own infirmity—that his tempered steel and elasticity are lost -he for ever afterwards looks wistfully about him in quest of support external to himself. His pervading and continual hope-a hallucination, which, in the face of all discouragement, and making light of impossibilities, haunts him while he lives, and, I fancy, like the convulsive throes of the cholera, torments him for a brief space after death—is, that finally, and in no long time, by some happy coincidence of circumstances, he shall be restored to office. This faith, more than anything else, steals the pith and availability out of whatever enterprise he may dream of undertaking. Why should he toil and moil, and be at so much trouble to pick himself up out the mud, when, in a little while hence, the strong arm of his Uncle will raise and support him? Why should he work for his living here, or go to dig gold in California, when he is so soon to be made happy, at monthly intervals, with a little pile of glittering coin out of his Uncle's pocket? It is sadly curious to observe how slight a taste of office suffices to infect a poor fellow with this singular disease. Uncle Sam's gold—meaning no disrespect to the worthy old gentleman-has, in this respect, a quality of enchantment like that of the devil's wages. Whoever touches it should look well to himself, or he may find the bargain to go hard against him, involving, if not his soul, yet many of its better attributes; its sturdy force, its courage and constancy, its truth, its self-reliance, and all that gives the emphasis to manly character.

Here was a fine prospect in the distance! Not that the Surveyor brought the lesson home to himself, or admitted that he could be so utterly undone, either by continuance in office or ejectment. Yet my reflections were not the most comfortable. I began to grow melancholy and restless; continually prying into my mind, to discover which of its poor properties were gone, and what degree of detriment had already accrued to the remainder. I endeavoured to calculate how much longer I could stay in the Custom-House, and yet go forth a man. To confess the truth, it was my greatest apprehension—as it would never be a measure of policy to turn out so quiet an individual as myself; and it being hardly in the nature of a public officer to resign—it was my chief

trouble, therefore, that I was likely to grow grey and decrepit in the Surveyorship, and become much such another animal as the old Inspector. Might it not, in the tedious lapse of official life that lay before me, finally be with me as it was with this venerable friend—to make the dinner-hour the nucleus of the day, and to spend the rest of it, as an old dog spends it, asleep in the sunshine or in the shade? A dreary look-forward, this, for a man who felt it to be the best definition of happiness to live throughout the whole range of his faculties and sensibilities! But, all this while, I was giving myself very unnecessary alarm. Providence had meditated better things for me than I could possibly imagine for myself.

A remarkable event of the third year of my Surveyorship -to adopt the tone of "P.P."-was the election of General Taylor to the Presidency. It is essential, in order to a complete estimate of the advantages of official life, to view the incumbent at the in-coming of a hostile administration. His position is then one of the most singularly irksome, and, in every contingency, disagreeable, that a wretched mortal can possibly occupy; with seldom an alternative of good on either hand, although what presents itself to him as the worst event may very probably be the best. But it is a strange experience, to a man of pride and sensibility, to know that his interests are within the control of individuals who neither love nor understand him, and by whom, since one or the other must needs happen, he would rather be injured than obliged. Strange, too, for one who has kept his calmness throughout the contest, to observe the bloodthirstiness that is developed in the hour of triumph, and to be conscious that he is himself among its objects! There are few uglier traits of human nature than this tendency—which I now witnessed in men no worse than their neighbours-to grow cruel, merely because they possessed the power of inflicting harm. If the guillotine, as applied to office-holders, were a literal fact, instead of one of the most apt of metaphors, it is my sincere belief that the active members of the victorious party were sufficiently excited to have chopped off all our heads, and have thanked Heaven for the opportunity! It appears to me-who have been a calm and curious observer, as well in

victory as defeat—that this fierce and bitter spirit of malice and revenge has never distinguished the many triumphs of my own party as it now did that of the Whigs. The Democrats take the offices, as a general rule, because they need them, and because the practice of many years has made it the law of political warfare, which, unless a different system be proclaimed, it was weakness and cowardice to murmur at. But the long habit of victory has made them generous. They know how to spare when they see occasion; and when they strike, the axe may be sharp indeed, but its edge is seldom poisoned with ill-will; nor is it their custom ignominiously to kick the head which they have just struck off.

In short, unpleasant as was my predicament, at best, I saw much reason to congratulate myself that I was on the losing side rather than the triumphant one. If, heretofore, I had been none of the warmest of partisans, I began now, at this season of peril and adversity, to be pretty acutely sensible with which party my predilections lay; nor was it without something like regret and shame that, according to a reasonable calculation of chances, I saw my own prospect of retaining office to be better than those of my democratic brethren. But who can see an inch into futurity beyond his nose? My own head was the first that fell!

The moment when a man's head drops off is seldom, or never, I am inclined to think, precisely the most agreeable of his life. Nevertheless, like the greater part of our misfortunes, even so serious a contingency brings its remedy and consolation with it, if the sufferer will but make the best rather than the worst, of the accident which has befallen him. In my particular case the consolatory topics were close at hand, and, indeed, had suggested themselves to my meditations a considerable time before it was requisite to use them. In view of my previous weariness of office, and vague thoughts of resignation, my fortune somewhat resembled that of a person who should entertain an idea of committing suicide, and although beyond his hopes, met with the good hap to be murdered. In the Custom-House, as before in the Old Manse, I had spent three years—a term long enough to rest a weary brain: long enough to break off old intellectual habits, and make room for new ones; long enough, and too

long, to have lived in an unnatural state, doing what was really of no advantage nor delight to any human being, and withholding myself from toil that would, at least, have stilled an unquiet impulse in me. Then, moreover, as regarded his unceremonious ejectment, the late Surveyor was not altogether ill-pleased to be recognised by the Whigs as an enemy; since his inactivity in political affairs—his tendency to roam. at will, in that broad and quiet field where all mankind may meet, rather than confine himself to those narrow paths where brethren of the same household must diverge from one another-had sometimes made it questionable with his brother Democrats whether he was a friend. Now, after he had won the crown of martyrdom (though with no longer a head to wear it on), the point might be looked upon as settled. Finally, little heroic as he was, it seemed more decorous to be overthrown in the downfall of the party with which he had been content to stand than to remain a forlorn survivor, when so many worthier men were falling: and at last, after subsisting for four years on the mercy of a hostile administration, to be compelled then to define his position anew, and claim the vet more humiliating mercy of a friendly one.

Meanwhile, the press had taken up my affair, and kept me for a week or two careering through the public prints, in my decapitated state, like Irving's Headless Horseman, ghastly and grim, and longing to be buried, as a political dead man ought. So much for my figurative self. The real human being all this time, with his head safely on his shoulders, had brought himself to the comfortable conclusion that everything was for the best; and making an investment in ink, paper, and steel pens, had opened his long-disused writing desk, and was again a literary man.

Now it was that the lucubrations of my ancient predecessor, Mr. Surveyor Pue, came into play. Rusty through long idleness, some little space was requisite before my intellectual machinery could be brought to work upon the tale with an effect in any degree satisfactory. Even yet, though my thoughts were ultimately much absorbed in the task. it wears, to my eye, a stern and sombre aspect: too much ungladdened by genial sunshine; too little relieved by the tender

and familiar influences which soften almost every scene of nature and real life, and undoubtedly should soften every picture of them. This uncaptivating effect is perhaps due to the period of hardly accomplished revolution, and still seething turmoil, in which the story shaped itself. It is no indication, however, of a lack of cheerfulness in the writer's mind: for he was happier while straying through the gloom of these sunless fantasies than at any time since he had quitted the Old Manse. Some of the briefer articles, which contribute to make up the volume, have likewise been written since my involuntary withdrawal from the toils and honours of public life, and the remainder are gleaned from annuals and magazines, of such antique date, that they have gone round the circle. and come back to novelty again. Keeping up the metaphor of the political guillotine, the whole may be considered as the Posthumous Papers of a Decapitated Sur-VEYOR: and the sketch which I am now bringing to a close. if too autobiographical for a modest person to publish in his lifetime, will readily be excused in a gentleman who writes from beyond the grave. Peace be with all the world! My blessing on my friends! My forgiveness to my enemies! For I am in the realm of quiet!

The life of the Custom-House lies like a dream behind me. The old Inspector—who, by-the-bye, I regret to say, was overthrown and killed by a horse some time ago, else he would certainly have lived for ever-he, and all those other venerable personages who sat with him at the receipt of custom, are but shadows in my view: white-headed and wrinkled images, which my fancy used to sport with, and has now flung aside for ever. The merchants-Pingree, Phillips, Shepard, Upton, Kimball, Bertram, Hunt-these and many other names, which had such a classic familiarity for my ear six months ago,-these men of traffic, who seemed to occupy so important a position in the world—how little time has it required to disconnect me from them all, not merely in act, but recollection! It is with an effort that I recall the figures and appellations of these few. Soon, likewise, my old native town will loom upon me through the haze of memory, a mist brooding over and around it; as if it were no portion of the real earth, but an overgrown village in cloud-land, with only imaginary inhabitants to people its wooden houses and walk its homely lanes, and the unpicturesque prolixity of its main street. Henceforth it ceases to be a reality of my life; I am a citizen of somewhere else. My good townspeople will not much regret me, for—though it has been as dear an object as any, in my literary efforts, to be of some importance in their eyes, and to win myself a pleasant memory in this abode and burial-place of so many of my forefathers—there has never been, for me, the genial atmosphere which a literary man requires in order to ripen the best harvest of his mind. I shall do better amongst other faces; and these familiar ones, it need hardly be said, will do just as well without me.

It may be, however—oh, transporting and triumphant thought!—that the great-grandchildren of the present race may sometimes think kindly of the scribbler of bygone days, when the antiquary of days to come, among the sites memorable in the town's history, shall point out the locality of The Town Pump.

# THE SCARLET LETTER

#### CHAPTER I

THE PRISON-DOOR

THRONG of bearded men, in sad-coloured garments and grey steeple-crowned hats, intermixed with women, some wearing hoods, and others bareheaded, was assembled in front of a wooden edifice, the door of which was heavily timbered with oak, and studded with iron spikes.

The founders of a new colony, whatever Utopia of human virtue and happiness they might originally project, have invariably recognised it among their earliest practical necessities to allot a portion of the virgin soil as a cemetery, and another portion as the site of a prison. In accordance with this rule, it may safely be assumed that the forefathers of Boston had built the first prison-house somewhere in the vicinity of Cornhill, almost as seasonably as they marked out the first burial-ground, on Isaac Johnson's lot, and round about his grave, which subsequently became the nucleus of all the congregated sepulchres in the old churchvard of King's Chapel. Certain it is that, some fifteen or twenty years after the settlement of the town, the wooden jail was already marked with weather-stains and other indications of age, which gave a yet darker aspect to its beetlebrowed and gloomy front. The rust on the ponderous ironwork of its oaken door looked more antique than anything else in the New World. Like all that pertains to crime, it seemed never to have known a youthful era. Before this ugly edifice, and between it and the wheel-track of the street, was a grass-plot, much overgrown with burdock, pig-weed, apple-pern, and such unsightly vegetation, which evidently found something congenial in the soil that had so early

borne the black flower of civilised society, a prison. But on one side of the portal, and rooted almost at the threshold, was a wild rose-bush, covered, in this month of June, with its delicate gems, which might be imagined to offer their fragrance and fragile beauty to the prisoner as he went in, and to the condemned criminal as he came forth to his doom, in token that the deep heart of Nature could pity and be kind to him.

This rose-bush, by a strange chance, has been kept alive in history; but whether it had merely survived out of the stern old wilderness, so long after the fall of the gigantic pines and oaks that originally overshadowed it, or whether, as there is fair authority for believing, it had sprung up under the footsteps of the sainted Ann Hutchinson as she entered the prison-door, we shall not take upon us to determine. Finding it so directly on the threshold of our narrative, which is now about to issue from that inauspicious portal, we could hardly do otherwise than pluck one of its flowers, and present it to the reader. It may serve, let us hope, to symbolise some sweet moral blossom that may be found along the track, or relieve the darkening close of a tale of human frailty and sorrow.

#### CHAPTER II

### THE MARKET-PLACE

HE grass-plot before the jail, in Prison Lane. on a certain summer morning, not less than two centuries ago, was occupied by a pretty large number of the inhabitants of Boston, all with their eyes intently fastened on the iron-clamped oaken door. Amongst any other population, or at a later period in the history of New England. the grim rigidity that petrified the bearded physiognomies of these good people would have augured some awful business in hand. It could have betokened nothing short of the anticipated execution of some noted culprit, on whom the sentence of a legal tribunal had but confirmed the verdict of public sentiment. But, in that early severity of the Puritan character, an inference of this kind could not so indubitably be drawn. It might be that a sluggish bondservant, or an undutiful child, whom his parents had given over to the civil authority, was to be corrected at the whipping-post. It might be that an Antinomian, a Ouaker, or other heterodox religionist, was to be scourged out of the town, or an idle or vagrant Indian, whom the white man's firewater had made riotous about the streets, was to be driven with stripes into the shadow of the forest. It might be, too, that a witch, like old Mistress Hibbins, the bittertempered widow of the magistrate, was to die upon the In either case, there was very much the same solemnity of demeanour on the part of the spectators, as befitted a people among whom religion and law were almost identical, and in whose character both were so thoroughly interfused, that the mildest and severest acts of public discipline were alike made venerable and awful. Meagre, indeed, and cold, was the sympathy that a transgressor might look for, from such bystanders, at the scaffold. On the other hand, a penalty which, in our days, would infer a degree of

41

mocking infamy and ridicule, might then be invested with almost as stern a dignity as the punishment of death itself.

It was a circumstance to be noted on the summer morning when our story begins its course, that the women, of whom there were several in the crowd, appeared to take a peculiar interest in whatever penal infliction might be expected to ensue. The age had not so much refinement, that any sense of impropriety restrained the wearers of petticoat and farthingale from stepping forth into the public ways, and wedging their not unsubstantial persons, if occasion were, into the throng nearest to the scaffold at an execution. Morally, as well as materially, there was a coarser fibre in those wives and maidens of old English birth and breeding than in their fair descendants, separated from them by a series of six or seven generations; for, throughout that chain of ancestry, every successive mother had transmitted to her child a fainter bloom, a more delicate and briefer beauty, and a slighter physical frame, if not a character of less force and solidity than her own. The women who were now standing about the prison-door stood within less than half a century of the period when the man-like Elizabeth had been the not altogether unsuitable representative of the sex. They were her countrywomen: and the beef and ale of their native land, with a moral diet not a whit more refined, entered largely into their composition. The bright morning sun, therefore, shone on broad shoulders and well-developed busts, and on round and ruddy cheeks, that had ripened in the far-off island, and had hardly yet grown paler or thinner in the atmosphere of New England. There was, moreover, a boldness and rotundity of speech among these matrons, as most of them seemed to be, that would startle us at the present day, whether in respect to its purport or its volume of tone.

"Goodwives," said a hard-featured dame of fifty, "I'll tell ye a piece of my mind. It would be greatly for the public behoof, if we women, being of mature age and church-members in good repute, should have the handling of such malefactresses as this Hester Prynne. What think ye, gossips? If the hussy stood up for judgment before us five, that

are now here in a knot together, would she come off with such a sentence as the worshipful magistrates have awarded? Marry, I trow not!"

"People say," said another, "that the Reverend Master Dimmesdale, her godly pastor, takes it very grievously to heart that such a scandal should have come upon his con-

gregation."

"The magistrates are God-fearing gentlemen, but merciful overmuch—that is a truth," added a third autumnal matron. "At the very least, they should have put the brand of a hot iron on Hester Prynne's forehead. Madame Hester would have winced at that, I warrant me. But she—the naughty baggage—little will she care what they put upon the bodice of her gown! Why, look you, she may cover it with a brooch, or such like heathenish adornment, and so walk the streets as brave as ever!"

"Ah, but," interposed, more softly, a young wife, holding a child by the hand, "let her cover the mark as she will, the

pang of it will be always in her heart."

"What do we talk of marks and brands, whether on the bodice of her gown or the flesh of her forehead?" cried another female, the ugliest as well as the most pitiless of these self-constituted judges. "This woman has brought shame upon us all, and ought to die. Is there not law for it? Truly there is, both in the Scripture and the statute-book. Then let the magistrates, who have made it of no effect, thank themselves if their own wives and daughters go astray!"

"Mercy on us, goodwife!" exclaimed a man in the crowd, "is there no virtue in woman, save what springs from a wholesome fear of the gallows? That is the hardest word yet! Hush now, gossips! for the lock is turning in the prison-door, and here comes Mistress Prynne

herself."

The door of the jail being flung open from within, there appeared, in the first place, like a black shadow emerging into sunshine, the grim and gristly presence of the town-beadle, with a sword by his side, and his staff of office in his hand. This personage prefigured and represented in his aspect the whole dismal severity of the Puritanic code of

law, which it was his business to administer in its final and closest application to the offender. Stretching forth the official staff in his left hand, he laid his right upon the shoulder of a young woman, whom he thus drew forward, until, on the threshold of the prison-door, she repelled him, by an action marked with natural dignity and force of character, and stepped into the open air as if by her own free will. She bore in her arms a child, a baby of some three months old, who winked and turned aside its little face from the too vivid light of day; because its existence, heretofore, had brought it acquaintance only with the grey twilight of a dungeon, or other darksome apartment of the prison.

When the young woman-the mother of this child-stood fully revealed before the crowd, it seemed to be her first impulse to clasp the infant closely to her bosom: not so much by an impulse of motherly affection, as that she might thereby conceal a certain token, which was wrought or fastened into her dress. In a moment, however, wisely judging that one token of her shame would but poorly serve to hide another, she took the baby on her arm, and with a burning blush, and yet a haughty smile, and a glance that would not be abashed, looked around at her townspeople and neighbours. On the breast of her gown, in fine red cloth, surrounded with an elaborate embroidery and fantastic flourishes of gold thread, appeared the letter A. It was so artistically done, and with so much fertility and gorgeous luxuriance of fancy, that it had all the effect of a last and fitting decoration to the apparel which she wore, and which was of a splendour in accordance with the taste of the age, but greatly beyond what was allowed by the sumptuary regulations of the colony.

The young woman was tall, with a figure of perfect elegance on a large scale. She had dark and abundant hair, so glossy that it threw off the sunshine with a gleam; and a face which, besides being beautiful from regularity of feature and richness of complexion, had the impressiveness belonging to a marked brow and deep black eyes. She was ladylike, too, after the manner of the feminine gentility of those days: characterised by a certain state and dignity, rather than

by the delicate, evanescent, and indescribable grace which is now recognised as its indication. And never had Hester Prynne appeared more ladylike, in the antique interpretation of the term, than as she issued from the prison. Those who had before known her, and had expected to behold her dimmed and obscured by a disastrous cloud, were astonished. and even startled, to perceive how her beauty shone out, and made a halo of the misfortune and ignominy in which she was enveloped. It may be true that, to a sensitive observer, there was something exquisitely painful in it. Her attire, which indeed, she had wrought for the occasion in prison, and had modelled much after her own fancy, seemed to express the attitude of her spirit, the desperate recklessness of her mood, by its wild and picturesque peculiarity. But the point which drew all eyes, and, as it were, transfigured the wearer-so that both men and women who had been familiarly acquainted with Hester Prynne were now impressed as if they beheld her for the first time-was that SCARLET LETTER, so fantastically embroidered and illuminated upon her bosom. It had the effect of a spell, taking her out of the ordinary relations with humanity, and enclosing her in a sphere by herself.

"She hath good skill at her needle, that's certain," remarked one of her female spectators; "but did ever a woman, before this brazen hussy, contrive such a way of showing it? Why, gossips, what is it but to laugh in the faces of our godly magistrates, and make a pride out what they, worthy

gentlemen, meant for a punishment?"

"It were well," muttered the most iron-visaged of the old dames, "if we stripped Madame Hester's rich gown off her dainty shoulders; and as for the red letter which she hath stitched so curiously, I'll bestow a rag of mine own rheumatic flannel to make a fitter one!"

"Oh, peace, neighbours—peace!" whispered their youngest companion; "do not let her hear you! Not a stitch in that embroidered letter but she has felt it in her heart."

The grim beadle now made a gesture with his staff.

"Make way, good people—make way, in the King's name!" cried he. "Open a passage; and I promise ye, Mistress Prynne shall be set where man, woman, and child may have

a fair sight of her brave apparel from this time till an hour past meridian. A blessing on the righteous colony of the Massachusetts, where iniquity is dragged out into the sunshine! Come along, Madame Hester, and show your scarlet letter in the market-place!"

A lane was forthwith opened through the crowd of spectators. Preceded by the beadle, and attended by an irregular procession of stern-browed men and unkindly visaged women. Hester Prynne set forth towards the place appointed for her punishment. A crowd of eager and curious schoolboys, understanding little of the matter in hand, except that it gave them a half-holiday, ran before her progress, turning their heads continually to stare into her face and at the winking baby in her arms, and at the ignominious letter on her breast. It was no great distance, in those days, from the prison door to the market-place. Measured by the prisoner's experience, however, it might be reckoned a journey of some length; for haughty as her demeanour was, she perchance underwent an agony from every footstep of those that thronged to see her, as if her heart had been flung into the street for them all to spurn and trample upon. In our nature, however, there is a provision, alike marvellous and merciful, that the sufferer should never know the intensity of what he endures by its present torture, but chiefly by the pang that rankles after it. With almost a serene deportment, therefore, Hester Prynne passed through this portion of her ordeal, and came to a sort of scaffold, at the western extremity of the market-place. It stood nearly beneath the eaves of Boston's earliest church, and appeared to be a fixture there.

In fact, this scaffold constituted a portion of a penal machine, which now, for two or three generations past, has been merely historical and traditionary among us, but was held, in the old time, to be as effectual an agent, in the promotion of good citizenship, as ever was the guillotine among the terrorists of France. It was, in short, the platform of the pillory; and above it rose the framework of that instrument of discipline, so fashioned as to confine the human head in its tight grasp, and thus hold it up to the public gaze. The very ideal of ignominy was embodied and

made manifest in this contrivance of wood and iron. There can be no outrage, methinks, against our common nature—whatever be the delinquences of the individual—no outrage more flagrant than to forbid the culprit to hide his face for shame; as it was the essence of this punishment to do. In Hester Prynne's instance, however, as not unfrequently in other cases, her sentence bore that she should stand a certain time upon the platform, but without undergoing that gripe about the neck and confinement of the head, the proneness to which was the most devilish characteristic of this ugly engine. Knowing well her part, she ascended a flight of wooden steps, and was thus displayed to the surrounding multitude, at about the height of a man's shoulders above the street.

Had there been a Papist among the crowd of Puritans, he might have seen in this beautiful woman, so picturesque in her attire and mien, and with the infant at her bosom, an object to remind him of the image of Divine Maternity, which so many illustrious painters have vied with one another to represent; something which should remind him, indeed, but only by contrast, of that sacred image of sinless motherhood, whose infant was to redeem the world. Here, there was the taint of deepest sin in the most sacred quality of human life, working such effect, that the world was only the darker for this woman's beauty, and the more lost for the infant that she had borne.

The scene was not without a mixture of awe, such as must always invest the spectacle of guilt and shame in a fellow-creature, before society shall have grown corrupt enough to smile, instead of shuddering at it. The witnesses of Hester Prynne's disgrace had not yet passed beyond their simplicity. They were stern enough to look upon her death, had that been the sentence, without a murmur at its severity, but had none of the heartlessness of another social state, which would find only a theme for jest in an exhibition like the present. Even had there been a disposition to turn the matter into ridicule, it must have been repressed and overpowered by the solemn presence of men no less dignified than the governor, and several of his counsellors, a judge, a general, and the ministers of the town, all of whom sat or

stood in a balcony of the meeting-house, looking down upon the platform. When such personages could constitute a part of the spectacle, without risking the majesty, or reverence of rank and office, it was safely to be inferred that the infliction of a legal sentence would have an earnest and effectual meaning. Accordingly, the crowd was sombre and grave.

The unhappy culprit sustained herself as best a woman might, under the heavy weight of a thousand unrelenting eyes, all fastened upon her, and concentrated at her bosom. It was almost intolerable to be borne. Of an impulsive and passionate nature, she had fortified herself to encounter the stings and venomous stabs of public contumely, wreaking itself in every variety of insult; but there was a quality so much more terrible in the solemn mood of the popular mind. that she longed rather to behold all those rigid countenances contorted with scornful merriment, and herself the object. Had a roar of laughter burst from the multitude-each man, each woman, each little shrill-voiced child, contributing their individual parts-Hester Prynne might have repaid them all with a bitter and disdainful smile. But, under the leaden infliction which it was her doom to endure, she felt, at moments, as if she must needs shriek out with the full power of her lungs, and cast herself from the scaffold down upon the ground, or else go mad at once.

Yet there were intervals when the whole scene, in which she was the most conspicuous object, seemed to vanish from her eyes, or, at least, glimmered indistinctly before them, like a mass of imperfectly shaped and spectral images. Her mind, and especially her memory, was preternaturally active, and kept bringing up other scenes than this roughly hewn street of a little town, on the edge of the western wilderness: other faces than were louring upon her from beneath the brims of those steeple-crowned hats. Reminiscences, the most trifling and immaterial, passages of infancy and school-days, sports, childish quarrels, and the little domestic traits of her maiden years, came swarming back upon her, intermingled with recollections of whatever was gravest in her subsequent life; one picture precisely as vivid as another; as if all were of similar importance, or

all alike a play. Possibly, it was an instinctive device of her spirit to relieve itself, by the exhibition of these phantasmagoric forms, from the cruel weight and harness of the

reality.

Be that as it might, the scaffold of the pillory was a point of view that revealed to Hester Prynne the entire track along which she had been treading, since her happy infancy. Standing on that miserable eminence, she saw again her native village, in Old England, and her paternal home: a decayed house of grey stone, with a poverty-stricken aspect, but retaining a half obliterated shield of arms over the portal. in token of antique gentility. She saw her father's face. with its bold brow, and reverend white beard, that flowed over the old-fashioned Elizabethan ruff; her mother's, too, with the look of heedful and anxious love which it always wore in her remembrance, and which, even since her death, had so often laid the impediment of a gentle remonstrance in her daughter's pathway. She saw her own face, glowing with girlish beauty, and illuminating all the interior of the dusky mirror in which she had been wont to gaze at it. There she beheld another countenance, of a man well stricken in years, a pale, thin, scholar-like visage, with eyes dim and bleared by the lamp-light that had served them to pore over many ponderous books. Yet those same bleared optics had a strange, penetrating power, when it was their owner's purpose to read the human soul. This figure of the study and the cloister, as Hester Prynne's womanly fancy failed not to recall, was slightly deformed, with the left shoulder a trifle higher than the right. Next rose before her, in memory's picture-gallery, the intricate and narrow thoroughfares the tall, grey houses, the huge cathedrals, and the public edifices, ancient in date and quaint in architecture, of a continental city; where new life had awaited her, still in connexion with the mis-shapen scholar: a new life, but feeding itself on time-worn materials, like a tuft of green moss on a crumbling wall. Lastly, in lieu of these shifting scenes, came back the rude market-place of the Puritan settlement, with all the townspeople assembled, and levelling their stern regards at Hester Prynne—yes, at herself—who stood on the scaffold of the pillory, an infant on her arm, and the letter A, in scarlet, fantastically embroidered

with gold thread, upon her bosom!

Could it be true? She clutched the child so fiercely to her breast that it sent forth a cry; she turned her eyes downward at the scarlet letter, and even touched it with her finger, to assure herself that the infant and the shame were real. Yes!—these were her realities—all else had vanished!

#### CHAPTER III

#### THE RECOGNITION

ROM this intense consciousness of being the object of severe and universal observation, the wearer of the scarlet letter was at length relieved, by discerning, on the outskirts of the crowd, a figure which irresistibly took possession of her thoughts. An Indian in his native garb was standing there; but the red men were not so infrequent visitors of the English settlements that one of them would have attracted any notice from Hester Prynne at such a time; much less would he have excluded all other objects and ideas from her mind. By the Indian's side, and evidently sustaining a companionship with him, stood a white man, clad in a strange disarray of civilized and savage costume.

He was small in stature, with a furrowed visage which as yet could hardly be termed aged. There was a remarkable intelligence in his features, as of a person who had so cultivated his mental part that it could not fail to mould the physical to itself, and become manifest by unmistakable tokens. Although, by a seemingly careless arrangement of his heterogeneous garb, he had endeavoured to conceal or abate the peculiarity, it was sufficiently evident to Hester Prynne that one of this man's shoulders rose higher than the other. Again, at the first instant of perceiving that thin visage, and the slight deformity of the figure, she pressed her infant to her bosom with so convulsive a force that the poor babe uttered another cry of pain. But the mother did not seem to hear it.

At his arrival in the market-place, and some time before she saw him, the stranger had bent his eyes on Hester Prynne. It was carelessly at first, like a man chiefly accustomed to look inward, and to whom external matters are of little value and import, unless they bear relation to something within his mind. Very soon, however, his look became keen and penetrative. A writhing horror twisted itself across his features, like a snake gliding swiftly over them, and making one little pause, with all its wreathed intervolutions in open sight. His face darkened with some powerful emotion, which, nevertheless, he so instantaneously controlled by an effort of his will, that, save at a single moment, its expression might have passed for calmness. After a brief space, the convulsion grew almost imperceptible, and finally subsided into the depths of his nature. When he found the eyes of Hester Prynne fastened on his own, and saw that she appeared to recognize him, he slowly and calmly raised his finger, made a gesture with it in the air, and laid it on his lips.

Then touching the shoulder of a townsman who stood near to him, he addressed him in a formal and courteous

manner:

"I pray you, good Sir," said he, "who is this woman?—and wherefore is she here set up to public shame?"

"You must needs be a stranger in this region, friend," answered the townsman, looking curiously at the questioner and his savage companion, "else you would surely have heard of Mistress Hester Prynne and her evil doings. She hath raised a great scandal, I promise you, in godly Master Dimmesdale's church."

"You say truly," replied the other; "I am a stranger, and have been a wanderer, sorely against my will. I have met with grievous mishaps by sea and land, and have been long held in bonds among the heathen-folk to the southward; and am now brought hither by this Indian to be redeemed out of my captivity. Will it please you, therefore, to tell me of Hester Prynne's—have I her name rightly?—of this woman's offences, and what has brought her to yonder scaffold?"

"Truly, friend; and methinks it must gladden your heart, after your troubles and sojourn in the wilderness," said the townsman, "to find yourself at length in a land where iniquity is searched out and punished in the sight of rulers and people, as here in our godly New England. Yonder woman, Sir, you must know, was the wife of a certain

learned man, English by birth, but who had long ago dwelt in Amsterdam, whence some good time agone he was minded to cross over and cast in his lot with us of the Massachusetts. To this purpose he sent his wife before him, remaining himself to look after some necessary affairs. Marry, good Sir, in some two years, or less, that the woman has been a dweller here in Boston, no tidings have come of this learned gentleman, Master Prynne; and his young wife, look you, being left to her own misguidance—"

"Ah!—aha!—I conceive you," said the stranger with a bitter smile. "So learned a man as you speak of should have learned this too in his books. And who, by your favour, Sir, may be the father of yonder babe—it is some three or four months old, I should judge—which Mistress

Prynne is holding in her arms?"

"Of a truth, friend, that matter remaineth a riddle; and the Daniel who shall expound it is yet a-wanting," answered the townsman. "Madame Hester absolutely refuseth to speak, and the magistrates have laid their heads together in vain. Peradventure the guilty one stands looking on at this sad spectacle, unknown of man, and forgetting that God sees him."

"The learned man," observed the stranger with another smile, "should come himself to look into the mystery."

"It behooves him well if he be still in life," responded the townsman. "Now, good Sir, our Massachusetts magistracy, bethinking themselves that this woman is youthful and fair, and doubtless was strongly tempted to her fall, and that, moreover, as is most likely, her husband may be at the bottom of the sea, they have not been bold to put in force the extremity of our righteous law against her. The penalty thereof is death. But in their great mercy and tenderness of heart they have doomed Mistress Prynne to stand only a space of three hours on the platform of the pillory, and then and thereafter, for the remainder of her natural life, to wear a mark of shame upon her bosom."

"A wise sentence!" remarked the stranger, gravely bowing his head. "Thus she will be a living sermon against sin, until the ignominious letter be engraved upon her tombstone. It irks me, nevertheless, that the partner of her

iniquity should not, at least, stand on the scaffold by her side. But he will be known!—he will be known!—he will be known!

He bowed courteously to the communicative townsman, and whispering a few words to his Indian attendant, they

both made their way through the crowd.

While this passed, Hester Prynne had been standing on her pedestal, still with a fixed gaze towards the strangerso fixed a gaze that, at moments of intense absorption, all other objects in the visible world seemed to vanish, leaving only him and her. Such an interview, perhaps, would have been more terrible than even to meet him as she now did, with the hot mid-day sun burning down upon her face, and lighting up its shame; with the scarlet token of infamy on her breast; with the sin-born infant in her arms; with a whole people, drawn forth as to a festival, staring at the features that should have been seen only in the quiet gleam of the fireside, in the happy shadow of a home, or beneath a matronly veil at church. Dreadful as it was, she was conscious of a shelter in the presence of these thousand witnesses. It was better to stand thus, with so many betwixt him and her, than to greet him face to face—they two alone. She fled for refuge, as it were, to the public exposure, and dreaded the moment when its protection should be withdrawn from her. Invoked in these thoughts, she scarcely heard a voice behind her until it had repeated her name more than once, in a loud and solemn tone, audible to the whole multitude.

"Hearken unto me, Hester Prynne!" said the voice.

It has already been noticed that directly over the platform on which Hester Prynne stood was a kind of balcony, or open gallery, appended to the meeting-house. It was the place whence proclamations were wont to be made, amidst an assemblage of the magistracy, with all the ceremonial that attended such public observances in those days. Here, to witness the scene which we are describing, sat Governor Bellingham himself with four sergeants about his chair, bearing halberds, as a guard of honour. He wore a dark feather in his hat, a border of embroidery on his cloak, and a black velvet tunic beneath—a gentleman advanced in

years, with a hard experience written in his wrinkles. He was not ill-fitted to be the head and representative of a community which owed its origin and progress, and its present state of development, not to the impulses of youth, but to the stern and tempered energies of manhood and the sombre sagacity of age; accomplishing so much, precisely because it imagined and hoped so little. The other eminent characters by whom the chief ruler was surrounded were distinguished by a dignity of mien, belonging to a period when the forms of authority were felt to possess the sacredness of Divine institutions. They were, doubtless, good men, just and sage. But, out of the whole human family, it would not have been easy to select the same number of wise and virtuous persons, who should be less capable of sitting in judgment on an erring woman's heart, and disentangling its mesh of good and evil, than the sages of rigid aspect towards whom Hester Prynne now turned her face. She seemed conscious, indeed, that whatever sympathy she might expect lay in the larger and warmer heart of the multitude; for, as she lifted her eyes towards the balcony, the unhappy woman grew pale, and trembled.

The voice which had called her attention was that of the reverend and famous John Wilson, the eldest clergyman of Boston, a great scholar, like most of his contemporaries in the profession, and withal a man of kind and genial spirit. This last attribute, however, had been less carefully developed than his intellectual gifts, and was, in truth, rather a matter of shame than self-congratulation with him. There he stood, with a border of grizzled locks beneath his skullcap, while his grey eyes, accustomed to the shaded light of his study, were winking, like those of Hester's infant, in the unadulterated sunshine. He looked like the darkly engraved portraits which we see prefixed to old volumes of sermons, and had no more right than one of those portraits would have to step forth, as he now did, and meddle with a question of human guilt, passion, and anguish.

"Hester Prynne," said the clergyman, "I have striven with my young brother here, under whose preaching of the Word you have been priviliged to sit"—here Mr. Wilson laid his hand on the shoulder of a pale young man beside him—"I have sought. I say, to persuade this godly youth, that he should deal with you, here in the face of Heaven, and before these wise and upright rulers, and in hearing of all the people, as touching the vileness and blackness of your sin. Knowing your natural temper better than I, he could the better judge what arguments to use, whether of tenderness or terror, such as might prevail over your hardness and obstinacy, insomuch that you should no longer hide the name of him who tempted you to this grievous fall. But he opposes to me-with a young man's over-softness, albeit wise beyond his years—that it were wronging the very nature of woman to force her to lav open her heart's secrets in such broad daylight, and in presence of so great a multitude. Truly, as I sought to convince him, the shame lay in the commission of the sin, and not in the showing of it forth. What say you to it, once again, brother Dimmesdale? Must it be thou, or I, that shall deal with this poor sinner's soul?"

There was a murmur among the dignified and reverend occupants of the balcony; and Governor Bellingham gave expression to its purport, speaking in an authoritative voice, although tempered with respect towards the youthful clergyman whom he addressed:

"Good Master Dimmesdale," said he, "the responsibility of this woman's soul lies greatly with you. It behoves you, therefore, to exhort her to repentance and to confession, as

a proof and consequence thereof.'

The directness of this appeal drew the eyes of the whole crowd upon the Reverend Mr. Dimmesdale—a young clergyman, who had come from one of the great English universities, bringing all the learning of the age into our wild forest land. His eloquence and religious fervour had already given the earnest of high eminence in his profession. He was a person of very striking aspect, with a white, lofty, and impending brow; large, brown, melancholy eyes, and a mouth which, unless when he forcibly compressed it, was apt to be tremulous, expressing both nervous sensibility and a vast power of self restraint. Notwithstanding his high native gifts and scholar-like attainments, there was an air about this young minister—an apprehensive, a startled, a half-frightened look—as of a being who felt himself quite astray,

and at a loss in the pathway of human existence, and could only be at ease in some seclusion of his own. Therefore, so far as his duties would permit, he trod in the shadowy bypaths, and thus kept himself simple and childlike, coming forth, when occasion was, with a freshness and fragrance, and dewy purity of thought, which, as many people said, affected them like the speech of an angel.

Such was the young man whom the Reverend Mr. Wilson and the Governor had introduced so openly to the public notice, bidding him speak, in the hearing of all men, to that mystery of a woman's soul, so sacred even in its pollution. The trying nature of his position drove the blood from his cheek, and made his lips tremulous.

"Speak to the woman, my brother," said Mr. Wilson. "It is of moment to her soul, and, therefore, as the worshipful Governor says, momentous to thine own, in whose charge hers is. Exhort her to confess the truth!"

The Reverend Mr. Dimmesdale bent his head, in silent prayer, as it seemed, and then came forward.

"Hester Prynne," said he, leaning over the balcony and looking down steadfastly into her eyes, "thou hearest what this good man says, and seest the accountability under which I labour. If thou feelest it to be for thy soul's peace, and that thy earthly punishment will thereby be made more effectual to salvation. I charge thee to speak out the name of thy fellow-sinner and fellow-sufferer! Be not silent from any mistaken pity and tenderness for him; for, believe me, Hester, though he were to step down from a high place, and stand there beside thee, on thy pedestal of shame, yet better were it so than to hide a guilty heart through life. What can thy silence do for him, except it tempt him-yea, compel him, as it were—to add hypocrisy to sin? Heaven hath granted thee an open ignominy, that thereby thou mayest work out an open triumph over the evil within thee and the sorrow without. Take heed how thou deniest to himwho, perchance, hath not the courage to grasp it for himself—the bitter, but wholesome, cup that is now presented to thy lips!"

The young pastor's voice was tremulously sweet, rich, deep, and broken. The feeling that it so evidently manifested,

rather than the direct purport of the words, caused it to vibrate within all hearts, and brought the listeners into one accord of sympathy. Even the poor baby at Hester's bosom was affected by the same influence, for it directed its hitherto vacant gaze towards Mr. Dimmesdale, and held up its little arms with a half-pleased, half-plaintive murmur. So powerful seemed the minister's appeal that the people could not believe but that Hester Prynne would speak out the guilty name, or else that the guilty one himself, in whatever high or lowly place he stood, would be drawn forth by an inward and inevitable necessity, and compelled to ascend the scaffold.

Hester shook her head.

"Woman, transgress not beyond the limits of Heaven's mercy!" cried the Reverend Mr. Wilson, more harshly than before. "That little babe hath been gifted with a voice, to second and confirm the counsel which thou hast heard. Speak out the name! That, and thy repentance, may avail to take the scarlet letter off thy breast."

"Never," replied Hester Prynne, looking, not at Mr. Wilson, but into the deep and troubled eyes of the younger clergyman. "It is too deeply branded. Ye cannot take it off. And would that I might endure his agony as well as

mine!"

"Speak, woman!" said another voice, coldly and sternly, proceeding from the crowd about the scaffold. "Speak; and give your child a father!"

"I will not speak!" answered Hester, turning pale as death, but responding to this voice, which she too surely recognised. "And my child must seek a heavenly father;

she shall never know an earthly one!"

"She will not speak!" murmured Mr. Dimmesdale, who, leaning over the balcony, with his hand upon his heart, had awaited the result of his appeal. He now drew back with a long respiration. "Wondrous strength and generosity of a woman's heart! She will not speak!"

Discerning the impracticable state of the poor culprit's mind, the elder clergyman, who had carefully prepared himself for the occasion, addressed to the multitude a discourse on sin, in all its branches, but with continual reference to the ignominious letter. So forcibly did he dwell upon this

symbol, for the hour or more during which his periods were rolling over the people's heads, that it assumed new terrors in their imagination, and seemed to derive its scarlet hue from the flames of the infernal pit. Hester Prynne, meanwhile, kept her place upon the pedestal of shame, with glazed eyes, and an air of weary indifference. She had borne that morning all that nature could endure; and as her temperament was not of the order that escapes from too intense suffering by a swoon, her spirit could only shelter itself beneath a stony crust of insensibility, while the faculties of animal life remained entire. In this state, the voice of the preacher thundered remorselessly, but unavailingly, upon her ears. The infant, during the latter portion of her ordeal, pierced the air with its wailings and screams; she strove to hush it mechanically, but seemed scarcely to sympathise with its trouble. With the same hard demeanour, she was led back to prison, and vanished from the public gaze within its iron-clamped portal. It was whispered by those who peered after her that the scarlet letter threw a lurid gleam along the dark passage-way of the interior.

#### CHAPTER IV

## THE INTERVIEW

A FTER her return to the prison, Hester Prynne was found to be in a state of nervous excitement, that demanded constant watchfulness, lest she should perpetrate violence on herself, or do some half-frenzied mischief to the poor babe. As night approached, it proving impossible to guell her insubordination by rebuke or threats of punishment, Master Brackett, the jailer, thought fit to introduce a physician. He described him as a man of skill in all Christian modes of physical science, and likewise familiar with whatever the savage people could teach in respect to medicinal herbs and roots that grew in the forest. To say the truth, there was much need of professional assistance, not merely for Hester herself, but still more urgently for the child—who, drawing its sustenance from the maternal bosom, seemed to have drank in with it all the turmoil, the anguish and despair, which pervaded the mother's system. It now writhed in convulsions of pain, and was a forcible type, in its little frame, of the moral agony which Hester Prynne had borne throughout the day.

Closely following the jailer into the dismal apartment, appeared that individual, of singular aspect, whose presence in the crowd had been of such deep interest to the wearer of the scarlet letter. He was lodged in the prison, not as suspected of any offence, but as the most convenient and suitable mode of disposing of him, until the magistrates should have conferred with the Indian sagamores respecting his ransom. His name was announced as Roger Chillingworth. The jailer, after ushering him into the room, remained a moment, marvelling at the comparative quiet that followed his entrance; for Hester Prynne had immediately become as still as death, although the child continued to moan.

60

"Prithee, friend, leave me alone with my patient," said the practitioner. "Trust me, good jailer, you shall briefly have peace in your house; and, I promise you, Mistress Prynne shall hereafter be more amenable to just authority than you may have found her heretofore."

"Nay, if your worship can accomplish that," answered Master Brackett, "I shall own you for a man of skill, indeed! Verily, the woman hath been like a possessed one; and there lacks little that I should take in hand, to drive Satan out

of her with stripes."

The stranger had entered the room with the characteristic quietude of the profession to which he announced himself as belonging. Nor did his demeanour change when the withdrawal of the prisonkeeper left him face to face with the woman, whose absorbed notice of him, in the crowd, had intimated so close a relation between himself and her. His first care was given to the child, whose cries, indeed, as she lay writhing on the trundle-bed, made it of peremptory necessity to postpone all other business to the task of soothing her. He examined the infant carefully, and then proceeded to unclasp a leathern case, which he took from beneath his dress. It appeared to contain medical preparations, one of which he mingled with a cup of water.

"My old studies in alchemy," observed he, "and my sojourn, for above a year past, among a people well versed in the kindly properties of simples, have made a better physician of me than many that claim the medical degree. Here, woman! The child is yours—she is none of mine—neither will she recognise my voice or aspect as a father's. Administer this draught, therefore, with thine own hand."

Hester repelled the offered medicine, at the same time gazing with strongly marked apprehension into his face.

"Wouldst thou avenge thyself on the innocent babe?"

whispered she.

"Foolish woman!" responded the physician, half coldly, half soothingly. "What should ail me to harm this misbegotten and miserable babe? The medicine is potent for good, and were it my child—yea, mine own, as well as thine!—I could do no better for it."

As she still hesitated, being, in fact, in no reasonable state of mind, he took the infant in his arms, and himself administered the draught. It soon proved its efficacy, and redeemed the leech's pledge. The moans of the little patient subsided; its convulsive tossings gradually ceased; and in a few moments, as is the custom of young children after relief from pain, it sank into a profound and dewy slumber. The physician, as he had a fair right to be termed, next bestowed his attention on the mother. With calm and intent scrutiny, he felt her pulse, looked into her eyes—a gaze that made her heart shrink and shudder, because so familiar, and yet so strange and cold—and, finally, satisfied with his investigation, proceeded to mingle another draught.

"I know not Lethe nor Nepenthe," remarked he; "but I have learned many new secrets in the wilderness, and here is one of them—a recipe that an Indian taught me, in requital of some lessons of my own, that were as old as Paracelsus. Drink it! It may be less soothing than a sinless conscience. That I cannot give thee. But it will calm the swell and heaving of thy passion, like oil thrown on the

waves of a tempestuous sea."

He presented the cup to Hester, who received it with a slow, earnest look into his face; not precisely a look of fear, yet full of doubt and questioning as to what his purposes

might be. She looked also at her slumbering child.

"I have thought of death," said she—"have wished for it—would even have prayed for it, were it fit that such as I should pray for anything. Yet, if death be in this cup, I bid thee think again, ere thou beholdest me quaff it. See!

it is even now at my lips."

"Drink, then," replied he, still with the same cold composure. "Dost thou know me so little, Hester Prynne? Are my purposes wont to be so shallow? Even if I imagine a scheme of vengeance, what could I do better for my object than to let thee live—than to give thee medicine against all harm and peril of life—so that this burning shame may still blaze upon thy bosom?" As he spoke, he laid his long forefinger on the scarlet letter, which forthwith seemed to scorch into Hester's breast, as if it had been red-hot. He noticed her involuntary gesture, and smiled. "Live, there-

fore, and bear about thy doom with thee, in the eyes of men and women—in the eves of him whom thou didst call thy husband—in the eyes of vonder child! And, that thou mayest live, take off this draught,"

Without further expostulation or delay, Hester Prynne drained the cup, and, at the motion of the man of skill, seated herself on the bed, where the child was sleeping; while he drew the only chair which the room afforded, and took his own seat beside her. She could not but tremble at these preparations; for she felt that-having now done all that humanity, or principle, or, if so it were, a refined cruelty, impelled him to do for the relief of physical suffering—he was next to treat with her as the man whom she had most deeply and irreparably injured.
"Hester," said he, "I ask not wherefore, nor how thou

hast fallen into the pit, or say, rather, thou hast ascended to the pedestal of infamy on which I found thee. The reason is not far to seek. It was my folly, and thy weakness. I-a man of thought-the book-worm of great libraries-a man already in decay, having given my best years to feed the hungry dream of knowledge-what had I to do with youth and beauty like thine own? Misshapen from my birth-hour, how could I delude myself with the idea that intellectual gifts might veil physical deformity in a young girl's fantasy? Men call me wise. If sages were ever wise in their own behoof, I might have foreseen all this. I might have known that, as I came out of the vast and dismal forest, and entered this settlement of Christian men, the very first object to meet my eyes would be thyself, Hester Prynne, standing up, a statue of ignominy, before the people. Nay, from the moment when we came down the old church-steps together, a married pair, I might have beheld the bale-fire of that scarlet letter blazing at the end of our path!"

"Thou knowest," said Hester-for, depressed as she was, she could not endure this last quiet stab at the token of her shame—"thou knowest that I was frank with thee. I felt no love, nor feigned any."

"True," replied he. "It was my folly! I have said it. But, up to that epoch of my life, I had lived in vain. The

world had been so cheerless! My heart was a habitation large enough for many guests, but lonely and chill, and without a household fire. I longed to kindle one! It seemed not so wild a dream-old as I was, and sombre as I was, and misshapen as I was—that the simple bliss, which is scattered far and wide, for all mankind to gather up, might yet be mine. And so, Hester, I drew thee into my heart, into its innermost chamber, and sought to warm thee by the warmth which thy presence made there!"

"I have greatly wronged thee," murmured Hester.
"We have wronged each other," answered he. "Mine was the first wrong, when I betrayed thy budding youth into a false and unnatural relation with my decay. Therefore, as a man who has not thought and philosophised in vain. I seek no vengeance, plot no evil against thee. Between thee and me, the scale hangs fairly balanced. Hester, the man lives who has wronged us both! is he?"

"Ask me not?" replied Hester Prynne, looking firmly into his face. "That thou shalt never know!"

"Never, sayest thou?" rejoined he, with a smile of dark and self-relying intelligence. "Never know him! Believe me, Hester, there are few things-whether in the outward world, or, to a certain depth, in the invisible sphere of thought-few things hidden from the man who devotes himself earnestly and unreservedly to the solution of a mystery. Thou mayest cover up thy secret from the prying multitude. Thou mayest conceal it, too, from the ministers and magistrates, even as thou didst this day, when they sought to wrench the name out of thy heart, and give thee a partner on thy pedestal. But, as for me, I come to the inquest with other senses than they possess. I shall seek this man, as I have sought truth in books: as I have sought gold in alchemy. There is a sympathy that will make me conscious of him. I shall see him tremble. I shall feel myself shudder. suddenly and unawares. Sooner or later, he must needs be mine."

The eyes of the wrinkled scholar glowed so intensely upon her, that Hester Prynne clasped her hand over her heart. dreading lest he should read the secret there at once.

"Thou wilt not reveal his name? Not the less he is mine." resumed he, with a look of confidence, as if destiny were at one with him. "He bears no letter of infamy wrought into his garment, as thou dost, but I shall read it on his heart. Yet fear not for him! Think not that I shall interfere with Heaven's own method of retribution, or, to my own loss, betray him to the gripe of human law. Neither do thou imagine that I shall contrive aught against his life; no, nor against his fame, if, as I judge, he be a man of fair repute. Let him live! Let him hide himself in outward honour, if he may! Not the less he shall be mine!"

"Thy acts are like mercy," said Hester, bewildered and

appalled; "but thy words interpret thee as a terror!"

"One thing, thou that wast my wife, I would enjoin upon thee," continued the scholar. "Thou hast kept the secret of thy paramour. Keep, likewise, mine! There are none in this land that know me. Breathe not to any human soul that thou didst ever call me husband! Here, on this wild outskirt of the earth, I shall pitch my tent; for, elsewhere a wanderer, and isolated from human interests, I find here a woman, a man, a child, amongst whom and myself there exist the closest ligaments. No matter whether of love or hate: no matter whether of right or wrong! Thou and thine, Hester Prynne, belong to me. My home is where thou art and where he is. But betray me not!"

"Wherefore dost thou desire it?" inquired Hester, shrinking, she hardly knew why, from this secret bond. "Why not

announce thyself openly, and cast me off at once?"

"It may be," he replied, "because I will not encounter the dishonour that besmirches the husband of a faithless woman. It may be for other reasons. Enough, it is my purpose to live and die unknown. Let, therefore, thy husband be to the world as one already dead, and of whom no tidings shall ever come. Recognise me not, by word, by sign, by look! Breathe not the secret, above all, to the man thou wottest of. Shouldst thou fail me in this, beware! His fame, his position, his life will be in my hands. Beware!"

"I will keep thy secret, as I have his," said Hester.

"Swear it!" rejoined he.

"And now, Mistress Prynne," said old Roger Chillingworth, as he was hereafter to be named, "I leave thee alone: alone with thy infant and the scarlet letter! How is it, Hester? Doth thy sentence bind thee to wear the token in thy sleep? Art thou not afraid of nightmares and hideous dreams?"

"Why dost thou smile so at me?" inquired Hester, troubled at the expression of his eyes. "Art thou like the Black Man that haunts the forest round about us? Hast thou enticed me into a bond that will prove the ruin of my soul?"

"Not thy soul," he answered, with another smile. "No,

not thine!"

#### CHAPTER V

## HESTER AT HER NEEDLE

ESTER PRYNNE'S term of confinement was now at an end. Her prison-door was thrown open, and she came forth into the sunshine, which, falling on all alike, seemed, to her sick and morbid heart, as if meant for no other purpose than to reveal the scarlet letter on her breast. Perhaps there was a more real torture in her first unattended footsteps from the threshold of the prison than even in the procession and spectacle that have been described, where she was made the common infamy, at which all mankind was summoned to point its finger. Then, she was supported by an unnatural tension of the nerves, and by all the combative energy of her character, which enabled her to convert the scene into a kind of lurid triumph. It was, moreover, a separate and insulated event, to occur but once in her lifetime, and to meet which, therefore, reckless of economy, she might call up the vital strength that would have sufficed for many quiet years. The very law that condemned her-a giant of stern features, but with vigour to support, as well as to annihilate, in his iron arm—had held her up through the terrible ordeal of her ignominy. But now, with this unattended walk from her prison door, began the daily custom; and she must either sustain and carry it forward by the ordinary resources of her nature, or sink beneath it. She could no longer borrow from the future to help that through the present grief. To-morrow would bring its own trial with it; so would the next day, and so would the next: each its own trial, and yet the very same that was now so unutterably grievous to be borne. The days of the far-off future would toil onward, still with the same burden for her to take up, and bear along with her, but never to fling down; for the accumulating days and added years would pile up their misery upon the

67

heap of shame. Throughout them all, giving up her individuality, she would become the general symbol at which the preacher and moralist might point, and in which they might vivify and embody their images of woman's frailty and sinful passion. Thus the young and pure would be taught to look at her, with the scarlet letter flaming on her breast—at her, the child of honourable parents—at her, the mother of a babe that would hereafter be a woman—at her, who had once been innocent—as the figure, the body, the reality of sin. And over her grave, the infamy that she must carry thither would be her only monument.

It may seem marvellous that, with the world before herkept by no restrictive clause of her condemnation within the limits of the Puritan settlement, so remote and so obscure free to return to her birth-place, or to any other European land, and there hide her character and identity under a new exterior, as completely as if emerging into another state of being-and having also the passes of the dark, inscrutable forest open to her, where the wildness of her nature might assimilate itself with a people whose customs and life were alien from the law that had condemned her-it may seem marvellous that this woman should still call that place her home, where, and where only, she must needs be the type of shame. But there is a fatality, a feeling so irresistible and inevitable that it has the force of doom, which almost invariably compels human beings to linger around and haunt, ghost-like, the spot where some great and marked event has given the colour to their lifetime; and, still the more irresistibly, the darker the tinge that saddens it. Her sin, her ignominy, were the roots which she had struck into the soil. It was as if a new birth, with stronger assimilations than the first, had converted the forest-land, still so uncongenial to every other pilgrim and wanderer, into Hester Prynne's wild and dreary, but life-long home. All other scenes of earth-even that village of rural England, where happy infancy and stainless maidenhood seemed yet to be in her mother's keeping, like garments put off long agowere foreign to her, in comparison. The chain that bound her here was of iron links, and galling to her inmost soul, but could never be broken.

It might be, too-doubtless it was so, although she hid the secret from herself, and grew pale whenever it struggled out of her heart, like a serpent from its hole-it might be that another feeling kept her within the scene and pathway that had been so fatal. There dwelt, there trode, the feet of one with whom she deemed herself connected in a union that, unrecognised on earth, would bring them together before the bar of final judgment, and make that their marriagealtar, for a joint futurity of endless retribution. Over and over again, the tempter of souls had thrust this idea upon Hester's contemplation, and laughed at the passionate and desperate joy with which she seized, and then strove to cast it from her. She barely looked the idea in the face, and hastened to bar it in its dungeon. What she compelled herself to believe—what, finally, she reasoned upon as her motive for continuing a resident of New England—was half a truth, and half a self-delusion. Here, she said to herself, had been the scene of her guilt, and here should be the scene of her earthly punishment; and so, perchance, the torture of her daily shame would at length purge her soul, and work out another purity than that which she had lost: more saint-like, because the result of martyrdom.

Hester Prynne, therefore, did not flee. On the outskirts of the town, within the verge of the peninsula, but not in close vicinity to any other habitation, there was a small thatched cottage. It had been built by an earlier settler, and abandoned, because the soil about it was too sterile for cultivation, while its comparative remoteness put it out of the sphere of that social activity which already marked the habits of the emigrants. It stood on the shore, looking across a basin of the sea at the forest-covered hills, towards the west. A clump of scrubby trees, such as alone grew on the peninsula, did not so much conceal the cottage from view, as seem to denote that here was some object which would fain have been, or at least ought to be, concealed. In this little lonesome dwelling, with some slender means that she possessed, and by the licence of the magistrates, who still kept an inquisitorial watch over her, Hester established herself, with her infant child. A mystic shadow of suspicion immediately attached itself to the spot. Chil-

dren, too young to comprehend wherefore this woman should be shut out from the sphere of human charities, would creep nigh enough to behold her plying her needle at the cottagewindow, or standing in the doorway, or labouring in her little garden, or coming forth along the pathway that led townward, and, discerning the scarlet letter on her breast, would scamper off with a strange contagious fear.

Lonely as was Hester's situation, and without a friend on earth who dared to show himself, she, however, incurred no risk of want. She possessed an art that sufficed, even in a land that afforded comparatively little scope for its exercise, to supply food for her thriving infant and herself. It was the art,-then, as now, almost the only one within a woman's grasp-of needle-work. She bore on her breast. in the curiously embroidered letter, a specimen of her delicate and imaginative skill, of which the dames of a court might gladly have availed themselves, to add the richer and more spiritual adornment of human ingenuity to their fabrics of silk and gold. Here, indeed, in the sable simplicity that generally characterised the Puritanic modes of dress, there might be an infrequent call for the finer productions of her handiwork. Yet the taste of the age, demanding whatever was elaborate in compositions of this kind, did not fail to extend its influence over our stern progenitors, who had cast behind them so many fashions which it might seem harder to dispense with. Public ceremonies, such as ordinations, the installation of magistrates, and all that could give majesty to the forms in which a new government manifested itself to the people, were, as a matter of policy, marked by a stately and well-conducted ceremonial, and a sombre, but vet a studied magnificence. Deep ruffs, painfully wrought bands, and gorgeously embroidered gloves, were all deemed necessary to the official state of men assuming the reins of power, and were readily allowed to individuals dignified by rank or wealth, even while sumptuary laws forbade these and similar extravagances to the plebeian order. In the array of funerals, too-whether for the apparel of the dead body, or to typify, by manifold emblematic devices of sable cloth and snowy lawn, the sorrow of the survivorsthere was a frequent and characteristic demand for such labour as Hester Prynne could supply. Baby linen—for babies then wore robes of state—afforded still another possibility of toil and emolument.

By degrees, not very slowly, her handiwork became what would now be termed the fashion. Whether from commiseration for a woman of so miserable a destiny; or from the morbid curiosity that gives a fictitious value even to common or worthless things; or by whatever other intangible circumstances was then, as now, sufficient to bestow, on some persons, what others might seek in vain; or because Hester really filled a gap which must otherwise have remained vacant: it is certain that she had ready and fairly requited employment for as many hours as she saw fit to occupy with her needle. Vanity, it may be, chose to mortify itself, by putting on, for ceremonials of pomp and state, the garments that had been wrought by her sinful hands. Her needlework was seen on the ruff of the Governor: military men wore it on their scarfs, and the minister on his band; it decked the baby's little cap; it was shut up, to be mildewed and moulder away, in the coffins of the dead. But it is not recorded that in a single instance, her skill was called in to embroider the white veil which was to cover the pure blushes of a bride. The exception indicated the ever relentless vigour with which society frowned upon her sin.

Hester sought not to acquire anything beyond a subsistence, of the plainest and most ascetic description, for herself, and a simple abundance for her child. Her own dress was of the coarsest materials and the most sombre hue. with only that one ornament—the scarlet letter—which it was her doom to wear. The child's attire, on the other hand, was distinguished by a fanciful, or, we may rather say, a fantastic ingenuity, which served, indeed, to heighten the airy charm that early began to develop itself in the little girl, but which appeared to have also a deeper meaning. We may speak further of it hereafter. Except for that small expenditure in the decoration of her infant, Hester bestowed all her superfluous means in charity, on wretches less miserable than herself, and who not unfrequently insulted the hand that fed them. Much of the time, which she might readily have applied to the better efforts of her art, she employed in making coarse garments for the poor. It is probable that there was an idea of penance in this mode of occupation, and that she offered up a real sacrifice of enjoyment in devoting so many hours to such rude handiwork. She had in her nature a rich, voluptuous, Oriental characteristic—a taste for the gorgeously beautiful, which, save in the exquisite productions of her needle, found nothing else, in all the possibilities of her life, to exercise itself upon. Women derive a pleasure, incomprehensible to the other sex, from the delicate toil of the needle. To Hester Prynne it might have been a mode of expressing and therefore soothing, the passion of her life. Like all other joys, she rejected it as sin. This morbid meddling of conscience with an immaterial matter betokened, it is to be feared, no genuine and steadfast penitence, but something doubtful, something that might be deeply wrong beneath.

In this matter. Hester Prynne came to have a part to perform in the world. With her native energy of character and rare capacity, it could not entirely east her off, although it had set a mark upon her, more intolerable to a woman's heart than that which branded the brow of Cain. In all her intercourse with society, however, there was nothing that made her feel as if she belonged to it. Every gesture, every word, and even the silence of those with whom she came in contact, implied, and often expressed, that she was banished, and as much alone as if she inhabited another sphere, or communicated with the common nature by other organs and senses than the rest of human kind. She stood apart from moral interests, yet close beside them, like a ghost that revisits the familiar fireside, and can no longer make itself seen or felt; no more smile with the household joy, nor mourn with the kindred sorrow; or, should it succeed in manifesting its forbidden sympathy, awakening only terror and horrible repugnance. These emotions, in fact, and its bitterest scorn besides, seemed to be the sole portion that she retained in the universal heart. It was not an age of delicacy; and her position, although she understood it well, and was in little danger of forgetting it, was often brought before her vivid self-perception, like a new anguish. by the rudest touch upon the tenderest spot. The poor, as

we have already said, whom she sought out to be the objects of her bounty, often reviled the hand that was stretched forth to succour them. Dames of elevated rank, likewise, whose doors she entered in the way of her occupation, were accustomed to distil drops of bitterness into her heart, sometimes through that alchemy of quiet malice, by which women can concoct a subtle poison from ordinary trifles; and sometimes, also, by a coarser expression, that fell upon the sufferer's defenceless breast like a rough blow upon an ulcerated wound. Hester had schooled herself long and well; and she never responded to these attacks, save by a flush of crimson that rose irrepressibly over her pale cheek, and again subsided into the depths of her bosom. She was patient—a martyr, indeed—but she forebore to pray for enemies, lest, in spite of her forgiving aspirations, the words of the blessing should stubbornly twist themselves into a curse.

Continually, and in a thousand other ways, did she feel the innumerable throbs of anguish that had been so cunningly contrived for her by the undying, the ever-active sentence of the Puritan tribunal. Clergymen paused in the streets, to address words of exhortation, that brought a crowd, with its mingled grin and frown, around the poor, sinful woman. If she entered a church, trusting to share the Sabbath smile of the Universal Father, it was often her mishan to find herself the text of the discourse. She grew to have a dread of children; for they had imbibed from their parents a vague idea of something horrible in this dreary woman gliding silently through the town, with never any companion but one only child. Therefore, first allowing her to pass, they pursued her at a distance with shrill cries, and the utterances of a word that had no distinct purport to their own minds, but was none the less terrible to her, as proceeding from lips that babbled it unconsciously. It seemed to argue so wide a diffusion of her shame, that all nature knew of it: it could have caused her no deeper pang had the leaves of the trees whispered the dark story among themselves-had the summer breeze murmured about it-had the wintry blast shrieked it aloud! Another peculiar torture was felt in the gaze of a new eye. When strangers looked curiously at the scarlet letter—and none ever failed to do so—they branded it afresh in Hester's soul; so that, oftentimes, she could scarcely refrain, yet always did refrain, from covering the symbol with her hand. But then, again, an accustomed eye had likewise its own anguish to inflict. Its cool stare of familiarity was intolerable. From first to last, in short, Hester Prynne had always this dreadful agony in feeling a human eye upon the token; the spot never grew callous; it seemed, on the contrary, to grow more sensitive with daily torture.

But sometimes, once in many days, or perchance in many months, she felt an eye—a human eye—upon the ignominious brand, that seemed to give a momentary relief, as if half of her agony were shared. The next instant, back it all rushed again, with still a deeper throb of pain; for, in that brief interval, she had sinned anew. Had Hester sinned alone?

Her imagination was somewhat affected, and, had she been of a softer moral and intellectual fibre would have been still more so, by the strange and solitary anguish of her life, Walking to and fro, with those lonely footsteps, in the little world with which she was outwardly connected, it now and then appeared to Hester-if altogether fancy, it was nevertheless too potent to be resisted—she felt or fancied, then. that the scarlet letter had endowed her with a new sense. She shuddered to believe, yet could not help believing, that it gave her a sympathetic knowledge of the hidden sin in other hearts. She was terror-stricken by the revelations that were thus made. What were they? Could they be other than the insidious whispers of the bad angel, who would fain have persuaded the struggling woman, as yet only half his victim, that the outward guise of purity was but a lie, and that, if truth were everywhere to be shown, a scarlet letter would blaze forth on many a bosom besides Hester Prynne's? Or, must she receive those intimations—so obscure, yet so distinct—as truth? In all her miserable experience, there was nothing else so awful and so loathsome as this sense. It perplexed, as well as shocked her, by the irreverent inopportuneness of the occasions that brought it into vivid action. Sometimes the red infamy upon her breast would give a sympathetic throb, as she

passed near a venerable minister or magistrate, the model of piety and justice, to whom that age of antique reverence looked up, as to a mortal man in fellowship with angels. "What evil thing is at hand?" would Hester say to herself. Lifting her reluctant eyes, there would be nothing human within the scope of view, save the form of this earthly saint! Again, a mystic sisterhood would contumaciously assert itself, as she met the sanctified frown of some matron, who, according to the rumour of all tongues, had kept cold snow within her bosom throughout life. That unsunned snow in the matron's bosom, and the burning shame on Hester Prynne's—what had the two in common? Or, once more, the electric thrill would give her warning—"Behold Hester, here is a companion!" and, looking up, she would detect the eyes of a young maiden glancing at the scarlet letter, shyly and aside, and quickly averted, with a faint, chill crimson in her cheeks as if her purity were somewhat sullied by that momentary glance. O Fiend, whose talisman was that fatal symbol, wouldst thou leave nothing, whether in youth or age, for this poor sinner to revere?—such loss of faith is ever one of the saddest results of sin. Be it accepted as a proof that all was not corrupt in this poor victim of her own frailty, and man's hard law, that Hester Prynne yet struggled to believe that no fellow-mortal was guilty like herself.

The vulgar, who, in those dreary old times, were always contributing a grotesque horror to what interested their imaginations, had a story about the scarlet letter which we might readily work up into a terrific legend. They averred that the symbol was not mere scarlet cloth, tinged in an earthly dye-pot, but was red-hot with infernal fire, and could be seen glowing all alight whenever Hester Prynne walked abroad in the night-time. And we must needs say it seared Hester's bosom so deeply, that perhaps there was more truth in the rumour than our modern incredulity may be inclined to admit.

# CHAPTER VI

#### PEARL

E have as yet hardly spoken of the infant: that little creature, whose innocent life had sprung, by inscrutable decree of Providence, a lovely and immortal flower, out of the rank luxuriance of a guilty pas-How strange it seemed to the sad woman, as she watched the growth, and the beauty that became every day more brilliant, and the intelligence that threw its quivering sunshine over the tiny features of this child! Her Pearl!for so had Hester called her; not as a name expressive of her aspect, which had nothing of the calm, white, unimpassioned lustre that would be indicated by the comparison. But she named the infant "Pearl," as being of great pricepurchased with all she had-her mother's only treasure! How strange, indeed! Man had marked this woman's sin by a scarlet letter, which had such potent and disastrous efficacy that no human sympathy could reach her, save it were sinful like herself. God, as a direct consequence of the sin which man thus punished, had given her a lovely child, whose place was on that same dishonoured bosom, to connect her parent for ever with the race and descent of mortals, and to be finally a blessed soul in heaven! Yet these thoughts affected Hester Prynne less with hope than apprehension. She knew that her deed had been evil; she could have no faith, therefore, that its result would be good. Day after day she looked fearfully into the child's expanding nature, ever dreading to detect some dark and wild peculiarity that should correspond with the guiltiness to which she owed her being.

Certainly there was no physical defect. By its perfect shape, its vigour, and its natural dexterity in the use of all its untried limbs, the infant was worthy to have been brought forth in Eden: worthy to have been left there to be the plaything of the angels after the world's first parents were driven out. The child had a native grace which does not invariably co-exist with faultless beauty; its attire, however simple, always impressed the beholder as if it were the very garb that precisely became it best. But little Pearl was not clad in rustic weeds. Her mother, with a morbid purpose that may be better understood hereafter, had bought the richest tissues that could be procured, and allowed her imaginative faculty its full play in the arrangement and decoration of the dresses which the child wore before the public eve. So magnificent was the small figure when thus arrayed, and such was the splendour of Pearl's own proper beauty, shining through the gorgeous robes which might have extinguished a paler loveliness, that there was an absolute circle of radiance around her on the darksome cottage floor. And yet a russet gown, torn and soiled with the child's rude play, made a picture of her just as perfect. Pearl's aspect was imbued with a spell of infinite variety; in this one child there were many children, comprehending the full scope between the wild-flower prettiness of a peasant-baby, and the pomp, in little, of an infant princess. Throughout all, however, there was a trait of passion, a certain depth of hue, which she never lost; and if, in any of her changes, she had grown fainter or paler, she would have ceased to be herself—it would have been no longer Pearl!

This outward mutability indicated, and did not more than fairly express, the various properties of her inner life. Her nature appeared to possess depth, too, as well as variety; but—or else Hester's fears deceived her—it lacked reference and adaptation to the world into which she was born. The child could not be made amenable to rules. In giving her existence a great law had been broken; and the result was a being whose elements were perhaps beautiful and brilliant, but all in disorder, or with an order peculiar to themselves, amidst which the point of variety and arrangement was difficult or impossible to be discovered. Hester could only account for the child's character—and even then most vaguely and imperfectly—by recalling what she herself had been during that momentous period while Pearl was imbibing her soul from the spiritual world, and her bodily frame

from its material of earth. The mother's impassioned state had been the medium through which were transmitted to the unborn infant the rays of its moral life; and, however white and clear originally, they had taken the deep stains of crimson and gold, the fiery lustre, the black shadow, and the untempered light of the intervening substance. Above all, the warfare of Hester's spirit at that epoch was perpetuated in Pearl. She could recognize her wild, desperate, defiant mood, the flightiness of her temper, and even some of the very cloud-shapes of gloom and despondency that had brooded in her heart. They were now illuminated by the morning radiance of a young child's disposition, but, later in the day of earthly existence, might be prolific of the storm and whirlwind.

The discipline of the family in those days was of a far more rigid kind than now. The frown, the harsh rebuke, the frequent application of the rod, enjoined by Scriptural authority, were used, not merely in the way of punishment for actual offences, but as a wholesome regimen for the growth and promotion of all childish virtues. Hester Prynne, nevertheless, the loving mother of this one child, ran little risk of erring on the side of undue severity. Mindful, however, of her own errors and misfortunes, she early sought to impose a tender but strict control over the infant immortality that was committed to her charge. But the task was beyond her skill. After testing both smiles and frowns, and proving that neither mode of treatment possessed any calculable influence, Hester was ultimately compelled to stand aside and permit the child to be swaved by her own impulses. Physical compulsion or restraint was effectual, of course, while it lasted. As to any other kind of discipline, whether addressed to her mind or heart, little Pearl might or might not be within its reach, in accordance with the caprice that ruled the moment. Her mother, while Pearl was yet an infant, grew acquainted with a certain peculiar look, that warned her when it would be labour thrown away to insist, persuade, or plead. It was a look so intelligent, yet inexplicable, so perverse, sometimes so malicious, but generally accompanied by a wild flow of spirits, that Hester could not help questioning at such moments whether Pearl was a

human child. She seemed rather an airy sprite, which, after playing its fantastic sports for a little while upon the cottage floor, would flit away with a mocking smile. Whenever that look appeared in her wild, bright, deeply black eyes, it invested her with a strange remoteness and intangibility: it was as if she were hovering in the air, and might vanish, like a glimmering light that comes we know not whence, and goes we know not whither. Beholding it, Hester was constrained to rush towards the child—to pursue the little elf in the flight which she invariably began—to snatch her to her bosom with a close pressure and earnest kisses—not so much from overflowing love as to assure herself that Pearl was flesh and blood, and not utterly delusive. But Pearl's laugh, when she was caught, though full of merriment and music, made her mother more doubtful than before.

Heart-smitten at this bewildering and baffling spell, that so often came between herself and her sole treasure, whom she had bought so dear, and who was all her world, Hester sometimes burst into passionate tears. Then, perhaps—for there was no foreseeing how it might affect her—Pearl would frown, and clench her little fist, and harden her small features into a stern, unsympathising look of discontent. Not seldom she would laugh anew, and louder than before, like a thing incapable and unintelligent of human sorrow. Or-but this more rarely happened—she would be convulsed with a rage of grief, and sob out her love for her mother in broken words, and seem intent on proving that she had a heart by breaking it. Yet Hester was hardly safe in confiding herself to that gusty tenderness: it passed as suddenly as it came. Brooding over all these matters, the mother felt like one who has evoked a spirit, but, by some irregularity in the process of conjugation, has failed to win the master-word that should control this new and incomprehensible intelligence. Her only real comfort was when the child lay in the placidity of sleep. Then she was sure of her, and tasted hours of quiet, sad, delicious happiness; until-perhaps with that perverse expression glimmering from beneath her opening lidslittle Pearl awoke!

How soon—with what strange rapidity, indeed!—did Pcarl arrive at an age that was capable of social intercourse

beyond the mother's ever-ready smile and nonsense-words! And then what a happiness would it have been could Hester Prynne have heard her clear, bird-like voice mingling with the uproar of other childish voices, and have distinguished and unravelled her own darling's tones, amid all the entangled outery of a group of sportive children! But this could never be. Pearl was a born outcast of the infantile world. An imp of evil, emblem and product of sin, she had no right among christened infants. Nothing was more remarkable than the instinct, as it seemed, with which the child comprehended her loneliness: the destiny that had drawn an inviolable circle round about her: the whole peculiarity, in short, of her position in respect to other children. Never since her release from prison had Hester met the public gaze without her. In all her walks about the town, Pearl, too, was there: first as the babe in arms, and afterwards as the little girl, small companion of her mother, holding a fore-finger with her whole grasp, and tripping along at the rate of three or four footsteps to one of Hester's. She saw the children of the settlement on the grassy margin of the street, or at the domestic thresholds, disporting themselves in such grim fashions as the Puritanic nurture would permit! playing at going to church, perchance, or at scourging Ouakers, or taking scalps in a sham fight with the Indians, or scaring one another with freaks of imitative witchcraft. Pearl saw, and gazed intently, but never sought to make acquaintance. If spoken to, she would not speak again. If the children gathered about her, as they sometimes did. Pearl would grow positively terrible in her puny wrath, snatching up stones to fling at them, with shrill, incoherent exclamations, that made her mother tremble, because they had so much the sound of a witch's anathemas in some unknown tongue.

The truth was, that the little Puritans, being of the most intolerant brood that ever lived, had got a vague idea of something outlandish, unearthly, or at variance with ordinary fashions, in the mother and child, and therefore scorned them in their hearts, and not unfrequently reviled them with their tongues. Pearl felt the sentiment, and requited it with the bitterest hatred that can be supposed to rankle in a child-

ish bosom. These outbreaks of a fierce temper had a kind of value, and even comfort for the mother; because there was at least an intelligible earnestness in the mood, instead of the fitful caprice that so often thwarted her in the child's manifestations. It appalled her, nevertheless, to discern here, again, a shadowy reflection of the evil that had existed in herself. All this enmity and passion had Pearl inherited, by inalienable right, out of Hester's heart. Mother and daughter stood together in the same circle of seclusion from human society; and in the nature of the child seemed to be perpetuated those unquiet elements that had distracted Hester Prynne before Pearl's birth, but had since begun to be soothed away by the softening influences of maternity.

At home, within and around her mother's cottage, Pearl wanted not a wide and various circle of acquaintance. The spell of life went forth from her ever-creative spirit, and communicated itself to a thousand objects, as a torch kindles a flame wherever it may be applied. The unlikeliest materials—a stick, a bunch of rags, a flower—were the puppets of Pearl's witchcraft, and, without undergoing any outward change, became spiritually adapted to whatever drama occupied the stage of her inner world. Her one baby-voice served a multitude of imaginary personages, old and young, to talk withal. The pine-trees, aged, black, and solemn, and flinging groans and other melancholy utterances on the breeze, needed little transformation to figure as Puritan elders: the ugliest weeds of the garden were their children, whom Pearl smote down and uprooted most unmercifully. It was wonderful, the vast variety of forms into which she threw her intellect, with no continuity, indeed, but darting up and dancing, always in a state of preternatural activity soon sinking down, as if exhausted by so rapid and feverish a tide of life-and succeeded by other shapes of a similar wild energy. It was like nothing so much as the phantasmagoric play of the northern lights. In the mere exercise of the fancy, however, and the sportiveness of a growing mind, there might be a little more than was observable in other children of bright faculties; except as Pearl, in the dearth of human playmates, was thrown more upon the visionary throng which she created. The singularity lay in the hostile feelings with which the child regarded all these offsprings of her own heart and mind. She never created a friend, but seemed always to be sowing broadcast the dragon's teeth, whence sprung a harvest of armed enemies, against whom she rushed to battle. It was inexpressibly sad—then what depth of sorrow to a mother, who felt in her own heart the cause!—to observe, in one so young, this constant recognition of an adverse world, and so fierce a training of the energies that were to make good her cause in the contest that must ensue.

Gazing at Pearl, Hester Prynne often dropped her work upon her knees, and cried out with an agony which she would fain have hidden, but which made utterance for itself betwixt speech and a groan—"O Father in Heaven—if Thou art still my Father—what is this being which I have brought into the world?" And Pearl, overhearing the ejaculation, or aware through some more subtile channel, of those throbs of anguish, would turn her vivid and beautiful little face upon her mother, smile with sprite-like intelligence, and resume her play.

One peculiarity of the child's deportment remains yet to be told. The very first thing which she had noticed in her life, was-what?-not the mother's smile, responding to it, as other babies do, by that faint, embryo smile of the little mouth, remembered so doubtfully afterwards, and with such fond discussion whether it were indeed a smile. By no means! But that first object of which Pearl seemed to become aware was-shall we say it?-the scarlet letter on Hester's bosom! One day, as her mother stooped over the cradle, the infant's eyes had been caught by the glimmering of the gold embroidery about the letter; and putting up her little hand she grasped at it, smiling, not doubtfully, but with a decided gleam, that gave her face the look of a much older child. Then, gasping for breath, did Hester Prynne clutch the fatal token, instinctively endeavouring to tear it away, so infinite was the torture inflicted by the intelligent touch of Pearl's baby-hand. Again, as if her mother's agonised gesture were meant only to make sport for her, did little Pearl look into her eyes, and smile. From that epoch, except

when the child was asleep, Hester had never felt a moment's safety: not a moment's calm enjoyment of her. Weeks, it is true, would sometimes elapse, during which Pearl's gaze might never once be fixed upon the scarlet letter; but then, again, it would come at unawares, like the stroke of sudden death, and always with that peculiar smile and odd expression of the eyes.

Once this freakish, elvish cast came into the child's eyes while Hester was looking at her own image in them, as mothers are fond of doing; and suddenly—for women in solitude, and with troubled hearts, are pestered with unaccountable delusions—she fancied that she beheld, not her own miniature portrait, but another face in the small black mirror of Pearl's eye. It was a face, fiend-like, full of smiling malice, yet bearing the semblance of features that she had known full well, though seldom with a smile, and never with malice in them. It was as if an evil spirit possessed the child, and had just then peeped forth in mockery. Many a time afterwards had Hester been tortured, though less vividly, by the same illusion.

In the afternoon of a certain summer's day, after Pearl grew big enough to run about, she amused herself with gathering handfuls of wild flowers, and flinging them, one by one, at her mother's bosom; dancing up and down like a little elf whenever she hit the scarlet letter. Hester's first motion had been to cover her bosom with her clasped hands. But whether from pride or resignation, or a feeling that her penance might best be wrought out by this unutterable pain, she resisted the impulse, and sat erect, pale as death, looking sadly into little Pearl's wild eyes. Still came the battery of flowers, almost invariably hitting the mark, and covering the mother's breast with hurts for which she could find no balm in this world, nor knew how to seek it in another. At last, her shot being all expended, the child stood still and gazed at Hester, with that little laughing image of a fiend peeping out—or, whether it peeped or no, her mother so imagined it—from the unsearchable abyss of her black eyes.

"Child, what art thou?" cried the mother.

<sup>&</sup>quot;Oh, I am your little Pearl!" answered the child.

But while she said it, Pearl laughed, and began to dance up and down with the humoursome gesticulation of a little imp, whose next freak might be to fly up the chimney.

"Art thou my child, in very truth?" asked Hester.

Nor did she put the question altogether idly, but, for the moment, with a portion of genuine earnestness; for, such was Pearl's wonderful intelligence, that her mother half doubted whether she were not acquainted with the secret spell of her existence, and might not now reveal herself.

"Yes; I am little Pearl!" repeated the child, continuing

her antics.

"Thou art not my child! Thou art no Pearl of mine!" said the mother half playfully: for it was often the case that a sportive impulse came over her in the midst of her deepest suffering. "Tell me, then, what thou art, and who sent thee hither?"

"Tell me, mother!" said the child, seriously, coming up to Hester, and pressing herself close to her knees. "Do thou

tell me!"

"Thy Heavenly Father sent thee!" answered Hester

Prynne.

But she said it with a hesitation that did not escape the acuteness of the child. Whether moved only by her ordinary freakishness, or because an evil spirit prompted her, she put up her small forefinger and touched the scarlet letter.

"He did not send me!" cried she, positively. "I have no

Heavenly Father!"

"Hush, Pearl, hush! Thou must not talk so!" answered the mother, suppressing a groan. "He sent us all into the world. He sent even me, thy mother. Then, much more thee! Or, if not, thou strange and elfish child, whence didst thou come?"

"Tell me! Tell me!" repeated Pearl, no longer seriously, but laughing and capering about the floor. "It is thou that must tell me!"

But Hester could not resolve the query, being herself in a dismal labyrinth of doubt. She remembered—betwixt a smile and a shudder—the talk of the neighbouring townspeople, who, seeking vainly elsewhere for the child's paternity, and observing some of her odd attributes, had given

out that poor little Pearl was a demon offspring: such as, ever since old Catholic times, had occasionally been seen on earth, through the agency of their mother's sin, and to promote some foul and wicked purpose. Luther, according to the scandal of his monkish enemies, was a brat of that hellish breed; nor was Pearl the only child to whom this inauspicious origin was assigned among the New England Puritans.

# CHAPTER VII

## THE GOVERNOR'S HALL

ESTER PRYNNE went one day to the mansion of Governor Bellingham, with a pair of gloves which she had fringed and embroidered to his order, and which were to be worn on some great occasion of state; for, though the chances of a popular election had caused this former ruler to descend a step or two from the highest rank, he still held an honourable and influential place among the

colonial magistracy.

Another and far more important reason than the delivery of a pair of embroidered gloves, impelled Hester, at this time, to seek an interview with a personage of so much power and activity in the affairs of the settlement. It had reached her ears that there was a design on the part of some of the leading inhabitants, cherishing the more rigid order of principles in religion and government, to deprive her of her child. On the supposition that Pearl, as already hinted, was of demon origin, these good people not unreasonably argued that a Christian interest in the mother's soul required them to remove such a stumbling-block from her path. If the child, on the other hand, were really capable of moral and religious growth, and possessed the elements of ultimate salvation, then, surely, it would enjoy all the fairer prospect of these advantages by being transferred to wiser and better guardianship that Hester Prynne's. Among those who promoted the design, Governor Bellingham was said to be one of the most busy. It may appear singular, and, indeed, not a little ludicrous, that an affair of this kind, which in later days would have been referred to no higher jurisdiction than that of the select men of the town, should then have been a question publicly discussed, and on which statesmen of eminence took sides. At that epoch of pristine simplicity, however, matters of even slighter public interest, and of far less intrinsic weight than the welfare of Hester and her

child, were strangely mixed up with the deliberations of legislators and acts of state. The period was hardly, if at all, earlier than that of our story, when a dispute concerning the right of property in a pig not only caused a fierce and bitter contest in the legislative body of the colony, but resulted in an important modification of the framework itself of the legislature.

Full of concern, therefore—but so conscious of her own right that it seemed scarcely an unequal match between the public on the one side, and a lonely woman, backed by the sympathies of nature, on the other—Hester Prynne set forth from her solitary cottage. Little Pearl, of course, was her companion. She was now of an age to run lightly along by her mother's side, and, constantly in motion from morn till sunset, could have accomplished a much longer journey than that before her. Often, nevertheless, more from caprice than necessity, she demanded to be taken up in arms; but was soon as imperious to be set down again, and frisked onward before Hester on the grassy pathway, with many a harmless trip and tumble. We have spoken of Pearl's rich and luxuriant beauty-a beauty that shone with deep and vivid tints, a bright complexion, eves possessing intensity both of depth and glow, and hair already of a deep, glossy brown, and which, in after years, would be nearly akin to black. There was fire in her and throughout her: she seemed the unpremeditated offshoot of a passionate moment. mother, in contriving the child's garb, had allowed the gorgeous tendencies of her imagination their full play, arraying her in a crimson velvet tunic of a peculiar cut, abundantly embroidered in fantasies and flourishes of gold thread. So much strength of colouring, which must have given a wan and pallid aspect to cheeks of a fainter bloom. was admirably adapted to Pearl's beauty, and made her the very brightest little jet of flame that ever danced upon the earth

But it was a remarkable attribute of this garb, and indeed, of the child's whole appearance, that it irresistibly and inevitably reminded the beholder of the token which Hester Prynne was doomed to wear upon her bosom. It was the scarlet letter in another form: the scarlet letter endowed

with life! The mother herself—as if the red ignominy were so deeply scorched into her brain that all her conceptions assumed its form—had carefully wrought out the similitude, lavishing many hours of morbid ingenuity to create an analogy between the object of her affection and the emblem of her guilt and torture. But, in truth, Pearl was the one as well as the other; and only in consequence of that identity had Hester contrived so perfectly to represent the scarlet letter in her appearance.

As the two wayfarers came within the precincts of the town, the children of the Puritans looked up from their play—or what passed for play with those sombre little urchins—

and spoke gravely one to another:-

"Behold, verily, there is the woman of the scarlet letter: and of a truth, moreover, there is the likeness of the scarlet letter running along by her side! Come, therefore, and let

us fling mud at them!"

But Pearl, who was a dauntless child, after frowning, stamping her foot, and shaking her little hand with a variety of threatening gestures, suddenly made a rush at the knot of her enemies, and put them all to flight. She resembled, in her fierce pursuit of them, an infant pestilence—the scarlet fever, or some such half-fledged angel of judgment—whose mission was to punish the sins of the rising generation. She screamed and shouted, too, with a terrific volume of sound, which, doubtless, caused the hearts of the fugitives to quake within them. The victory accomplished, Pearl returned quietly to her mother, and looked up, smiling, into her face.

Without further adventure, they reached the dwelling of Governor Bellingham. This was a large wooden house, built in a fashion of which there are specimens still extant in the streets of our older towns; now moss-grown, crumbling to decay, and melancholy at heart with the many sorrowful or joyful occurrences, remembered or forgotten, that have happened and passed away within their dusky chambers. Then, however, there was the freshness of the passing year on its exterior, and the cheerfulness, gleaming forth from the sunny windows, of a human habitation, into which death had never entered. It had, indeed, a very cheery

aspect, the walls being overspread with a kind of stucco, in which fragments of broken glass were plentifully intermixed; so that, when the sunshine fell aslantwise over the front of the edifice, it glittered and sparkled as if diamonds had been flung against it by the double handful. The brilliancy might have befitted Aladdin's palace rather than the mansion of a grave old Puritan ruler. It was further decorated with strange and seemingly cabalistic figures and diagrams, suitable to the quaint taste of the age, which had been drawn in the stucco, when newly laid on, and had now grown hard and durable, for the admiration of after times.

Pearl, looking at this bright wonder of a house, began to caper and dance, and imperatively required that the whole breadth of sunshine should be stripped off its front, and given her to play with.

"No, my little Pearl!" said her mother; "thou must gather

thine own sunshine. I have none to give thee!"

They approached the door, which was of an arched form, and flanked on each side by a narrow tower or projection of the edifice, in both of which were lattice-windows, the wooden shutters to close over them at need. Lifting the iron hammer that hung at the portal, Hester Prynne gave a summons, which was answered by one of the Governor's bond-servants—a free-born Englishman, but now a seven years' slave. During that term he was to be the property of his master, and as much a commodity of bargain and sale as an ox, or a joint-stool. The serf wore the blue coat, which was the customary garb of serving-men at that period, and long before, in the old hereditary halls of England.

"Is the worshipful Governor Bellingham within?" in-

quired Hester.

"Yea, forsooth," replied the bond-servant, staring with wide-open eyes at the scarlet letter, which, being a new-comer in the country, he had never before seen. "Yea, his honourable worship is within. But he hath a godly minister or two with him, and likewise a leech. Ye may not see his worship now."

"Nevertheless, I will enter," answered Hester Prynne; and the bond-servant, perhaps judging from the decision of

her air, and the glittering symbol in her bosom, that she was

a great lady in the land, offered no opposition.

So the mother and little Pearl were admitted into the hall of entrance. With many variations, suggested by the nature of his building materials, diversity of climate, and a different mode of social life, Governor Bellingham had planned his new habitation after the residences of gentlemen of fair estate in his native land. Here, then, was a wide and reasonably lofty hall, extending through the whole depth of the house, and forming a medium of general communication. more or less directly, with all the other apartments. At one extremity, this spacious room was lighted by the windows of the two towers, which formed a small recess on either side of the portal. At the other end, though partly muffled by a curtain, it was more powerfully illuminated by one of those embowed hall windows which we read of in old books, and which was provided with a deep and cushion seat. Here, on the cushion, lay a folio tome, probably of the Chronicles of England, or other such substantial literature; even as, in our own days, we scatter gilded volumes on the centre table, to be turned over by the casual guest. The furniture of the hall consisted of some ponderous chairs, the backs of which were elaborately carved with wreaths of oaken flowers; and likewise a table in the same taste, the whole being of the Elizabethan age, or perhaps earlier, and heirlooms, transferred hither from the Governor's paternal home. On the table—in token that the sentiment of old English hospitality had not been left behind-stood a large pewter tankard, at the bottom of which, had Hester or Pearl peeped into it, they might have seen the frothy remnant of a recent draught of ale.

On the wall hung a row of portraits, representing the forefathers of the Bellingham lineage, some with armour on their breasts, and others with stately ruffs and robes of peace. All were characterised by the sternness and severity which old portraits so invariably put on, as if they were the ghosts, rather than the pictures, of departed worthies, and were gazing with harsh and intolerant criticism at the pursuits and enjoyments of living men.

At about the centre of the oaken panels that lined the hall

was suspended a suit of mail, not, like the pictures, an ancestral relic, but of the most modern date; for it had been manufactured by a skilful armourer in London, the same year in which Governor Bellingham came over to New England. There was a steel head-piece, a cuirass, a gorget and greaves, with a pair of gauntlets and a sword hanging beneath; all, and especially the helmet and breastplate, so highly burnished as to glow with white radiance, and scatter an illumination everywhere about upon the floor. bright panoply was not meant for mere idle show, but had been worn by the Governor on many a solemn muster and training field, and had glittered, moreover, at the head of a regiment in the Pequod war. For, though bred a lawyer, and accustomed to speak of Bacon, Coke, Nove, and Finch. as his professional associates, the exigencies of this new country had transformed Governor Bellingham into a soldier, as well as a statesman and ruler.

Little Pearl, who was as greatly pleased with the gleaming armour as she had been with the glittering frontispiece of the house, spent some time looking into the polished mirror of the breastplate.

"Mother," cried she, "I see you here. Look! look!"

Hester looked by way of humouring the child; and she saw that, owing to the peculiar effect of this convex mirror, the scarlet letter was represented in exaggerated and gigantic proportions, so as to be greatly the most prominent feature of her appearance. In truth, she seemed absolutely hidden behind it.

Pearl pointed upwards also, at a similar picture in the head-piece; smiling at her mother, with the elfish intelligence that was so familiar an expression on her small physiognomy. That look of naughty merriment was likewise reflected in the mirror, with so much breadth and intensity of effect, that it made Hester Prynne feel as if it could not be the image of her own child, but of an imp who was seeking to mould itself into Pearl's shape.

"Come along, Pearl," said she, drawing her away. "Come and look into this fair garden. It may be we shall see flowers there; more beautiful ones than we find in the woods."

Pearl accordingly ran to the bow-window, at the further end of the hall, and looked along the vista of a garden walk. carpeted with closely-shaven grass, and bordered with some rude and immature attempt at shrubbery. But the proprietor appeared already to have relinquished as hopeless, the effort to perpetuate on this side of the Atlantic, in a hard soil, and amid the close struggle for subsistence, the native English taste for ornamental gardening. Cabbages grew in plain sight; and a pumpkin-vine, rooted at some distance, had run across the intervening space, and deposited one of its gigantic products directly beneath the hall window, as if to warn the Governor that this great lump of vegetable gold was as rich an ornament as New England earth would offer him. There were a few rose-bushes, however, and a number of apple-trees, probably the descendants of those planted by the Reverend Mr. Blackstone, the first settler of the peninsula; that half mythological personage who rides through our early annals, seated on the back of a bull.

Pearl, seeing the rose-bushes, began to cry for a red rose,

and would not be pacified.

"Hush, child—hush!" said her mother, earnestly. "Do not cry, dear little Pearl! I hear voices in the garden. The Governor is coming, and gentlemen along with him."

In fact, adown the vista of the garden avenue, a number of persons were seen approaching towards the house. Pearl, in utter scorn of her mother's attempt to quiet her, gave an eldritch scream, and then became silent, not from any motion of obedience, but because the quick and mobile curiosity of her disposition was excited by the appearance of those new personages.

# CHAPTER VIII

# THE ELF-CHILD AND THE MINISTER

OVERNOR BELLINGHAM, in a loose gown and easy cap—such as elderly gentlemen loved to endue themselves with, in their domestic privacy-walked foremost, and appeared to be showing off his estate, and expatiating on his projected improvements. The wide circumference of an elaborate ruff, beneath his grey beard, in the antiquated fashion of King James's reign, caused his head to look not a little like that of John the Baptist in a charger. The impression made by his aspect, so rigid and severe, and frost-bitten with more than autumnal age, was hardly in keeping with the appliances of worldly enjoyment wherewith he had evidently done his utmost to surround himself. But it is an error to suppose that our great forefathers-though accustomed to speak and think of human existence as a state merely of trial and warfare, and though unfeignedly prepared to sacrifice goods and life at the behest of duty-made it a matter of conscience to reject such means of comfort, or even luxury, as lay fairly within their grasp. This creed was never taught, for instance, by the venerable pastor, John Wilson, whose beard, white as a snow-drift, was seen over Governor Bellingham's shoulders, while its wearer suggested that pears and peaches might yet be naturalised in the New England climate, and that purple grapes might possibly be compelled to flourish against the sunny garden-wall. The old clergyman, nurtured at the rich bosom of the English Church, had a long established and legitimate taste for all good and comfortable things, and however stern he might show himself in the pulpit, or in his public reproof of such transgressions as that of Hester Prynne, still the genial benevolence of his private life had won him warmer affection than was accorded to any of his professional contemporaries.

Behind the Governor and Mr. Wilson came two other guests—one, the Reverend Arthur Dimmesdale, whom the reader may remember as having taken a brief and reluctant part in the scene of Hester Prynne's disgrace; and, in close companionship with him, old Roger Chillingworth, a person of great skill in physic, who for two or three years past had been settled in the town. It was understood that this learned man was the physician as well as friend of the young minister, whose health had severely suffered of late by his too unreserved self-sacrifice to the labours and duties of the pastoral relation.

The Governor, in advance of his visitors, ascended one or two steps, and, throwing open the leaves of the great hall window, found himself close to little Pearl. The shadow of the curtain fell on Hester Prynne, and partially concealed

her.

"What have we here?" said Governor Bellingham, looking with surprise at the scarlet little figure before him. "I profess I have never seen the like since my days of vanity, in old King James's time, when I was wont to esteem it a high favour to be admitted to a court mask! There used to be a swarm of these small apparitions in holiday time, and we called them children of the Lord of Misrule. But how gat

such a guest into my hall?"

"Ay, indeed!" cried good old Mr. Wilson. "What little bird of scarlet plumage may this be? Methinks I have seen just such figures when the sun has been shining through a richly painted window, and tracing out the golden and crimson images across the floor. But that was in the old land. Prithee, young one, who art thou, and what has ailed thy mother to bedizen thee in this strange fashion? Art thou a Christian child—ha? Dost know thy catechism? Or art thou one of those naughty elfs of fairies whom we thought to have left behind us, with other relics of Papistry, in merry old England?"

"I am mother's child," answered the scarlet vision, "and

my name is Pearl!"

"Pearl?—Ruby, rather!—or Coral!—or Red Rose, at the very least, judging from thy hue!" responded the old minister, putting forth his hand in a vain attempt to pat little

Pearl on the cheek. "But where is this mother of thine? Ah! I see," he added; and, turning to Governor Bellingham, whispered, "This is the selfsame child of whom we have held speech together; and behold here the unhappy woman, Hester Prynne, her mother!"

"Sayest thou so?" cried the Governor. "Nay, we might have judged that such a child's mother must needs be a scarlet woman, and a worthy type of her of Babylon! But she comes at a good time, and we will look into this matter

forthwith."

Governor Bellingham stepped through the window into the

hall, followed by his three guests.

"Hester Prynne," said he, fixing his naturally stern regard on the wearer of the scarlet letter, "there hath been much question concerning thee of late. The point hath been weightily discussed, whether we, that are of authority and influence, do well discharge our consciences by trusting an immortal soul, such as there is in yonder child, to the guidance of one who hath stumbled and fallen amid the pitfalls of this world. Speak thou, the child's own mother! Were it not, thinkest thou, for thy little one's temporal and eternal welfare that she be taken out of thy charge, and clad soberly, and disciplined strictly, and instructed in the truths of heaven and earth? What canst thou do for the child in this kind?"

"I can teach my little Pearl what I have learned from this!" answered Hester Prynne, laying her finger on the red token.

"Woman, it is thy badge of shame!" replied the stern magistrate. "It is because of the stain which that letter indicates that we would transfer thy child to other hands."

"Nevertheless," said the mother, calmly, though growing more pale, "this badge hath taught me—it daily teaches me—it is teaching me at this moment—lessons whereof my child may be the wiser and better, albeit they can profit nothing to myself."

"We will judge warily," said Bellingham, "and look well what we are about to do. Good Master Wilson, I pray you, examine this Pearl—since that is her name—and see whether

she hath had such Christian nurture as befits a child of her

age."

The old minister seated himself in an arm-chair, and made an effort to draw Pearl betwixt his knees. But the child, unaccustomed to the touch or familiarity of any but her mother, escaped through the open window, and stood on the upper step, looking like a wild tropical bird of rich plumage, ready to take flight into the upper air. Mr. Wilson, not a little astonished at this outbreak—for he was a grandfatherly sort of personage, and usually a vast favourite with children—essayed, however, to proceed with the examination.

"Pearl," said he, with great solemnity, "thou must take heed to instruction, that so in due season, thou mayest wear in thy bosom the pearl of great price. Canst thou tell me,

my child, who made thee?"

Now Pearl knew well enough who made her, for Hester Prynne, the daughter of a pious home, very soon after her talk with the child about her Heavenly Father, had begun to inform her of those truths which the human spirit, at whatever stage of immaturity, imbibes with such eager interest. Pearl, therefore—so large were the attainments of her three years' lifetime-could have borne a fair examination in the New England Primer, or the first column of the Westminster Catechisms, although unacquainted with the outward form of either of those celebrated works. But that perversity, which all children have more or less of, and of which little Pearl had a tenfold portion, now, at the most inopportune moment, took thorough possession of her, and closed her lips, or impelled her to speak words amiss. After putting her finger in her mouth, with many ungracious refusals to answer good Mr. Wilson's question, the child finally announced that she had not been made at all, but had been plucked by her mother off the bush of wild roses that grew by the prison door.

This phantasy was probably suggested by the near proximity of the Governor's red roses, as Pearl stood outside of the window, together with her recollection of the prison rose-

bush, which she had passed in coming hither.

Old Roger Chillingworth, with a smile on his face, whispered something in the young clergyman's ear. Hester

Prynne looked at the man of skill, and even then, with her fate hanging in the balance, was startled to perceive what a change had come over his features—how much uglier they were, how his dark complexion seemed to have grown duskier, and his figure more misshapen—since the days when she had familiarly known him. She met his eyes for an instant, but was immediately constrained to give all her attention to the scene now going forward.

"This is awful!" cried the Governor, slowly recovering

"This is awful!" cried the Governor, slowly recovering from the astonishment into which Pearl's response had thrown him. "Here is a child of three years old, and she cannot tell who made her! Without question, she is equally in the dark as to her soul, its present depravity, and future destiny! Methinks, gentlemen, we need inquire no further."

Hester caught hold of Pearl, and drew her forcibly into her arms, confronting the old Puritan magistrate with almost a fierce expression. Alone in the world, cast off by it, and with this sole treasure to keep her heart alive, she felt that she possessed indefeasible rights against the world, and was ready to defend them to the death.

"God gave me the child!" cried she. "He gave her in requital of all things else which ye had taken from me. She is my happiness!—she is my torture, none the less! Pearl keeps me here in life! Pearl punishes me, too! See ye not, she is the scarlet letter, only capable of being loved, and so endowed with a millionfold the power of retribution for my sin? Ye shall not take her! I will die first!"

"My poor woman," said the not unkind old minister, "the child shall be well cared for!—far better than thou canst do for it."

"God gave her into my keeping!" repeated Hester Prynne, raising her voice almost to a shriek. "I will not give her up!" And here by a sudden impulse, she turned to the young clergyman, Mr. Dimmesdale, at whom, up to this moment, she had seemed hardly so much as once to direct her eyes. "Speak thou for me!" cried she. "Thou wast my pastor, and hadst charge of my soul, and knowest me better than these men can. I will not lose the child! Speak for me! Thou knowest—for thou hast sympathies which these men lack—thou knowest what is in my heart, and what are

a mother's rights, and how much the stronger they are when that mother has but her child and the scarlet letter! Look thou to it! I will not lose the child! Look to it!"

At this wild and singular appeal which indicated that Hester Prynne's situation had provoked her to little less than madness, the young minister at once came forward, pale, and holding his hand over his heart, as was his custom whenever his peculiarly nervous temperament was thrown into agitation. He looked now more careworn and emaciated than as we described him at the scene of Hester's public ignominy; and whether it were his failing health, or whatever the cause might be, his large dark eyes had a world of pain in their troubled and melancholy depth.

"There is truth in what she says," began the minister, with a voice sweet, tremulous, but powerful, insomuch that the hall re-echoed and the hollow armour rang with it—"truth in what Hester says, and in the feeling which inspires her! God gave her the child, and gave her, too, an instinctive knowledge of its nature and requirements—both seemingly so peculiar—which no other mortal being can possess. And, moreover, is there not a quality of awful sacredness in the

relation between this mother and this child?"

"Ay!-how is that, good Master Dimmesdale?" interrupted

the Governor. "Make that plain, I pray you!"

"It must be even so," resumed the minister. "For, if we deem it otherwise, do we not hereby say that the Heavenly Father, the creator of all flesh, hath lightly recognised a deed of sin, and made of no account the distinction between unhallowed lust and holy love? This child of its father's guilt and its mother's shame has come from the hand of God, to work in many ways upon her heart, who pleads so earnestly and with such bitterness of spirit the right to keep her. It was meant for a blessing—for the one blessing of her life! It was meant, doubtless, as the mother herself hath told us, for a retribution, too; a torture to be felt at many an unthought-of moment; a pang, a sting, an ever-recurring agony, in the midst of a troubled joy! Hath she not expressed this thought in the garb of the poor child, so forcibly reminding us of that red symbol which sears her bosom?"

"Well said again!" cried good Mr. Wilson. "I feared the

woman had no better thought than to make a mountebank of her child!"

"Oh, not so!—not so!" continued Mr. Dimmesdale. "She recognises, believe me, the solemn miracle which God hath wrought in the existence of that child. And may she feel, too-what, methinks, is the very truth-that this boon was meant, above all things else, to keep the mother's soul alive, and to preserve her from blacker depths of sin into which Satan might else have sought to plunge her! Therefore it is good for this poor, sinful woman, that she hath an infant immortality, a being capable of eternal joy or sorrow, confided to her care—to be trained up by her to righteousness, to remind her, at every moment, of her fall, but yet to teach her, as if it were by the Creator's sacred pledge, that, if she bring the child to heaven, the child also will bring its parents thither! Herein is the sinful mother happier than the sinful father. For Hester Prynne's sake, then, and no less for the poor child's sake, let us leave them as Providence hath seen fit to place them!"

"You speak, my friend, with a strange earnestness," said

old Roger Chillingworth, smiling at him.

"And there is a weighty import in what my young brother hath spoken," added the Rev. Mr. Wilson. "What say you, worshipful Master Bellingham? Hath he not pleaded well

for the poor woman?"

"Indeed hath he," answered the magistrate; "and hath adduced such arguments, that we will even leave the matter as it now stands; so long, at least, as there shall be no further scandal in the woman. Care must be had nevertheless, to put the child to due and stated examination in the catechism, at thy hands or Master Dimmesdale's. Moreover, at a proper season, the tithing-men must take heed that she go both to school and to meeting."

The young minister, on ceasing to speak had withdrawn a few steps from the group, and stood with his face partially concealed in the heavy folds of the window-curtain; while the shadow of his figure, which the sunlight cast upon the floor, was tremulous with the vehemence of his appeal. Pearl, that wild and flighty little elf, stole softly towards him, and taking his hand in the grasp of both her own, laid

her cheek against it; a caress so tender, and withal so unobtrusive, that her mother, who was looking on, asked herself—"Is that my Pearl?" Yet she knew that there was love in the child's heart, although it mostly revealed itself in passion, and hardly twice in her lifetime had been softened by such gentleness as now. The minister—for, save the long-sought regards of woman, nothing is sweeter than these marks of childish preference, accorded spontaneously by a spiritual instinct, and therefore seeming to imply in us something truly worthy to be loved—the minister looked round, laid his hand on the child's head, hesitated an instant, and then kissed her brow. Little Pearl's unwonted mood of sentiment lasted no longer; she laughed, and went capering down the hall so airily, that old Mr. Wilson raised a question whether even her tiptoes touched the floor.

"The little baggage hath witchcraft in her, I profess," said he to Mr. Dimmesdale. "She needs no old woman's broom-

stick to fly withal!"

"A strange child!" remarked old Roger Chillingworth. "It is easy to see the mother's part in her. Would it be beyond a philosopher's research, think ye, gentlemen, to analyse that child's nature, and, from it make a mould, to

give a shrewd guess at the father?"

"Nay; it would be sinful, in such a question, to follow the clue of profane philosophy," said Mr. Wilson. "Better to fast and pray upon it; and still better, it may be, to leave the mystery as we find it, unless Providence reveal it of its own accord. Thereby, every good Christian man hath a title to show a father's kindness towards the poor, deserted babe."

The affair being so satisfactorily concluded, Hester Prynne, with Pearl, departed from the house. As they descended the steps, it is averred that the lattice of a chamberwindow was thrown open, and forth into the sunny day was thrust the face of Mistress Hibbins, Governor Bellingham's bitter-tempered sister, and the same who, a few years later, was executed as a witch.

"Hist, hist!" said she, while her ill-omened physiognomy seemed to cast a shadow over the cheerful newness of the house. "Wilt thou go with us to-night? There will be a

merry company in the forest; and I well-nigh promised the Black Man that comely Hester Prynne should make one."

"Make my excuse to him, so please you!" answered Hester, with a triumphant smile. "I must tarry at home, and keep watch over my little Pearl. Had they taken her from me, I would willingly have gone with thee into the forest, and signed my name in the Black Man's book too, and that with mine own blood!"

"We shall have thee there anon!" said the witch-lady, frowning, as she drew back her head.

But here—if we suppose this interview betwixt Mistress Hibbins and Hester Prynne to be authentic, and not a parable—was already an illustration of the young minister's argument against sundering the relation of a fallen mother to the offspring of her frailty. Even thus early had the child saved her from Satan's snare.

#### CHAPTER IX

## THE LEECH

NDER the appellation of Roger Chillingworth, the reader will remember, was hidden another name, which its former wearer had resolved should never more be spoken. It has been related, how, in the crowd that witnessed Hester Prynne's ignominious exposure, stood a man, elderly, travel-worn, who, just emerging from the perilous wilderness, beheld the woman, in whom he hoped to find embodied the warmth and cheerfulness of home, set up as a type of sin before the people. Her matronly fame was trodden under all men's feet. Infamy was babbling around her in the public market-place. For her kindred, should the tidings ever reach them, and for the companions of her unspotted life, there remained nothing but the contagion of her dishonour; which would not fail to be distributed in strict accordance and proportion with the intimacy and sacredness of their previous relationship. Then why-since the choice was with himself-should the individual, whose connexion with the fallen woman had been the most intimate and sacred of them all, come forward to vindicate his claim to an inheritance so little desirable? He resolved not to be pilloried beside her on her pedestal of shame. Unknown to all but Hester Prynne, and possessing the lock and key of her silence, he chose to withdraw his name from the roll of mankind, and, as regarded his former ties and interest, to vanish out of life as completely as if he indeed lay at the bottom of the ocean, whither rumour had long ago consigned him. This purpose once effected, new interests would immediately spring up, and likewise a new purpose; dark, it is true, if not guilty, but of force enough to engage the full strength of his faculties.

In pursuance of this resolve, he took up his residence in the Puritan town as Roger Chillingworth, without other introduction than the learning and intelligence of which he possessed more than a common measure. As his studies, at a previous period of his life, had made him extensively acquainted with the medical science of the day, it was as a physician that he presented himself, and as such was cordially received. Skilful men, of the medical and chirurgical profession, were of rare occurrence in the colony. They seldom, it would appear, partook of the religious zeal that brought other emigrants across the Atlantic. In their researches into the human frame, it may be that the higher and more subtle faculties of such men were materialised, and that they lost the spiritual view of existence amid the intricacies of that wondrous mechanism, which seemed to involve art enough to comprise all of life within itself. At all events, the health of the good town of Boston, so far as medicine had aught to do with it, had hitherto lain in the guardianship of an aged deacon and apothecary, whose piety and goodly deportment were stronger testimonials in his favour than any that he could have produced in the shape of a diploma. The only surgeon was one who combined the occasional exercise of that noble art with the daily and habitual flourish of a razor. To such a professional body Roger Chillingworth was a brilliant acquisition. He soon manifested his familiarity with the ponderous and imposing machinery of antique physic; in which every remedy contained a multitude of far-fetched and heterogeneous ingredients, as elaborately compounded as if the proposed result had been the Elixir of Life. In his Indian captivity, moreover, he had gained much knowledge of the properties of native herbs and roots; nor did he conceal from his patients that these simple medicines, Nature's boon to the untutored savage, had quite as large a share of his own confidence as the European Pharmacopæia, which so many learned doctors had spent centuries in elaborating.

This learned stranger was exemplary as regarded at least the outward forms of a religious life; and early after his arrival, had chosen for his spiritual guide the Reverend Mr. Dimmesdale. The young divine, whose scholar-like renown still lived in Oxford, was considered by his more fervent admirers as little less than a heavenly ordained apostle, destined, should he live and labour for the ordinary term of

life, to do as great deeds, for the now feeble New England Church, as the early Fathers had achieved for the infancy of the Christian faith. About this period, however, the health of Mr. Dimmesdale had evidently begun to fail. By those best acquainted with his habits, the paleness of the young minister's cheek was accounted for by his too earnest devotion to study, his scrupulous fulfilment of parochial duty. and more than all, to the fasts and vigils of which he made a frequent practice, in order to keep the grossness of this earthly state from clogging and obscuring his spiritual lamp. Some declared, that if Mr. Dimmesdale were really going to die, it was cause enough that the world was not worthy to be any longer trodden by his feet. He himself, on the other hand, with characteristic humility, avowed his belief, that if Providence should see fit to remove him, it would be because of his own unworthiness to perform its humblest mission here on earth. With all this difference of opinion as to the cause of his decline, there could be no question of the fact. His form grew emaciated; his voice, though still rich and sweet, had a certain melancholy prophecy of decay in it: he was often observed, on any slight alarm or other sudden accident, to put his hand over his heart with first a flush and then a paleness, indicative of pain.

Such was the young clergyman's condition, and so imminent the prospect that his dawning light would be extinguished, all untimely, when Roger Chillingworth made his advent to the town. His first entry on the scene, few people could tell whence, dropping down as it were out of the sky or starting from the nether earth, had an aspect of mystery, which was easily heightened to the miraculous. He was now known to be a man of skill; it was observed that he gathered herbs and the blossoms of wild-flowers, and dug up roots and plucked off twigs from the forest-trees like one acquainted with hidden virtues in what was valueless to common eyes. He was heard to speak of Sir Kenelm Digby and other famous men-whose scientific attainments were esteemed hardly less than supernatural—as having been his correspondents or associates. Why, with such rank in the learned world, had he come hither? What, could he, whose sphere was in great cities, be seeking in the wilderness? In answer to this query, a rumour gained ground—and however absurd, was entertained by some very sensible people—that Heaven had wrought an absolute miracle, by transporting an eminent Doctor of Physic from a German university bodily through the air and setting him down at the door of Mr. Dimmesdale's study! Individuals of wiser faith, indeed, who knew that Heaven promotes its purposes without aiming at the stage-effect of what is called miraculous interposition, were inclined to see a providential hand in Roger Chillingworth's so opportune arrival.

This idea was countenanced by the strong interest which the physician ever manifested in the young clergyman; he attached himself to him as a parishioner, and sought to win a friendly regard and confidence from his naturally reserved sensibility. He expressed great alarm at his pastor's state of health, but was anxious to attempt the cure, and, if early undertaken, seemed not despondent of a favourable result. The elders, the deacons, the motherly dames, and the young and fair maidens of Mr. Dimmesdale's flock, were alike importunate that he should make trial of the physician's frankly offered skill. Mr. Dimmesdale gently repelled their entreaties.

"I need no medicine," said he.

But how could the young minister say so, when, with every successive Sabbath, his cheek was paler and thinner, and his voice more tremulous than before—when it had now become a constant habit, rather than a casual gesture, to press his hand over his heart? Was he weary of his labours? Did he wish to die? These questions were solemnly propounded to Mr. Dimmesdale by the elder ministers of Boston, and the deacons of his church, who, to use their own phrase, "dealt with him," on the sin of rejecting the aid which Providence so manifestly held out. He listened in silence, and finally promised to confer with the physician.

"Were it God's will," said the Reverend Mr. Dimmesdale, when, in fulfilment of this pledge, he requested old Roger Chillingworth's professional advice, "I could be well content that my labours, and my sorrows, and my sins, and my pains, should shortly end with me, and what is earthly of them be buried in my grave, and the spiritual go with me to my

eternal state, rather than that you should put your skill to the proof in my behalf."

"Ah," replied Roger Chillingworth, with that quietness, which, whether imposed or natural, marked all his deportment, "it is thus that a young clergyman is apt to speak. Youthful men, not having taken a deep root, give up their hold of life so easily! And saintly men, who walk with God on earth, would fain be away, to walk with him on the golden pavements of the New Jerusalem."

"Nay," rejoined the young minister, putting his hand to his heart, with a flush of pain flitting over his brow, "were I worthier to walk there, I could be better content to toil here"

"Good men ever interpret themselves too meanly," said the physician.

In this manner, the mysterious old Roger Chillingworth became the medical adviser of the Reverend Mr. Dimmesdale As not only the disease interested the physician, but he was strongly moved to look into the character and qualities of the patient, these two men, so different in age, came gradually to spend much time together. For the sake of the minister's health, and to enable the leech to gather plants with healing balm in them, they took long walks on the sea-shore, or in the forest; mingling various walks with the splash and murmur of the waves, and the solemn wind-anthem among the tree-tops. Often, likewise, one was the guest of the other in his place of study and retirement. There was a fascination for the minister in the company of the man of science, in whom he recognised an intellectual cultivation of no moderate depth or scope; together with a range and freedom of ideas, that he would have vainly looked for among the members of his own profession. In truth, he was startled, if not shocked, to find this attribute in the physician. Mr. Dimmesdale was a true priest, a true religionist, with the reverential sentiment largely developed, and an order of mind that impelled itself powerfully along the track of a creed, and wore its passage continually deeper with the lapse of time. In no state of society would he have been what is called a man of liberal views; it would always be essential to his peace to feel the pressure of a faith about him, supporting, while it confined him within its iron framework. Not the less, however, though with a tremulous enjoyment, did he feel the occasional relief of looking at the universe through the medium of another kind of intellect than those with which he habitually held converse. It was as if a window were thrown open, admitting a freer atmosphere into the close and stifled study, where his life was wasting itself away, amid lamp-light, or obstructed daybeams, and the musty fragrance, be it sensual or moral, that exhales from books. But the air was too fresh and chill to be long breathed with comfort. So the minister, and the physician with him, withdrew again within the limits of what their Church defined as orthodox.

Thus Roger Chillingworth scrutinised his patient carefully, both as he saw him in his ordinary life, keeping an accustomed pathway in the range of thoughts familiar to him, and as he appeared when thrown amidst other moral scenery, the novelty of which might call out something new to the surface of his character. He deemed it essential, it would seem, to know the man, before attempting to do him good. Wherever there is a heart and an intellect, the diseases of the physical frame are tinged with the peculiarities of these. In Arthur Dimmesdale, thought and imagination were so active, and sensibility so intense, that the bodily infirmity would be likely to have its groundwork there. So Roger Chillingworth—the man of skill, the kind and friendly physician-strove to go deep into his patient's bosom, delving among his principles, prying into his recollections, and probing everything with a cautious touch, like a treasure-seeker in a dark cavern. Few secrets can escape an investigator, who has opportunity and licence to undertake such a quest, and skill to follow it up. A man burdened with a secret should especially avoid the intimacy of his physician. If the latter possess native sagacity, and a nameless something more-let us call it intuition; if he show no intrusive egotism, nor disagrecable prominent characteristics of his own; if he have the power, which must be born with him, to bring his mind into such affinity with his patient's, that this last shall unawares have spoken what he imagines himself only to have thought; if such revelations be received without tumult, and acknowledged not so often by an uttered sympathy as by silence, an inarticulate breath, and here and there a word to indicate that all is understood; if to these qualifications of a confidant be joined the advantages afforded by his recognised character as a physician;—then, at some inevitable moment, will the soul of the sufferer be dissolved, and flow forth in a dark but transparent stream, bringing all its mysteries into the daylight.

Roger Chillingworth possessed all, or most, of the attributes above enumerated. Nevertheless, time went on; a kind of intimacy, as we have said, grew up between these two cultivated minds, which had as wide a field as the whole sphere of human thought and study to meet upon; they discussed every topic of ethics and religion, of public affairs, and private character; they talked much, on both sides, of matters that seemed personal to themselves; and yet no secret, such as the physician fancied must exist there, ever stole out of the minister's consciousness into his companion's ear. The latter had his suspicions, indeed, that even the nature of Mr. Dimmesdale's bodily disease had never fairly been revealed to him. It was a strange reserve!

After a time, at a hint from Roger Chillingworth, the friends of Mr. Dimmesdale effected an arrangement by which the two were lodged in the same house; so that every ebb and flow of the minister's life-tide might pass under the eye of his anxious and attached physician. There was much joy throughout the town when this greatly desirable object was attained. It was held to be the best possible measure for the young clergyman's welfare; unless, indeed, as often urged by such as felt authorised to do so, he had selected some one of the many blooming damsels, spiritually devoted to him, to become his devoted wife. This latter step, however, there was no present prospect that Arthur Dimmesdale would be prevailed upon to take: he rejected all suggestions of the kind, as if priestly celibacy were one of his articles of Church discipline. Doomed by his own choice, therefore, as Mr. Dimmesdale's so evidently was, to eat his unsavoury morsel always at another's board, and endure the life-long chill which must be his lot who seeks to warm himself only at another's fireside, it truly seemed that this sagacious, experienced, benevolent old physician, with his concord of paternal and reverential love for the young pastor, was the very man, of all mankind, to be constantly within reach of his voice.

The new abode of the two friends was with a pious widow, of good social rank, who dwelt in a house covering pretty nearly the site on which the venerable structure of King's Chapel has since been built. It had the graveyard, originally Isaac Johnson's homefield, on one side, and so was well adapted to call up serious reflections, suited to their respective employments, in both minister and man of physic. The motherly care of the good widow assigned to Mr. Dimmesdale a front apartment, with a sunny exposure, and heavy window-curtains, to create a noontide shadow when desirable. The walls were hung round with tapestry, said to be from the Gobelin looms, and, at all events, representing the Scriptural story of David and Bathsheba, and Nathan the Prophet. in colours still unfaded, but which made the fair women of the scene almost as grimly picturesque as the woe-denouncing Here the pale clergyman piled up his library, rich with parchment-bound folios of the Fathers, and the lore of Rabbis, and monkish erudition, of which the Protestant divines, even while they vilified and decried that class of writers, were vet constrained often to avail themselves. On the other side of the house, old Roger Chillingworth arranged his study and laboratory: not such as a modern man of science would reckon even tolerably complete, but provided with a distilling apparatus and the means of compounding drugs and chemicals, which the practise alchemist knew well how to turn to purpose. With such commodiousness of situation, these two learned persons sat themselves down, each in his own domain, yet familiarly passing from one apartment to the other, and bestowing a mutual and not incurious inspection into one another's business.

And the Reverend Arthur Dimmesdale's best discerning friends, as we have intimated, very reasonably imagined that the hand of Providence had done all this for the purpose—besought in so many public and domestic and secret prayers—of restoring the young minister to health. But, it must now be said, another portion of the community had latterly

begun to take its own view of the relation betwixt Mr. Dimmesdale and the mysterious old physician. When an uninstructed multitude attempts to see with its eyes, it is exceedingly apt to be deceived. When, however, it forms its judgment, as it usually does, on the intuitions of its great and warm heart, the conclusions thus attained are often so profound and so unerring as to possess the character of truth supernaturally revealed. The people, in the case of which we speak, could justify its prejudice against Roger Chillingworth by no fact or argument worthy of serious refutation. There was an aged handicraftsman, it is true, who had been a citizen of London at the period of Sir Thomas Overbury's murder, now some thirty years agone; he testified to having seen the physician, under some other name, which the narrator of the story had now forgotten, in company with Dr. Forman, the famous old conjurer, who was implicated in the affair of Overbury. Two or three individuals hinted that the man of skill during his Indian captivity had enlarged his medical attainments by joining in the incantations of the savage priests, who were universally acknowledged to be powerful enchanters, often performing seemingly miraculous cures by their skill in the black art. A large number-and many of these were persons of such sober sense and practical observation that their opinions would have been valuable in other matters-affirmed that Roger Chillingworth's aspect had undergone a remarkable change while he had dwelt in town, and especially since his abode with Mr. Dimmesdale. At first, his expression had been calm, meditative, scholarlike. Now there was something ugly and evil in his face, which they had not previously noticed, and which grew still the more obvious to sight the oftener they looked upon him. According to the vulgar idea, the fire in his laboratory had been brought from the lower regions, and was fed with infernal fuel: and so, as might be expected, his visage was getting sooty with the smoke.

To sum up the matter, it grew to be a widely diffused opinion that the Rev. Arthur Dimmesdale, like many other personages of special sanctity, in all ages of the Christian world, was haunted either by Satan himself, or Satan's emissary, in the guise of old Roger Chillingworth. This diaboli-

cal agent had the Divine permission, for a season, to burrow into the clergyman's intimacy, and plot against his soul. No sensible man, it was confessed, could doubt on which side the victory would turn. The people looked, with an unshaken hope, to see the minister come forth out of the conflict transfigured with the glory which he would unquestionably win. Meanwhile, nevertheless, it was sad to think of the perchance mortal agony through which he must struggle towards his triumph.

Alas! to judge from the gloom and terror in the depth of the poor minister's eyes, the battle was a sore one, and the victory anything but secure.

#### CHAPTER X

# THE LEECH AND HIS PATIENT

LD Roger Chillingworth, throughout life, had been calm in temperament, kindly, though not of warm affections, but ever, and in all his relations with the world, a pure and upright man. He had begun an investigation, as he imagined, with the severe and equal integrity of a judge, desirous only of truth, even as if the question involved no more than the air-drawn lines and figures of a geometrical problem, instead of human passions, and wrongs inflicted on himself. But, as he proceeded, a terrible fascination, a kind of fierce, though still calm, necessity, seized the old man within its gripe, and never set him free again until he had done all its bidding. He now dug into the poor clergyman's heart, like a miner searching for gold; or, rather, like a sexton delving into a grave, possibly in quest of a jewel that had been buried on the dead man's bosom, but likely to find nothing save mortality and corruption. Alas, for his own soul, if these were what he sought!

Sometimes a light glimmered out of the physician's eyes, burning blue and ominous, like the reflection of a furnace, or, let us say, like one of those gleams of ghastly fire that darted from Bunyan's awful doorway in the hillsides, and quivered on the pilgrim's face. The soil where this dark miner was working had perchance shown indications that encouraged

him.

"This man," said he, at one such moment, to himself, "pure as they deem him—all spiritual as he seems—hath inherited a strong animal nature from his father or his mother. Let us dig a little further in the direction of this yein!"

Then after a long search into the minister's dim interior, and turning over many precious materials, in the shape of high aspirations for the welfare of his race, warm love of souls, pure sentiments, natural piety, strengthened by thought

and study, and illuminated by revelation-all of which invaluable gold was perhaps no better than rubbish to the seeker—he would turn back, discouraged, and begin his quest towards another point. He groped along as stealthily, with as cautious a tread, and as wary an outlook, as a thief entering a chamber where a man lies only half asleep-or, it may be, broad awake—with purpose to steal the very treasure which this man guards as the apple of his eye. In spite of his premeditated carefulness, the floor would now and then creak; his garments would rustle; the shadow of his presence. in a forbidden proximity, would be thrown across his victim. In other words, Mr. Dimmesdale, whose sensibility of nerve often produced the effect of spiritual intuition, would become vaguely aware that something inimical to his peace had thrust itself into relation with him. But Old Roger Chillingworth, too, had perceptions that were almost intuitive; and when the minister threw his startled eves towards him, there the physician sat; his kind, watchful. sympathising, but never intrusive friend.

Yet Mr. Dimmesdale would perhaps have seen this individual's character more perfectly, if a certain morbidness, to which sick hearts are liable, had not rendered him suspicious of all mankind. Trusting no man as his friend, he could not recognize his enemy when the latter actually appeared. He therefore still kept up a familiar intercourse with him, daily receiving the old physician in his study, or visiting the laboratory, and, for recreation's sake, watching the processes by which weeds were converted into drugs of

potency.

One day, leaning his forehead on his hand, and his elbow on the sill of the open window, that looked towards the grave-yard, he talked with Roger Chillingworth, while the old man was examining a bundle of unsightly plants.

"Where," asked he, with a look of askance at them—for it was the clergyman's peculiarity that he seldom, now-a-days, looked straight forth at any object, whether human or inanimate—"where, my kind doctor, did you gather those herbs, with such a dark, flabby leaf?"

"Even in the graveyard here at hand," answered the physician, continuing his employment. "They are new to

me. I found them growing on a grave, which bore no tombstone, no other memorial of the dead man, save these ugly weeds, that have taken upon themselves to keep him in remembrance. They grew out of his heart, and typify, it may be, some hideous secret that was buried with him, and which he had done better to confess during his lifetime."

"Perchance," said Mr. Dimmesdale, "he earnestly desired

it, but could not."

"And wherefore?" rejoined the physician. "Wherefore not; since all the powers of nature call so earnestly for the confession of sin, that these black weeds have sprung up out of a buried heart, to make manifest an outspoken crime?"

"That, good sir, is but a phantasy of yours," replied the minister. "There can be, if I forbode aright, no power, short of the Divine mercy, to disclose, whether by uttered words, or by type or emblem, the secrets that may be buried in the human heart. The heart, making itself guilty of such secrets. must perforce hold them, until the day when all hidden things shall be revealed. Nor have I so read or interpreted Holy Writ, as to understand that the disclosure of human thoughts and deeds, then to be made, is intended as a part of the retribution. That, surely, were a shallow view of it. No; these revelations, unless I greatly err, are meant merely to promote the intellectual satisfaction of all intelligent beings, who will stand waiting, on that day, to see the dark problem of this life made plain. A knowledge of men's hearts will be needful to the completest solution of that problem. And, I conceive moreover, that the hearts holding such miserable secrets as you speak of, will yield them up, at that last day, not with reluctance, but with a joy unutterable."

"Then why not reveal it here?" asked Roger Chillingworth, glancing quietly aside at the minister. "Why should not the guilty ones sooner avail themselves of this unutterable solace?"

"They mostly do," said the clergyman, griping hard at his breast, as if affected with an importunate throb of pain. "Many, many a poor soul hath given its confidence to me, not only on the death-bed, but while strong in life, and fair in reputation. And ever, after such an outpouring, oh, what a relief have I witnessed in those sinful brethren! even as in one

who at last draws free air, after a long stifling with his own polluted breath. How can it be otherwise? Why should a wretched man-guilty, we will say, of murder-prefer to keen the dead corpse buried in his own heart, rather than fling it forth at once, and let the universe take care of it!"

"Yet some men bury their secrets thus," observed the calm

physician.

"True; there are such men," answered Mr. Dimmesdale. "But not to suggest more obvious reasons, it may be that they are kept silent by the very constitution of their nature. Or-can we not suppose it?-guilty as they may be, retaining. nevertheless, a zeal for God's glory and man's welfare, they shrink from displaying themselves black and filthy in the view of men: because, thenceforward, no good can be achieved by them; no evil of the past be redeemed by better service. So, to their own unutterable torment, they go about among their fellow-creatures, looking pure as new-fallen snow, while their hearts are all speckled and spotted with iniquity of which they cannot rid themselves."

"These men deceive themselves," said Roger Chillingworth, with somewhat more emphasis than usual, and making a slight gesture with his forefinger. "They fear to take up the shame that rightfully belongs to them. Their love for man, their zeal for God's service—these holy impulses may or may not co-exist in their hearts with the evil inmates to which their guilt has unbarred the door, and which must needs propagate a hellish breed within them. But, if they seek to glorify God, let them not lift heavenward their unclean hands! If they would serve their fellow-man, let them do it by making manifest the power and reality of conscience, in constraining them to penitential self-abasement! Would thou have me to believe, O wise and pious friend, that a false show can be better-can be more for God's glory, or man's welfare-than God's own truth? Trust me, such men deceive themselves!"

"It may be so," said the young clergyman, indifferently, as waiving a discussion that he considered irrelevant or unseasonable. He had a ready faculty, indeed, of escaping from any topic that agitated his too senstive and nervous temperament.-"But, now, I would ask of my well-skilled physician, whether, in good sooth, he deems me to have profited by his kindly care of this weak frame of mine?"

Before Roger Chillingworth could answer, they heard the clear, wild laughter of a young child's voice, proceeding from the adjacent burial-ground. Looking instinctively from the open window-for it was summer-time-the minister beheld Hester Prvnne and little Pearl passing along the footpath that traversed the enclosure. Pearl looked as beautiful as the day, but was in one of those moods of perverse merriment which, whenever they occurred, seemed to remove her entirely out of the sphere of sympathy or human contact. She now skipped irreverently from one grave to another; until coming to the broad, flat, armorial tombstone of a departed worthy—perhaps of Isaac Johnson himself—she began to dance upon it. In reply to her mother's command and entreaty that she would behave more decorously, little Pearl paused to gather the prickly burrs from a tall burdock which grew beside the tomb. Taking a handful of these, she arranged them along the lines of the scarlet letter that decorated the maternal bosom, to which the burrs, as their nature was, tenaciously adhered. Hester did not pluck them off.

Roger Chillingworth had by this time approached the

window and smiled grimly down.

"There is no law, nor reverence for authority, no regard for human ordinances or opinions, right or wrong, mixed up with that child's composition," remarked he, as much to himself as to his companion. "I saw her, the other day, bespatter the Governor himself with water at the cattle-trough in Spring Lane. What, in heaven's name, is she? Is the impaltogether evil? Hath she affections? Hath she any discoverable principle of being?"

"None, save the freedom of a broken law," answered Mr. Dimmesdale, in a quiet way, as if he had been discussing the point within himself. "Whether capable of good, I know not."

The child probably overheard their voices, for, looking up to the window with a bright, but naughty smile of mirth and intelligence, she threw one of the prickly burrs at the Rev. Mr. Dimmesdale. The sensitive clergyman shrank, with nervous dread, from the light missile. Detecting his emotion,

Pearl clapped her little hands in the most extravagant ecstasy. Hester Prynne, likewise, had involuntarily looked up, and all these four persons, old and young, regarded one another in silence, till the child laughed aloud, and shouted—"Come away, mother! Come away, or yonder old black man will catch you! He hath got hold of the minister already. Come away, mother, or he will catch you! But he cannot catch little Pearl!"

So she drew her mother away, skipping, dancing, and frisking fantastically among the hillocks of the dead people, like a creature that had nothing in common with a bygone and buried generation, nor owned herself akin to it. It was as if she had been made afresh out new elements, and must perforce be permitted to live her own life, and be a law unto herself without her eccentricities being reckoned to her for a crime.

"There goes a woman," resumed Roger Chillingworth, after a pause, "who, be her demerits what they may, hath none of that mystery of hidden sinfulness which you deem so grievous to be borne. Is Hester Prynne the less miserable, think you, for that scarlet letter on her breast?"

"I do verily believe it," answered the clergyman. "Nevertheless, I cannot answer for her. There was a look of pain in her face which I would gladly have been spared the sight of. But still, methinks, it must needs be better for the sufferer to be free to show his pain, as this poor woman Hester is, than to cover it up in his heart."

There was another pause, and the physician began anew to examine and arrange the plants which he had gathered.

"You inquired of me, a little time agone," said he, at length, "my judgment as touching your health."

"I did," answered the clergyman, "and would gladly learn it. Speak frankly, I pray you, be it for life or death."

"Freely then, and plainly," said the physician, still busy with his plants, but keeping a wary eye on Mr. Dimmesdale, "the disorder is a strange one; not so much in itself, nor as outwardly manifested,—in so far, at least as the symptoms have been laid open to my observation. Looking daily at you, my good sir, and watching the tokens of your aspect now for months gone by, I should deem you a man sore sick

it may be, yet not so sick but that an instructed and watchful physician might well hope to cure you. But I know not what to say, the disease is what I seem to know, yet know it not."

"You speak in riddles, learned sir," said the pale minister, glancing aside out of the window.

"Then, to speak more plainly," continued the physician, "and I crave pardon, sir, should it seem to require pardon, for this needful plainness of my speech. Let me ask as your friend, as one having charge, under Providence, of your life and physical well being, hath all the operations of this disorder been fairly laid open and recounted to me?"

"How can you question it?" asked the minister. "Surely it were child's play to call in a physician and then hide the sore!"

"You would tell me, then, that I know all?" said Roger Chillingworth, deliberately, and fixing an eye, bright with intense and concentrated intelligence, on the minister's face. "Be it so! But again! He to whom only the outward and physical evil is laid open, knoweth, oftentimes, but half the evil which he is called upon to cure. A bodily disease, which we look upon as whole and entire within itself, may, after all, be but a symptom of some ailment in the spiritual part. Your pardon once again, good sir, if my speech give the shadow of offence. You, sir, of all men whom I have known, are he whose body is the closest conjoined, and imbued, and identified, so to speak, with the spirit whereof it is the instrument."

"Then I need ask no further," said the clergyman, somewhat hastily rising from his chair. "You deal not, I take it, in medicine for the soul!"

"Thus, a sickness," continued Roger Chillingworth, going on, in an unaltered tone, without heeding the interruption, but standing up and confronting the emaciated and white-cheeked minister, with his low, dark, and misshapen figure,—"a sickness, a sore place, if we may so call it, in your spirit hath immediately its appropriate manifestation in your bodily frame. Would you, therefore, that your physician heal the bodily evil? How may this be unless you first lay open to him the wound or trouble in your soul?"

"No, not to thee! not to an earthly physician!" cried Mr. Dimmesdale, passionately, turning his eyes, full and bright, and with a kind of fierceness, on old Roger Chillingworth. "Not to thee! But, if it be the soul's disease, then do I commit myself to the one Physician of the soul! He, if it stand with His good pleasure, can cure, or he can kill. Let Him do with me as, in His justice and wisdom, He shall see good. But who art thou, that meddlest in this matter? that dares thrust himself between the sufferer and his God?"

With a frantic gesture he rushed out of the room.

"It is as well to have made this step," said Roger Chillingworth to himself, looking after the minister, with a grave smile. "There is nothing lost. We shall be friends again anon. But see, now, how passion takes hold upon this man, and hurrieth him out of himself! As with one passion so with another. He hath done a wild thing ere now, this pious Master Dimmesdale, in the hot passion of his heart."

It proved not difficult to re-establish the intimacy of the two companions, on the same footing and in the same degree as heretofore. The young clergyman, after a few hours of privacy, was sensible that the disorder of his nerves had hurried him into an unseemly outbreak of temper, which there had been nothing in the physician's words to excuse or palliate. He marvelled, indeed, at the violence with which he had thrust back the kind old man, when merely proffering the advice which it was his duty to bestow, and which the minister himself had expressly sought. With these remorseful feelings, he lost no time in making the amplest apologies, and besought his friend still to continue the care which, if not successful in restoring him to health, had, in all probability, been the means of prolonging his feeble existence to that hour. Roger Chillingworth readily assented, and went on with his medical supervision of the minister; doing his best for him, in all good faith, but always quitting the patient's apartment, at the close of the professional interview, with a mysterious and puzzled smile upon his lips. This expression was invisible in Mr. Dimmesdale's presence, but grew strongly evident as the physician crossed the threshold.

"A rare case," he muttered. "I must needs look deeper into it. A strange sympathy betwixt soul and body! Were

it only for the art's sake, I must search this matter to the bottom."

It came to pass, not long after the scene above recorded. that the Reverend Mr. Dimmesdale, at noon-day, and entirely unawares, fell into a deep, deep slumber, sitting in his chair, with a large black-letter volume open before him on the table. It must have been a work of vast ability in the somniferous school of literature. The profound depth of the minister's repose was the more remarkable, inasmuch as he was one of those persons whose sleep ordinarily is as light as fitful, and as easily scared away, as a small bird hopping on a twig. To such an unwonted remoteness, however, had his spirit now withdrawn into itself, that he stirred not in his chair when old Roger Chillingworth, without any extraordinary precaution, came into the room. The physician advanced directly in front of his patient, laid his hand upon his bosom, and thrust aside the vestment, that hitherto had always covered it even from the professional eye.

Then, indeed, Mr. Dimmesdale shuddered, and slightly

stirred.

After a brief pause, the physician turned away.

But with what a wild look of wonder, joy, and horror! With what a ghastly rapture, as it were, too mighty to be expressed only by the eye and features, and therefore bursting forth through the whole ugliness of his figure, and making itself even riotously manifest by the extravagant gestures with which he threw up his arms towards the ceiling, and stamped his foot upon the floor! Had a man seen old Roger Chillingworth, at that moment of his ecstasy, he would have had no need to ask how Satan comports himself, when a precious human soul is lost to heaven, and won into his kingdom.

But what distinguished the physician's ecstasy from Satan's

was the trait of wonder in it!

## CHAPTER XI

## THE INTERIOR OF A HEART

FTER the incident last described, the intercourse between the clergyman and the physician, though externally the same, was really of another character than it had previously been. The intellect of Roger Chillingworth had now a sufficiently plain path before it. It was not, indeed, precisely that which he had laid out for himself to tread. Calm. gentle, passionless, as he appeared, there was vet, we fear, a quiet depth of malice, hitherto latent, but active now, in this unfortunate old man, which led him to imagine a more intimate revenge than any mortal had ever wreaked upon an enemy. To make himself the one trusted friend, to whom should be confided all the fear, the remorse, the agony, the ineffectual repentance, the backward rush of sinful thoughts, expelled in vain! All that guilty sorrow, hidden from the world, whose great heart would have pitied and forgiven, to be revealed to him, the Pitiless-to him, the Unforgiving! All that dark treasure to be lavished on the very man, to whom nothing else could so adequately pay the debt of vengeance!

The clergyman's shy and sensitive reserve had balked this scheme. Roger Chillingworth, however, was inclined to be hardly, if at all, less satisfied with the aspect of affairs, which Providence—using the avenger and his victim for its own purposes, and, perchance, pardoning, where it seemed most to punish—had substituted for his black devices. A revelation, he could almost say, had been granted to him. It mattered little for his object, whether celestial or from what other region. By its aid, in all the subsequent relations betwixt him and Mr. Dimmesdale, not merely the external presence, but the very inmost soul of the latter, seemed to be brought out before his eyes, so that he could see and comprehend its every movement. He became, thenceforth, not a

spectator only, but a chief actor in the poor minister's interior world. He could play upon him as he chose. Would he arouse him with a throb of agony? The victim was for ever on the rack; it needed only to know the spring that controlled the engine: and the physician knew it well. Would he startle him with sudden fear? As at the waving of a magician's wand, up rose a grisly phantom—up rose a thousand phantoms—in many shapes, of death, or more awful shame, all flocking round about the clergyman, and pointing with their fingers at his breast!

All this was accomplished with a subtlety so perfect, that the minister, though he had constantly a dim perception of some evil influence watching over him, could never gain a knowledge of its actual nature. True, he looked doubtfully, fearfully-even, at times, with horror and the bitterness of hatred—at the deformed figure of the old physician. His gestures, his gait, his grizzled beard, his slightest and most indifferent acts, the very fashion of his garments, were odious in the clergyman's sight; a token implicitly to be relied on of a deeper antipathy in the breast of the latter than he was willing to acknowledge to himself. For, as it was impossible to assign a reason for such distrust and abhorrence, so Mr. Dimmesdale, conscious that the poison of one morbid spot was infecting his heart's entire substance, attributed all his presentiments to no other cause. He took himself to task for his bad sympathies in reference to Roger Chillingworth, disregarded the lesson that he should have drawn from them, and did his best to root them out. Unable to accomplish this, he nevertheless, as a matter of principle, continued his habits of social familiarity with the old man. and thus gave him constant opportunities for perfecting the purpose to which—poor forlorn creature that he was, and more wretched than his victim—the avenger had devoted himself.

While thus suffering under bodily disease, and gnawed and tortured by some black trouble of the soul, and given over to the machinations of his deadliest enemy, the Reverend Mr. Dimmesdale had achieved a brilliant popularity in his sacred office. He won it indeed, in great part, by his sorrows. His intellectual gifts, his moral perceptions, his power of experi-

encing and communicating emotion, were kept in a state of preternatural activity by the prick and anguish of his daily life. His fame, though still on its upward slope, already overshadowed the soberer reputations of his fellow-clergymen, eminent as several of them were. There were scholars among them, who had spent more years in acquiring abstruse lore, connected with the divine profession, that Mr. Dimmesdale had lived; and who might well, therefore, be more profoundly versed in such solid and valuable attainments than their youthful brother. There were men, too, of a sturdier texture of mind than his, and endowed with a far greater share of shrewd, hard iron, or granite understanding; which, duty mingled with a fair proportion of doctrinal ingredient. constitutes a highly respectable, efficacious, and unamiable variety of the clerical species. There were others again, true saintly fathers, whose faculties had been elaborated by wary toil among their books, and by patient thought, and etherealised, moreover, by spiritual communications with the better world, into which their purity of life had almost introduced these holy personages, with their garments of mortality still clinging to them. All that they lacked was, the gift that descended upon the chosen disciples at Pentecost, in tongues of flame; symbolising, it would seem, not the power of speech in foreign and unknown languages, but that of addressing the whole human brotherhood in the heart's native language. These fathers, otherwise so apostolic, lacked Heaven's last and rarest attestation of their office, the Tongue of Flame. They would have vainly sought-had they ever dreamed of seeking—to express the highest truths through the humblest medium of familiar words and images. Their voices came down, afar and indistinctly, from the upper heights where they habitually dwelt.

Not improbably, it was to this latter class of men that Mr. Dimmesdale, by many of his traits of character, naturally belonged. To the high mountain peaks of faith and sanctity he would have climbed, had not the tendency been thwarted by the burden, whatever it might be, of crime or anguish, beneath which it was his doom to totter. It kept him down on a level with the lowest; him, the man of ethereal attributes, whose voice the angels might else have listened to and

answered! But this very burden it was that gave him sympathies so intimate with the sinful brotherhood of mankind: so that his heart vibrated in unison with theirs, and received their pain into itself, and sent its own throb of pain through a thousand other hearts, in gushes of sad, persuasive eloquence. Oftenest persuasive, but sometimes terrible! people knew not the power that moved them thus. They deemed the young clergyman a miracle of holiness. fancied him the mouth-piece of Heaven's messages of wisdom, and rebuke, and love. In their eyes, the very ground on which he trod was sanctified. The virgins of his church grew pale around him, victims of a passion so imbued with religious sentiment, that they imagined it to be all religion, and brought it openly, in their white bosoms, as their most acceptable sacrifice before the altar. The aged members of his flock, beholding Mr. Dimmesdale's frame so feeble, while they were themselves so rugged in their infirmity, believed that he would go heavenward before them, and enjoined it upon their children that their old bones should be buried close to their young pastor's holy grave. And all this time, perchance, when poor Mr. Dimmesdale was thinking of his grave, he questioned with himself whether the grass would ever grow on it, because an accursed thing must there be buried!

It is inconceivable, the agony with which this public veneration tortured him. It was his genuine impulse to adore the truth, and to reckon all things shadow-like, and utterly devoid of weight or value, that had not its divine essence as the life within their life. Then what was he?—a substance? -or the dimmest of all shadows? He longed to speak out from his own pulpit at the full height of his voice, and tell the people what he was. "I, whom you behold in these black garments of the priesthood—I, who ascend the sacred desk, and turn my pale face heavenward, taking upon myself to hold communion in your behalf with the Most High Omniscience-I, in whose daily life you discern the sanctity of Enoch—I, whose footsteps, as you suppose, leave a gleam along my earthly track, whereby the Pilgrims that shall come after me may be guided to the regions of the blest-I, who have laid the hand of baptism upon your children-I, who have breathed the parting prayer over your dying friends, to whom the Amen sounded faintly from a world which they had quitted—I, your pastor, whom you so reverence and trust, am utterly a pollution and a lie!"

More than once. Mr. Dimmesdale had gone into the pulpit, with a purpose never to come down its steps until he should have spoken words like the above. More than once he had cleared his throat, and drawn in the long, deep, and tremulous breath, which, when sent forth again, would come burdened with the black secret of his soul. More than once -nay, more than a hundred times—he had actually spoken! Spoken! But how? He had told his hearers that he was altogether vile, a viler companion of the vilest, the worst of sinners, an abomination, a thing of unimaginable iniquity, and that the only wonder was that they did not see his wretched body shrivelled up before their eyes by the burning wrath of the Almighty! Could there be plainer speech than this? Would not the people start up in their seats, by a simultaneous impulse, and tear him down out of the pulpit which he defiled? Not so, indeed! They heard it all, and did but reverence him the more. They little guessed that deadly purport lurked in those self-condemning words. "The godly youth!" said they among themselves. "The saint on earth! Alas! if he discern such sinfulness in his own white soul, what horrid spectacle would he behold in thine or mine!" The minister well knew—subtle, but remorseful hypocrite that he was !- the light in which his vague confession would be viewed. He had striven to put a cheat upon himself by making the avowal of a guilty conscience, but had gained only one other sin, and a self-acknowledged shame, without the momentary relief of being self-deceived. He had spoken the very truth, and transformed it into the veriest falsehood. And yet, by the constitution of his nature, he loved the truth, and loathed the lie, as few men ever did. Therefore, above all things else, he loathed his miserable self!

His inward trouble drove him to practices more in accordance with the old, corrupted faith of Rome than with the better light of the church in which he had been born and bred. In Mr. Dimmesdale's secret closet, under lock and key, there was a bloody scourge. Oftentimes, this Protestant

and Puritan divine had plied it on his own shoulders, laughing bitterly at himself the while, and smiting so much the more pitilessly because of that hitter laugh. It was his custom, too, as it has been that of many other pious Puritans, to fast—not however, like them, in order to purify the body, and render it the fitter medium of celestial illumination—but rigorously, and until his knees trembled beneath him, as an act of penance. He kept vigils, likewise, night after night, sometimes in utter darkness, sometimes with a glimmering lamp, and sometimes, viewing his own face in a looking-glass, by the most powerful light which he could throw upon it. He thus typified the constant introspection wherewith he tortured, but could not purify himself. In these lengthened vigils, his brain often reeled, and visions seemed to flit before him; perhaps seen doubtfully, and by a faint light of their own, in the remote dimness of the chamber, or more vividly and close beside him, within the looking-glass. Now it was a herd of diabolic shapes, that grinned and mocked at the pale minister, and beckoned him away with them; now a group of shining angels, who flew upward heavily, as sorrowladen, but grew more ethereal as they rose. Now came the dead friends of his youth, and his white-bearded father, with a saint-like frown, and his mother turning her face away as she passed by. Ghost of a mother—thinnest fantasy of a mother—methinks she might vet have thrown a pitying glance towards her son! And now, through the chamber which these spectral thoughts had made so ghastly, glided Hester Prynne, leading along little Pearl, in her scarlet garb, and pointing her forefinger, first at the scarlet letter on her bosom, and then at the clergyman's own breast.

None of these visions ever quite deluded him. At any moment, by an effort of his will, he could discern substances through their misty lack of substance, and convince himself that they were not solid in their nature, like yonder table of carved oak, or that big, square, leather-bound and brazenclasped volume of divinity. But, for all that, they were, in one sense, the truest and most substantial things which the poor minister now dealt with. It is the unspeakable misery of a life so false as his, that it steals the pith and substance out of whatever realities there are around us, and which

were meant by Heaven to be the spirit's joy and nutriment. To the untrue man, the whole universe is false—it is impalpable—it shrinks to nothing within his grasp. And he himself, in so far as he shows himself in a false light, becomes a shadow, or, indeed, ceases to exist. The only truth that continued to give Mr. Dimmesdale a real existence on this earth was the anguish in his inmost soul, and the undissembled expression of it in his aspect. Had he once found power to smile, and wear a face of gaiety, there would have been no such man!

On one of those ugly nights, which we have faintly hinted at, but forborne to picture forth, the minister started from his chair. A new thought had struck him. There might be a moment's peace in it. Attiring himself with as much care as if it had been for public worship, and precisely in the same manner, he stole softly down the staircase, undid the door, and issued forth.

## CHAPTER XII

## THE MINISTER'S VIGIL

ALKING in the shadow of a dream, as it were, and perhaps actually under the influence of a species of somnambulism, Mr. Dimmesdale reached the spot where, now so long since, Hester Prynne had lived through her first hours of public ignominy. The same platform or scaffold, black and weather-stained with the storm or sunshine of seven long years, and foot-worn, too, with the tread of many culprits who had since ascended it, remained standing beneath the balcony of the meeting-house. The minister went up the steps.

It was an obscure night in early May. An unwearied pall of cloud muffled the whole expanse of sky from zenith to horizon. If the same multitude which had stood as evewitnesses while Hester Prynne sustained her punishment could now have been summoned forth, they would have discerned no face above the platform nor hardly the outline of a human shape, in the dark grey of the midnight. But the town was all asleep. There was no peril of discovery. The minister might stand there, if it so pleased him, until morning should redden in the east, without other risk than that the dank and chill night air would creep into his frame, and stiffen his joints with rheumatism, and clog his throat with catarrh and cough; thereby defrauding the expectant audience of to-morrow's prayer and sermon. No eye could see him, save that ever-wakeful one which had seen him in his closet, wielding the bloody scourge. Why, then, had he come thither? Was it but the mockery of penitence? A mockery, indeed, but in which his soul trifled with itself! A mockery at which angels blushed and wept, while fiends rejoiced with jeering laughter! He had been driven hither by the impulse of that Remorse which dogged him everywhere, and whose own sister and closely linked companion was that Cowardice

which invariably drew him back, with her tremulous gripe, just when the other impulse had hurried him to the verge of a disclosure. Poor, miserable man! what right had infirmity like this to burden itself with crime? Crime is for the ironnerved, who have their choice either to endure it, or, if it press too hard, to exert their fierce and savage strength for a good purpose, and fling it off at once! This feeble and most sensitive of spirits could do neither, yet continually did one thing or another, which intertwined, in the same inextricable knot, the agony of heaven-defying guilt and vain repentance.

And thus, while standing on the scaffold, in this vain show of expiation, Mr. Dimmesdale was overcome with a great horror of mind, as if the universe were gazing at a scarlet token on his naked breast, right over his heart. On that spot, in very truth, there was, and there had long been, the gnawing and poisonous tooth of bodily pain. Without any effort of his will, or power to restrain himself, he shrieked aloud: an outcry that went pealing through the night, and was beaten back from one house to another, and reverberated from the hills in the background; as if a company of devils, detecting so much misery and terror in it, had made a plaything of the sound, and were bandying it to and fro.

"It is done!" muttered the minister, covering his face with his hands. "The whole town will awake and hurry forth,

and find me here!"

But it was not so. The shriek had perhaps sounded with a far greater power, to his own startled ears, than it actually possessed. The town did not awake; or, if it did, the drowsy slumberers mistook the cry either for something frightful in a dream, or for the noise of witches, whose voices, at that period, were often heard to pass over the settlements or lonely cottages, as they rode with Satan through the air. The clergyman, therefore, hearing no symptoms of disturbance, uncovered his eyes and looked about him. At one of the chamber-windows of Governor Bellingham's mansion, which stood at some distance, on the line of another street, he beheld the appearance of the old magistrate himself, with a lamp in his hand, a white night-cap on his head, and a long white gown enveloping his figure. He looked like a ghost evoked unseasonably from the grave. The cry had evidently startled

him. At another window of the same house, moreover appeared old Mistress Hibbins, the Governor's sister, also with a lamp, which even thus far off, revealed the expression of her sour and discontented face. She thrust forth her head from the lattice, and looked anxiously upward. Beyond the shadow of a doubt, this venerable witch-lady had heard Mr. Dimmesdale's outcry, and interpreted it, with its multitudinous echoes and reverberations, as the clamour of the fiends and night-hags, with whom she was well known to make excursions in the forest.

Detecting the gleam of Governor Bellingham's lamp, the old lady quickly extinguished her own, and vanished. Possibly, she went up among the clouds. The minister saw nothing further of her motions. The magistrate, after a wary observation of the darkness—into which, nevertheless, he could see but little further than he might into a mill-stone—retired from the window.

The minister grew comparatively calm. His eyes, however, were soon greeted by a little glimmering light, which, at first a long way off, was approaching up the street. It threw a gleam of recognition, on here a post, and there a garden fence, and here a latticed window-pane, and there a pump. with its full trough of water, and here again an arched door of oak, with an iron knocker, and a rough log for the doorstep. The Reverend Mr. Dimmesdale noted all these minute particulars, even while firmly convinced that the doom of his existence was stealing onward, in the footsteps which he now heard; and that the gleam of the lantern would fall upon him in a few moments more, and reveal his long-hidden secret. As the light drew nearer, he beheld, within its illuminated circle, his brother clergyman—or, to speak more accurately, his professional father, as well as highly valued friend-the Reverend Mr. Wilson, who, as Mr. Dimmesdale now conjectured, had been praying at the bedside of some dying man. And so he had. The good old minister came freshly from the death-chamber of Governor Winthrop, who had passed from earth to heaven within that very hour. And now surrounded, like the saint-like personage of olden times. with a radiant halo, that glorified him amid this gloomy night of sin-as if the departed Governor had left him an

inheritance of his glory, or as if he had caught upon himself the distant shine of the celestial city, while looking thitherward to see the triumphant pilgrim pass within its gates—now, in short, good Father Wilson was moving homeward, aiding his footsteps with a lighted lantern! The glimmer of this luminary suggested the above conceits to Mr. Diminesdale, who smiled—nay, almost laughed at them—and then wondered if he was going mad.

As the Reverend Mr. Wilson passed beside the scaffold, closely muffling his Geneva cloak about him with one arm, and holding the lantern before his breast with the other, the minister could hardly restrain himself from speaking—

"A good evening to you, venerable Father Wilson. Come up hither, I pray you, and pass a pleasant hour with me!"

Good Heavens! Had Mr. Dimmesdale actually spoken? For one instant he believed that these words had passed his lips. But they were uttered only within his imagination. The venerable Father Wilson continued to step slowly onward, looking carefully at the muddy pathway before his feet, and never once turning his head towards the guilty platform. When the light of the glimmering lantern had faded quite away, the minister discovered, by the faintness which came over him, that the last few moments had been a crisis of terrible anxiety, although his mind had made an involuntary effort to relieve itself by a kind of lurid playfulness.

Shortly afterwards, the like grisly sense of the humorous again stole in among the solemn phantoms of his thought. He felt his limbs growing stiff with the unaccustomed chilliness of the night, and doubted whether he should be able to descend the steps of the scaffold. Morning would break and find him there. The neighbourhood would begin to rouse itself. The earliest riser, coming forth in the dim twilight, would perceive a vaguely-defined figure aloft on the place of shame; and half-crazed betwixt alarm and curiosity, would go knocking from door to door, summoning all the people to behold the ghost—as he needs must think it—of some defunct transgressor. A dusky tumult would flap its wings from one house to another. Then—the morning light still waxing stronger—old patriarchs would rise up in great haste,

each in his flannel gown, and matronly dames, without pausing to put off their night-gear. The whole tribe of decorous personages, who had never heretofore been seen with a single hair of their heads awry, would start into public view with the disorder of a nightmare in their aspects. Old Governor Bellingham would come grimly forth, with his King James' ruff fastened askew, and Mistress Hibbins, with some twigs of the forest clinging to her skirts, and looking sourer than ever, as having hardly got a wink of sleep after her night ride; and good Father Wilson too, after spending half the night at a death-bed, and liking ill to be disturbed, thus early, out of his dreams about the glorified saints. Hither, likewise, would come the elders and deacons of Mr. Dimmesdale's church, and the young virgins who so idolized their minister, and had made a shrine for him in their white bosoms, which now, by-the-bye, in their hurry and confusion, they would scantly have given themselves time to cover with All people, in a word, would come their kerchiefs. stumbling over their thresholds, and turning up their amazed and horror-stricken visages around the scaffold. Whom would they discern there, with the red eastern light upon his brow? Whom, but the Reverend Arthur Dimmesdale, half-frozen to death, overwhelmed with shame, and standing where Hester Prynne had stood!

Carried away by the grotesque horror of this picture, the minister, unawares, and to his own infinite alarm, burst into a great peal of laughter. It was immediately responded to by a light, airy, childish laugh, in which, with a thrill of the heart—but he knew not whether of exquisite pain, or pleasure as acute—he recognised the tones of little Pearl

"Pearl! Little Pearl!" cried he, after a moment's pause; then, suppressing his voice—"Hester! Hester Prynne! Are you there?"

"Yes; it is Hester Prynne!" she replied, in a tone of surprise; and the minister heard her footsteps approaching from the side-walk, along which she had been passing. "It is I, and my little Pearl."

"Whence come you, Hester?" asked the minister. "What sent you hither?"

"I have been watching at a death-bed," answered Hester Prynne—"at Governor Winthrop's death-bed, and have taken his measure for a robe, and am now going homeward to my dwelling."

"Come up hither, Hester, thou and Little Pearl," said the Reverend Mr. Dimmesdale. "Ye have both been here before, but I was not with you. Come up hither once again, and we will stand all three together."

She silently ascended the steps, and stood on the platform, holding little Pearl by the hand. The minister felt for the child's other hand, and took it. The moment that he did so, there came what seemed a tumultuous rush of new life, other life than his own pouring like a torreut into his heart, and hurrying through all his veins, as if the mother and the child were communicating their vital warmth to his half-torpid system. The three formed an electric chain.

"Minister!" whispered little Pearl.

"What wouldst thou say, child?" asked Mr. Dimmesdale.

"Wilt thou stand here with mother and me, to-morrow noontide?" inquired Pearl.

"Nay; not so, my little Pearl," answered the minister; for, with the new energy of the moment, all the dread of public exposure, that had so long been the anguish of his life, had returned upon him; and he was already trembling at the conjunction in which—with a strange joy, nevertheless—he now found himself—"not so, my child. I shall, indeed, stand with thy mother and thee one other day, but not to-morrow."

Pearl laughed and attempted to pull away her hand. But the minister held it fast.

"A moment longer, my child!" said he.

"But wilt thou promise," asked Pearl, "to take my hand, and mother's hand, to-morrow noontide?"

"Not then, Pearl," said the minister; "but another time."

"And what other time?" persisted the child.

"At the great judgment day," whispered the minister; and, strangely enough, the sense that he was a professional teacher of the truth impelled him to answer the child so. "Then, and there, before the judgment-seat, thy mother, and thou,

and I must stand together. But the daylight of this world shall not see our meeting!"

Pearl laughed again.

But before Mr. Dimmesdale had done speaking, a light gleamed far and wide over all the muffled sky. It was doubtless caused by one of those meteors, which the night-watcher may so often observe burning out to waste, in the vacant regions of the atmosphere. So powerful was its radiance. that it thoroughly illuminated the dense medium of cloud betwixt the sky and earth. The great vault brightened, like the dome of an immense lamp. It showed the familiar scene of the street with the distinctness of mid-day, but also with the awfulness that is always imparted to familiar objects by an unaccustomed light. The wooden houses, with their jutting storeys and quaint gable-peaks; the doorsteps and thresholds with the early grass springing up about them; the gardenplots, black with freshly-turned earth; the wheel-track, little worn, and even in the market-place margined with green on either side—all were visible, but with a singularity of aspect that seemed to give another moral interpretation to the things of this world than they had ever borne before. And there stood the minister, with his hand over his heart: and Hester Prynne, with the embroidered letter glimmering on her bosom; and little Pearl, herself a symbol, and the connecting link between those two. They stood in the noon of that strange and solemn splendour, as if it were the light that is to reveal all secrets, and the daybreak that shall unite all who belong to one another.

There was witchcraft in little Pearl's eyes; and her face, as she glanced upward at the minister, wore that naughty smile which made its expression frequently so elvish. She withdrew her hand from Mr. Dimmesdale's, and pointed across the street. But he clasped both his hands over his breast, and cast his eyes towards the zenith.

Nothing was more common, in those days, than to interpret all meteoric appearances, and other natural phenomena that occurred with less regularity than the rise and set of sun and moon, as so many revelations from a supernatural source. Thus, a blazing spear, a sword of flame, a bow, or a sheaf of arrows seen in the midnight sky, prefigured Indian warfare. Pestilence was known to have been foreboded by a shower of crimson light. We doubt whether any marked event, for good or evil, ever befell New England, from its settlement down to revolutionary times, of which the inhabitants had not been previously warned by some spectacle of its nature. Not seldom, it had been seen by multitudes. Oftener, however, its credibility rested on the faith of some lonely eye-witness, who beheld the wonder through the coloured, magnifying, and distorted medium of his imagination. and shaped it more distinctly in his after-thought. It was, indeed, a majestic idea, that the destiny of nations should be revealed, in these awful hieroglyphics, on the cope of heaven. A scroll so wide might not be deemed too expensive for Providence to write a people's doom upon. The belief was a favourite one with our forefathers, as betokening that their infant commonwealth was under a celestial guardianship of peculiar intimacy and strictness. But what shall we say, when an individual discovers a revelation, addressed to himself alone, on the same vast sheet of record. In such a case, it could only be the symptom of a highly disordered mental state, when a man, rendered morbidly self-contemplative by long, intense, and secret pain, had extended his egotism over the whole expanse of nature, until the firmament itself should appear no more than a fitting page for his soul's history and fate.

We impute it, therefore, solely to the disease in his own eye and heart that the minister, looking upward to the zenith, beheld there the appearance of an immense letter—the letter A—marked out in lines of dull red light. Not but the meteor may have shown itself at that point, burning duskily through a veil of cloud, but with no such shape as his guilty imagination gave it, or, at least, with so little definiteness, that another's guilt might have seen another symbol in it.

There was a singular circumstance that characterised Mr. Dimmesdale's psychological state at this moment. All the time that he gazed upward to the zenith, he was, nevertheless, perfectly aware that little Pearl was pointing her finger towards Roger Chillingworth, who stood at no great distance from the scaffold. The minister appeared to see him, with the same glance that discerned the miraculous letter. To

his features, as to all other objects, the meteoric light imparted a new expression; or it might well be that the physician was not careful then, as at all other times, to hide the malevolence with which he looked upon his victim. Certainly, if the meteor kindled up the sky, and disclosed the earth, with an awfulness that admonished Hester Prynne and the clergyman of the day of judgment, then might Roger Chillingworth have passed with them for the arch-fiend, standing there with a smile and scowl, to claim his own. So vivid was the expression, or so intense the minister's perception of it, that it seemed still to remain painted on the darkness after the meteor had vanished, with an effect as if the street and all things else were at once annihilated.

"Who is that man, Hester?" gasped Mr. Dimmesdale, overcome with terror. "I shiver at him! Dost thou know the

man? I hate him. Hester!"

She remembered her oath, and was silent.

"I tell thee, my soul shivers at him!" muttered the minister again. "Who is he? Who is he? Canst thou do nothing for me? I have a nameless horror of the man!"

"Minister," said little Pearl, "I can tell thee who he is!"
"Quickly, then, child!" said the minister, bending his ear
close to her lips. "Quickly, and as low as thou canst
whisper."

Pearl mumbled something into his ear that sounded, indeed, like human language, but was only such gibberish as children may be heard amusing themselves with by the hour together. At all events, if it involved any secret information in regard to old Roger Chillingworth, it was in a tongue unknown to the erudite clergyman, and did but increase the bewilderment of his mind. The elvish child then laughed aloud.

"Dost thou mock me now?" said the minister.

"Thou wast not bold!—thou wast not true!" answered the child. "Thou wouldst not promise to take my hand, and

mother's hand, to-morrow noontide!"

"Worthy sir," answered the physician, who had now advanced to the foot of the platform—"pious Master Dimmesdale! can this be you? Well, well, indeed! We men of study, whose heads are in our books, have need to be straitly looked after! We dream in our waking moments, and walk

in our sleep. Come, good sir, and my dear friend, I pray you let me lead you home!"

"How knewest thou that I was here?" asked the minister,

fearfully.

"Verily, and in good faith," answered Roger Chillingworth, "I knew nothing of the matter. I had spent the better part of the night at the bedside of the worshipful Governor Winthrop, doing what my poor skill might to give him ease. He, going home to a better world, I, likewise, was on my way homeward, when this light shone out. Come with me, I beseech you, Reverend sir, else you will be poorly able to do Sabbath duty to-morrow. Aha! see now how they trouble the brain—these books!—these books! You should study less, good sir, and take a little pastime, or these night whimsies will grow upon you."

"I will go home with you," said Mr. Dimmesdale.

With a chill despondency, like one awakening, all nerveless, from an ugly dream, he yielded himself to the physician, and was led away.

The next day, however, being the Sabbath, he preached a discourse which was held to be the richest and most powerful, and the most replete with heavenly influences, that had ever proceeded from his lips. Souls, it is said, more souls than one, were brought to the truth by the efficacy of that sermon, and vowed within themselves to cherish a holy gratitude towards Mr. Dimmesdale throughout the long hereafter. But as he came down the pulpit steps, the grey-bearded sexton met him, holding up a black glove, which the minister recognised as his own.

"It was found," said the Sexton, "this morning on the scaffold where the evil-doers are set up to public shame. Satan dropped it there, I take it, intending a scurrilous jest against your reverence. But, indeed, he was blind and foolish, as he ever and always is. A pure hand needs no

glove to cover it!"

"Thank you, my good friend," said the minister, gravely, but startled at heart; for so confused was his remembrance, that he had almost brought himself to look at the events of the past night as visionary.

"Yes, it seems to be my glove, indeed!"

"And, since Satan saw fit to steal it, your reverence must needs handle him without gloves henceforward," remarked the old sexton, grimly smiling. "But did your reverence hear of the portent that was seen last night?—a great red letter in the sky—the letter A, which we interpret to stand for Angel. For, as our good Governor Winthrop was made an angel this past night, it was doubtless held fit that there should be some notice thereof!"

"No," answered the minister; "I had not heard of it."

#### CHAPTER XIII

## Another View of Hester

N her late singular interview with Mr. Dimmesdale, Hester Prynne was shocked at the condition to which - she found the clergyman reduced. His nerve seemed absolutely destroyed. His moral force was abased into more than childish weakness. It grovelled helpless on the ground. even while his intellectual faculties retained their pristing strength, or had perhaps acquired a morbid energy, which disease only could have given them. With her knowledge of a train of circumstances hidden from all others, she could readily infer that, besides the legitimate action of his own conscience, a terrible machinery had been brought to bear, and was still operating, on Mr. Dimmesdale's well-being and repose. Knowing what this poor fallen man had once been, her whole soul was moved by the shuddering terror with which he had appealed to her—the outcast woman—for support against his instinctively discovered enemy. She decided, moreover, that he had a right to her utmost aid. accustomed, in her long seclusion from society, to measure her ideas of right and wrong by any standard external to herself, Hester saw—or seemed to see—that there lay a responsibility upon her in reference to the clergyman, which she owned to no other, nor to the whole world besides. The links that united her to the rest of humankind-links of flowers, or silk, or gold, or whatever the material—had all been broken. Here was the iron link of mutual crime, which neither he nor she could break. Like all other ties, it brought along with it its obligations.

Hester Prynne did not now occupy precisely the same position in which we beheld her during the earlier periods of her ignominy. Years had come and gone. Pearl was now seven years old. Her mother, with the scarlet letter on her breast, glittering in its fantastic embroidery, had long

been a familiar object to the townspeople. As is apt to be the case when a person stands out in any prominence before the community, and, at the some time, interferes neither with public nor individual interests and convenience, a species of general regard had ultimately grown up in reference to Hester Prynne. It is to the credit of human nature that, except where its selfishness is brought into play, it loves more readily than it hates. Hatred, by a gradual and quiet process, will even be transformed to love, unless the change be impeded by a continually new irritation of the original feeling of hostility. In this matter of Hester Prynne there was neither irritation nor irksomeness. She never battled with the public, but submitted uncomplainingly to its worst usage: she made no claim upon it in requital for what she suffered: she did not weigh upon its sympathies. Then, also, the blameless purity of her life during all these years in which she had been set apart to infamy was reckoned largely in her favour. With nothing now to lose, in the sight of mankind, and with no hope, and seemingly no wish, of gaining anything, it could only be a genuine regard for virtue that had brought back the poor wanderer to its paths.

It was perceived, too, that while Hester never put forward even the humblest title to share in the world's privileges further than to breathe the common air and earn daily bread for little Pearl and herself by the faithful labour of her hands-she was quick to acknowledge her sisterhood with the race of man whenever benefits were to be conferred. None so ready as she to give of her little substance to every demand of poverty, even though the bitter-hearted pauper threw back a gibe in requital of food brought regularly to his door, or the garments wrought for him by the fingers that could have embroidered a monarch's robe. None so self-devoted as Hester when pestilence stalked through the town. In all seasons of calamity, indeed, whether general or of individuals, the outcast of society at once found her place. She came, not as a guest, but as a rightful inmate. into the household that was darkened by trouble, as if its gloomy twilight were a medium in which she was entitled to hold intercourse with her fellow-creatures. There glimmered the embroidered letter, with comfort in its unearthly ray.

Elsewhere the token of sin, it was the taper of the sick chamber. It had even thrown its gleam, in the sufferer's hard extremity, across the verge of time. It had shown him where to set his foot, while the light of earth was fast becoming dim, and ere the light of futurity could reach him. In such emergencies Hester's nature showed itself warm and rich—a well-spring of human tenderness, unfailing to every real demand, and inexhaustible by the largest. Her breast, with its badge of shame, was but the softer pillow for the head that needed one. She was self-ordained a Sister of Mercy, or, we may rather say, the world's heavy hand had so ordained her, when neither the world nor she looked forward to this result. The letter was the symbol of her calling. Such helpfulness was found in her—so much power to do. and power to sympathise—that many people refused to interpret the scarlet A by its original signification. They said that it meant Abel, so strong was Hester Prynne, with a woman's strength.

It was only the dark house that could contain her. When sunshine came again, she was not there. Her shadow had faded across the threshold. The helpful inmate had departed, without one backward glance to gather up the meed of gratitude, if any were in the hearts of those whom she had served so zealously. Meeting them in the street, she never raised her head to receive their greeting. If they were resolute to accost her, she laid her finger on the scarlet letter, and passed This might be pride, but was so like humility. that it produced all the softening influence of the latter quality on the public mind. The public is despotic in its temper; it is capable of denying common justice when too strenuously demanded as a right; but quite as frequently it awards more than justice, when the appeal is made, as despots love to have it made, entirely to its generosity. Interpreting Hester Prynne's department as an appeal of this nature, society was inclined to show its former victim a more benign countenance than she cared to be favoured with, or, perchance, than she deserved.

The rulers, and the wise and learned men of the community, were longer in acknowledging the influence of Hester's good qualities than the people. The prejudices which

they shared in common with the latter were fortified in themselves by an iron framework of reasoning, that made it a far tougher labour to expel them. Day by day, nevertheless, their sour and rigid wrinkles were relaxing into something which. in the due course of years, might grow to be an expression of almost benevolence. Thus it was with the men of rank. on whom their eminent position imposed the guardianship of the public morals. Individuals in private life, meanwhile, had quite forgiven Hester Prynne for her frailty; nay, more. they had begun to look upon the scarlet letter as the token. not of that one sin for which she had borne so long and dreary a penance, but of her many good deeds since. "Do you see that woman with the embroidered badge?" they would say to strangers. "It is our Hester—the town's own Hester -who is so kind to the poor, so helpful to the sick, so comfortable to the afflicted!" Then, it is true, the propensity of human nature to tell the very worst of itself, when embodied in the person of another, would constrain them to whisper the black scandal of bygone years. It was none the less a fact, however, that in the eyes of the very men who spoke thus, the scarlet letter had the effect of the cross on a nun's bosom. It imparted to the wearer a kind of sacredness. which enabled her to walk securely amid all peril. Had she fallen among thieves, it would have kept her safe. It was reported, and believed by many, that an Indian had drawn his arrow against the badge, and that the missile struck it, and fell harmless to the ground.

The effect of the symbol—or rather, of the position in respect to society that was indicated by it—on the mind of Hester Prynne herself was powerful and peculiar. All the light and graceful foliage of her character had been withered up by this red-hot brand, and had long ago fallen away, leaving a bare and harsh outline, which might have been repulsive had she possessed friends or companions to be repelled by it. Even the attractiveness of her person had undergone a similar change. It might be partly owing to the studied austerity of her dress, and partly to the lack of demonstration in her manners. It was a sad transformation, too, that her rich and luxuriant hair had either been cut off, or was so completely hidden by a cap, that not a shining lock of it ever

once gushed into the sunshine. It was due in part to all these causes, but still more to something else, that there seemed to be no longer anything in Hester's face for Love to dwell upon; nothing in Hester's form, though majestic and statue like, that Passion would ever dream of clasping in its embrace; nothing in Hester's bosom to make it ever again the pillow of Affection. Some attribute had departed from her, the permanence of which had been essential to keep her a woman. Such is frequently the fate, and such the stern development, of the feminine character and person. when the woman has encountered, and lived through, an experience of peculiar severity. If she be all tenderness, she will die. If she survives, the tenderness will either be crushed out of her, or-and the outward semblance is the same—crushed so deeply into her heart that it can never show itself more. The letter is perhaps the truest theory. She who has once been a woman, and ceased to be so, might at any moment become a woman again, if there were only the magic touch to effect the transformation. We shall see whether Hester Prynne were ever afterwards so touched and so transfigured.

Much of the marble coldness of Hester's impression was to be attributed to the circumstance that her life had turned. in a great measure, from passion and feeling to thought. Standing alone in the world-alone, as to any dependence on society, and with little Pearl to be guided and protectedalone, and hopeless of retrieving her position, even had she not scorned to consider it desirable—she cast away the fragments of a broken chain. The world's law was no law for her mind. It was an age in which the human intellect, newly emancipated, had taken a more active and a wider range than for many centuries before. Men of the sword had overthrown nobles and kings. Men bolder than these had overthrown and rearranged—not actually, but within the sphere of theory, which was their most real abode—the whole system of ancient prejudice, wherewith was linked much of ancient principle. Hester Prynne imbibed this spirit. She assumed a freedom of speculation, then common enough on the other side of the Atlantic, but which our forefathers, had they known it, would have held to be a deadlier crime

than that stigmatised by the scarlet letter. In her lonesome cottage, by the seashore, thoughts visited her such as dared to enter no other dwelling in New England; shadowy guests, that would have been as perilous as demons to their entertainer, could they have been seen so much as knocking at her door.

It is remarkable that persons who speculate the most boldly often conform with the most perfect quietude to the external regulations of society. The thought suffices them. without investing itself in the flesh and blood of action. it seemed to be with Hester. Yet, had little Pearl never come to her from the spiritual world, it might have been far otherwise. Then she might have come down to us in history. hand in hand with Ann Hutchinson, as the foundress of a religious sect. She might, in one of her phases, have been a prophetess. She might, and not improbably would, have suffered death from the stern tribunals of the period, for attempting to undermine the foundations of the Puritan establishment. But, in the education of her child, the mother's enthusiasm of thought had something to wreak itself upon. Providence, in the person of this little girl, had assigned to Hester's charge, the germ and blossom of womanhood, to be cherished and developed amid a host of difficulties. Everything was against her. The world was hostile. The child's own nature had something wrong in it which continually betokened that she had been born amiss—the effluence of her mother's lawless passion—and often impelled Hester to ask. in bitterness of heart, whether it were for ill or good that the poor little creature had been born at all.

Indeed, the same dark question often rose into her mind with reference to the whole race of womanhood. Was existence worth accepting even to the happiest among them? As concerned her own individual existence, she had long ago decided in the negative, and dismissed the point as settled. A tendency to speculation, though it may keep women quiet, as it does man, yet makes her sad. She discerns, it may be, such a hopeless task before her. As a first step, the whole system of society is to be torn down and built up anew. Then the very nature of the opposite sex, or its long hereditary habit, which has become like nature, is to be essentially

modified before woman can be allowed to assume what seems a fair and suitable position. Finally, all other difficulties being obviated, woman cannot take advantage of these preliminary reforms until she herself shall have undergone a still mightier change, in which, perhaps, the ethereal essence, wherein she has her truest life, will be found to have evaporated. A woman never overcomes these problems by any exercise of thought. They are not to be solved, or only in one way. If her heart chance to come uppermost, they vanish. Thus Hester Prynne, whose heart had lost its regular and healthy throb, wandered without a clue in the dark labyrinth of mind: now turned aside by an insurmountable precipice; now starting back from a deep chasm. There was wild and ghastly scenery all around her, and a home and comfort nowhere. At times a fearful doubt strove to possess her soul, whether it were not better to send Pearl at once to Heaven, and go herself to such futurity as Eternal Justice should provide.

The scarlet letter had not done its office.

Now, however, her interview with the Reverend Mr. Dimmesdale, on the night of his vigil, had given her a new theme of reflection, and held up to her an object that appeared worthy of any exertion and sacrifice for its attainment. She had witnessed the intense misery beneath which the minister struggled, or, to speak more accurately, had ceased to struggle. She saw that he stood on the verge of lunacy, if he had not already stepped across it. It was impossible to doubt that, whatever painful efficacy there might be in the secret sting of remorse, a deadlier venom had been infused into it by the hand that proffered relief. A secret enemy had been continually by his side, under the semblance of a friend and helper, and had availed himself of the opportunities thus afforded for tampering with the delicate springs of Mr. Dimmesdale's nature. Hester could not but ask herself whether there had not originally been a defect of truth, courage, and loyalty on her own part, in allowing the minister to be thrown into a position where so much evil was to be foreboded and nothing auspicious to be hoped. Her only justification lay in the fact that she had been able to discern no method of rescuing him from a blacker ruin than had overwhelmed herself, except by acquiescing in Roger Chillingworth's scheme of disguise. Under that impulse she had made her choice, and had chosen, as it now appeared, the more wretched alternative of the two. She determined to redeem her error so far as it might yet be possible. Strengthened by years of hard and solemn trial, she felt herself no longer so inadequate to cope with Roger Chillingworth as on that night, abased by sin and half-maddened by the ignominy that was still new, when they had talked together in the prison-chamber. She had climbed her way since then to a higher point. The old man, on the other hand, had brought himself nearer to her level, or, perhaps, below it, by the revenge which he had stooped for.

In fine, Hester Prynne resolved to meet her former husband, and do what might be in her power for the rescue of the victim on whom he had so evidently set his gripe. The occasion was not long to seek. One afternoon, walking with Pearl in a retired part of the peninsula, she beheld the old physician with a basket on one arm and a staff in the other hand, stooping along the ground in quest of roots and

herbs to concoct his medicine withal.

### CHAPTER XIV

## HESTER AND THE PHYSICIAN

TESTER bade little Pearl run down to the margin of the water, and play with the shells and tangled seaweed, until she should have talked awhile with yonder gatherer of herbs. So the child flew away like a bird, and, making bare her small white feet, went pattering along the moist margin of the sea. Here and there she came to a full stop, and peeped curiously into a pool, left by the retiring tide as a mirror for Pearl to see her face in. Forth peeped at her, out of the pool, with dark, glistening curls around her head, and an elf-smile in her eyes, the image of a little maid whom Pearl, having no other playmate, invited to take her hand and run a race with her. But the visionary little maid on her part, beckoned likewise, as if to say-"This is a better place; come thou into the pool." And Pearl, stepping in mid-leg deep, beheld her own white feet at the bottom; while, out of a still lower depth, came the gleam of a kind of fragmentary smile, floating to and fro in the agitated water.

Meanwhile her mother had accosted the physician.

"I would speak a word with you," said she—"a word that concerns us much."

"Aha! and is it Mistress Hester that has a word for old Roger Chillingworth?" answered he, raising himself from his stooping posture. "With all my heart. Why, mistress, I hear good tidings of you on all hands! No longer ago than yester-eve, a magistrate, a wise and godly man, was discoursing of your affairs, Mistress Hester, and whispered me that there had been question concerning you in the council. It was debated whether or no, with safety to the commonweal, yonder scarlet letter might be taken off your bosom. On my life, Hester, I made my intreaty to the worshipful magistrate that it might be done forthwith."

147

"It lies not in the pleasure of the magistrates to take off the badge," calmly replied Hester. "Were I worthy to be quit of it, it would fall away of its own nature, or be transformed into something that should speak a different purport."

"Nay, then, wear it, if it suit you better," rejoined he. "A woman must needs follow her own fancy touching the adornment of her person. The letter is gaily embroidered, and

shows right bravely on your bosom!"

All this while Hester had been looking steadily at the old man, and was shocked, as well as wonder-smitten, to discern what a change had been wrought upon him within the past seven years. It was not so much that he had grown older: for though the traces of advancing life were visible he bore his age well, and seemed to retain a wiry vigour and alertness. But the former aspect of an intellectual and studious man, calm and quiet, which was what she best remembered in him, had altogether vanished, had been succeeded by an eager, searching, almost fierce, yet carefully guarded look. It seemed to be his wish and purpose to mask this expression with a smile, but the latter played him false, and flickered over his visage so derisively that the spectator could see his blackness all the better for it. Ever and anon, too, there came a glare of red light out of his eyes, as if the old man's soul were on fire and kept on smouldering duskily within his breast, until by some casual puff of passion it was blown into a momentary flame. This he repressed as speedily as possible, and strove to look as if nothing of the kind had happened.

In a word, old Roger Chillingworth was a striking evidence of man's faculty of transforming himself into a devil, if he will only for a reasonable space of time, undertake a devil's office. This unhappy person had effected such a transformation by devoting himself for seven years to the constant analysis of a heart full of torture, and deriving his enjoyment thence, and adding fuel to those fiery tortures

which he analysed and gloated over.

The scarlet letter burned on Hester Prynne's bosom. Here was another ruin, the responsibility of which came partly home to her.

"What see you in my face," asked the physician, "that you look at it so earnestly?"

"Something that would make me weep, if there were any tears bitter enough for it," answered she. "But let it pass!

It is of yonder miserable man that I would speak."

"And what of him?" cried Roger Chillingworth, eagerly, as if he loved the topic, and were glad of an opportunity to discuss it with the only person of whom he could make a confidant. "Not to hide the truth, Mistress Hester, my thoughts happen just now to be busy with the gentleman. So speak freely and I will make answer."

"When we last spake together," said Hester, "now seven years ago, it was your pleasure to extort a promise of secrecy as touching the former relation betwixt yourself and me. As the life and good fame of yonder man were in your hands there seemed no choice to me, save to be silent in accordance with your behest. Yet it was not without heavy misgivings that I thus bound myself, for, having cast off all duty towards other human beings, there remained a duty towards him, and something whispered me that I was betraying it in pledging myself to keep your counsel. Since that day no man is so near to him as you. You tread behind his every footstep. You are beside him, sleeping and waking. You search his thoughts. You burrow and rankle in his heart! Your clutch is on his life, and you cause him to die daily a living death, and still he knows you not. In permitting this I have surely acted a false part by the only man to whom the power was left me to be true!"

"What choice had you?" asked Roger Chillingworth. "My finger, pointed at this man, would have hurled him from his pulpit into a dungeon, thence, peradventure, to the

gallows!"

"It had been better so!" said Hester Prynne.

"What evil have I done the man?" asked Roger Chillingworth again. "I tell thee, Hester Prynne, the richest fee that ever physician earned from monarch could not have bought such care as I have wasted on this miserable priest! But for my aid his life would have burned away in torments within the first two years after the perpetration of his crime and thine. For, Hester, his spirit lacked the strength that

could have borne up, as thine has, beneath a burden like thy scarlet letter. Oh, I could reveal a goodly secret! But enough. What art can do, I have exhausted on him. That he now breathes and creeps about on earth is owing all to me!"

"Better he had died at once!" said Hester Prynne.

"Yea, woman, thou sayest truly!" cried old Roger Chillingworth, letting the lurid fire of his heart blaze out before her eves. "Better had he died at once! Never did mortal suffer what this man has suffered. And all, all, in the sight of his worst enemy! He has been conscious of me. He has felt an influence dwelling always upon him like a curse. He knew, by some spiritual sense—for the Creator never made another being so sensitive as this—he knew that no friendly hand was pulling at his heart-strings, and that an eye was looking curiously into him, which sought only evil, and found it. But he knew not that the eve and hand were mine! With the superstition common to his brotherhood, he fancied himself given over to a fiend, to be tortured with frightful dreams and desperate thoughts, the sting of remorse, and despair of pardon, as a foretaste of what awaits him beyond the grave. But it was the constant shadow of my presence. the closest propinquity of the man whom he had most vilely wronged, and who had grown to exist only by this perpetual poison of the direst revenge! Yea, indeed, he did not err, there was a fiend at his elbow! A mortal man, with once a human heart, has become a fiend for his especial torment."

The unfortunate physician, while uttering these words, lifted his hands with a look of horror, as if he had beheld some frightful shape, which he could not recognise, usurping the place of his own image in a glass. It was one of those moments—which sometimes occur only at the interval of years—when a man's moral aspect is faithfully revealed to his mind's eye. Not improbably he had never before viewed himself as he did now.

"Hast thou not tortured him enough?" said Hester, noticing the old man's look. "Has he not paid thee all?"

"No, no! He has but increased the debt!" answered the physician, and as he proceeded, his manner lost its fiercer

characteristics, and subsided into gloom. "Dost thou remember me, Hester, as I was nine years agone? Even then I was in the autumn of my days, nor was it the early autumn. But all my life had been made up of earnest, studious, thoughtful, quiet years, bestowed faithfully for the increase of mine own knowledge, and faithfully, too, though this latter object was but casual to the other-faithfully for the advancement of human welfare. No life had been more peaceful and innocent than mine; few lives so rich with benefits conferred. Dost thou remember me? Was I not, though you might deem me cold, nevertheless a man thoughtful for others, craving little for himself-kind, true, just, and of constant. if not warm affections? Was I not all this?"
"All this, and more," said Hester.

"And what am I now?" demanded he, looking into her face, and permitting the whole evil within him to be written on his features. "I have already told thee what I ani-a fiend! Who made me so?"

"It was myself," cried Hester, shuddering. "It was I, not less than he. Why hast thou not avenged thyself on me?"

"I have left thee to the scarlet letter," replied Roger Chillingworth. "If that has not avenged me, I can do no more!"

He laid his finger on it with a smile.

"It has avenged thee," answered Hester Prynne.

"I judged no less," said the physician. "And now what

wouldst thou with me touching this man?"

"I must reveal the secret," answered Hester, firmly. "He must discern thee in thy true character. What may be the result I know not. But this long debt of confidence, due from me to him, whose bane and ruin I have been, shall at length be paid. So far as concerns the overthrow or preservation of his fair fame and his earthly state, and perchance his life, he is in my hands. Nor do I-whom the scarlet letter has disciplined to truth, though it be the truth of red-hot iron entering into the soul-nor do I perceive such advantage in his living any longer a life of ghastly emptiness, that I shall stoop to implore thy mercy. Do with him as thou wilt! There is no good for him, no good for me, no good for thee. There is no good for little Pearl. There is no path to guide us out of this dismal maze."

"Woman, I could well-nigh pity thee," said Roger Chillingworth, unable to restrain a thrill of admiration too, for there was a quality almost majestic in the despair which she expressed. "Thou hadst great elements. Peradventure, hadst thou met earlier with a better love than mine, this evil had not been. I pity thee, for the good that has been wasted in thy nature."

"And I thee," answered Hester Prynne, "for the hatred that has transformed a wise and just man to a fiend! Wilt thou yet purge it out of thee, and be once more human? If not for his sake, then doubly for thine own! Forgive, and leave his further retribution to the Power that claims it! I said, but now, that there could be no good event for him, or thee, or me, who are here wandering together in this gloomy maze of evil, and stumbling at every step over the guilt wherewith we have strewn our path. It is not so! There might be good for thee, and thee alone, since thou hast been deeply wronged, and hast it at thy will to pardon. Wilt thou give up that only privilege? Wilt thou reject that priceless benefit?"

"Peace, Hester—peace!" replied the old man, with gloomy sternness—"it is not granted me to pardon. I have no such power as thou tellest me of. My old faith, long forgotten, comes back to me, and explains all that we do, and all we suffer. By thy first step awry, thou didst plant the germ of evil; but since that moment it has all been a dark necessity. Ye that have wronged me are not sinful, save in a kind of typical illusion; neither am I fiend-like, who have snatched a fiend's office from his hands. It is our fate. Let the black flower blossom as it may! Now, go thy ways, and deal as

thou wilt with vonder man."

He waved his hand, and betook himself again to his employment of gathering herbs.

### CHAPTER XV

## HESTER AND PEARL

O Roger Chillingworth-a deformed old figure with a face that haunted men's memories longer than they liked—took leave of Hester Prynne, and went stooping away along the earth. He gathered here and there a herb, or grubbed up a root and put it into the basket on his arm. His gray beard almost touched the ground as he crept onward. Hester gazed after him a little while, looking with a half fantastic curiosity to see whether the tender grass of early spring would not be blighted beneath him and show the wavering track of his footsteps, sere and brown, across its cheerful verdure. She wondered what sort of herbs they were which the old man was so sedulous to gather. not the earth, quickened to an evil purpose by the sympathy of his eye, greet him with poisonous shrubs of species hitherto unknown, that would start up under his fingers? Or might it suffice him that every wholesome growth should be converted into something deleterious and malignant at his touch? Did the sun, which shone so brightly everywhere else, really fall upon him? Or was there, as it rather seemed, a circle of ominous shadow moving along with his deformity whichever way he turned himself? And whither was he now going? Would he not suddenly sink into the earth, leaving a barren and blasted spot, where, in due course of time, would be seen deadly nightshade, dogwood, henbane, and whatever else of vegetable wickedness the climate could produce, all flourishing with hideous luxuriance? Or would he spread bat's wings and flee away, looking so much the uglier the higher he rose towards heaven?

"Be it sin or no," said Hester Prynne, bitterly, as still she

gazed after him, "I hate the man?"

She upbraided herself for the sentiment, but could not overcome or lessen it. Attempting to do so, she thought of those long-past days in a distant land, when he used to

emerge at eventide from the seclusion of his study and sit down in the fire-light of their home, and in the light of her nuptial smile. He needed to bask himself in that smile, he said, in order that the chill of so many lonely hours among his books might be taken off the scholar's heart. Such scenes had once appeared not otherwise than happy, but now, as viewed through the dismal medium of her subsequent life, they classed themselves among her ugliest remembrances. She marvelled how such scenes could have been! She marvelled how she could ever have been wrought upon to marry him! She deemed in her crime most to be repented of, that she had ever endured and reciprocated the lukewarm grasp of his hand, and had suffered the smile of her lips and eyes to mingle and melt into his own. And it seemed a fouler offence committed by Roger Chillingworth than any which had since been done him, that, in the time when her heart knew no better, he had persuaded her to fancy herself happy by his side.

"Yes, I hate him!" repeated Hester more bitterly than before. "He betrayed me! He has done me worse wrong than I did him!"

Let men tremble to win the hand of woman, unless they win along with it the utmost passion of her heart! Else it may be their miserable fortune, as it was Roger Chillingworth's, when some mightier touch than their own may have awakened all her sensibilities, to be reproached even for the calm content, the marble image of happiness, which they will have imposed upon her as the warm reality. But Hester ought long ago to have done with this injustice. What did it betoken? Had seven long years, under the torture of the scarlet letter, inflicted so much of misery and wrought out no repentance?

The emotion of that brief space, while she stood gazing after the crooked figure of old Roger Chillingworth, threw a dark light on Hester's state of mind, revealing much that she might not otherwise have acknowledged to herself.

He being gone, she summoned back her child.

"Pearl! Little Pearl! Where are you?"

Pearl, whose activity of spirit never flagged, had been at no loss for amusement while her mother talked with the old gatherer of herbs. At first, as already told, she had flirted fancifully with her own image in a pool of water, beckoning the phantom forth, and—as it declined to venture—seeking a passage for herself into its sphere of impalpable earth and unattainable sky. Soon finding, however, that either she or the image was unreal, she turned elsewhere for better pastime. She made little boats out of birch-bark, and freighted them with snail-shells, and sent out more ventures on the mighty deep than any merchant in New England; but the larger part of them foundered near the shore. She seized a live horse-shoe by the tail, and made prize of several five-fingers, and laid out a jelly-fish to melt in the warm sun.

Then she took up the white foam that streaked the line of the advancing tide, and threw it upon the breeze, scampering after it with winged footsteps to catch the great snowflakes ere they fell. Perceiving a flock of beach-birds that fed and fluttered along the shore, the naughty child picked up her apron full of pebbles, and, creeping from rock to rock after these small sea-fowl, displayed remarkable dexterity in pelting them. One little gray bird, with a white breast, Pearl was almost sure had been hit by a pebble, and fluttered away with a broken wing. But then the elf-child sighed, and gave up her sport, because it grieved her to have done harm to a little being that was as wild as the seabreeze, or as wild as Pearl herself.

Her final employment was to gather seaweed of various kinds, and make herself a scarf or mantle, and a head-dress, and thus assume the aspect of a little mermaid. She inherited her mother's gift for devising drapery and costume. As the last touch to her mermaid's garb, Pearl took some eel-grass and imitated, as best she could, on her own bosom the decoration with which she was so familiar on her mother's. A letter—the letter A—but freshly green instead of scarlet! The child bent her chin upon her breast, and contemplated this device with strange interest, even as if the one only thing for which she had been sent into the world was to make out its hidden import.

"I wonder if mother will ask me what it means?" thought

Just then she heard her mother's voice, and, flitting along as lightly as one of the little sea-birds, appeared before Hester Prynne dancing, laughing, and pointing her finger to the ornament upon her bosom.

"My little Pearl," said Hester, after a moment's silence, "the green letter, and on thy childish bosom, has no purport. But dost thou know, my child, what this letter means

which thy mother is doomed to wear?"

"Yes, mother," said the child. "It is the great letter A. Thou hast taught me in the horn-book."

Hester looked steadily into her little face; but though there was that singular expression which she had so often remarked in her black eyes, she could not satisfy herself whether Pearl really attached any meaning to the symbol. She felt a morbid desire to ascertain the point.

"Dost thou know, child, wherefore thy mother wears this

letter?"

"Truly do I!" answered Pearl, looking brightly into her mother's face. "It is for the same reason that the minister keeps his hand over his heart!"

"And what reason is that?" asked Hester, half smiling at the absurd incongruity of the child's observation; but on second thoughts turning pale. "What has the letter to do with any heart save mine?"

"Nay, mother, I have told all I know," said Pearl, more seriously than she was wont to speak. "Ask yonder old man whom thou hast been talking with!—it may be he can tell. But in good earnest now, mother dear, what does this scarlet letter mean?—and why dost thou wear it on thy bosom?—and why does the minister keep his hand over his heart?"

She took her mother's hand in both her own, and gazed into her eyes with an earnestness that was seldom seen in her wild and capricious character. The thought occurred to Hester, that the child might really be seeking to approach her with childlike confidence, and doing what she could, and as intelligently as she knew how, to establish a meeting-point of sympathy. It showed Pearl in an unwonted aspect. Heretofore, the mother, while loving her child with the intensity of a sole affection, had schooled herself to hope for

little other return than the waywardness of an April breeze, which spends its time in airy sport, and has its gusts of inexplicable passion, and is petulant in its best of moods, and chills oftener than caresses you, when you take it to your bosom; in requital of which misdemeanours it will sometimes, of its own vague purpose, kiss your cheek with a kind of doubtful tenderness, and play gently with your hair, and then be gone about its other idle business, leaving a dreamy pleasure at your heart. And this, morcover, was a mother's estimate of the child's disposition. Any other observer might have seen few but unamiable traits, and have given them a far darker colouring. But now the idea came strongly into Hester's mind, that Pearl, with her remarkable precocity and acuteness, might already have approached the age when she could have been made a friend, and intrusted with as much of her mother's sorrows as could be imparted, without irreverence either to the parent or the child. In the little chaos of Pearl's character there might be seen emergingand could have been from the very first—the steadfast principles of an unflinching courage—an uncontrollable will—a sturdy pride, which might be disciplined into self-respectand a bitter scorn of many things which, when examined, might be found to have the taint of falsehood in them. She possessed affections, too, though hitherto acrid and disagreeable, as are the richest flavours of unripe fruit. With all these sterling attributes, thought Hester, the evil which she inherited from her mother must be great, indeed, if a noble woman do not grow out of this elfish child.

Pearl's inevitable tendency to hover about the enigma of the scarlet letter seemed an innate quality of her being. From the earliest epoch of her conscious life, she had entered upon this as her appointed mission. Hester had often fancied that Providence had a design of justice and retribution, in endowing the child with this marked propensity; but never, until now, had she bethought herself to ask, whether, linked with that design, there might not likewise be a purpose of mercy and beneficence. If little Pearl were entertained with faith and trust, as a spirit messenger no less than an earthly child, might it not be her errand to soothe away the sorrow that lay cold in her mother's heart, and con-

verted it into a tomb?—and to help her to overcome the passion, once so wild, and even yet neither dead nor asleep, but only imprisoned within the same tomblike heart?

Such were some of the thoughts that now stirred in Hester's mind, with as much vivacity of impression as if they had actually been whispered into her ear. And there was little Pearl, all this while holding her mother's hand in both her own, and turning her face upward, while she put these searching questions, once and again, and still a third time.

"What does the letter mean, mother? and why dost thou wear it? and why does the minister keep his hand over his heart?"

"What shall I say?" thought Hester to herself. "No! if this be the price of the child's sympathy, I cannot pay it."

Then she spoke aloud-

"Silly Pearl," said she, "what questions are these? There are many things in this world that a child must not ask about. What know I of the minister's heart? And as for the scarlet letter, I wear it for the sake of its gold thread."

In all the seven bygone years, Hester Prynne had never before been false to the symbol on her bosom. It may be that it was the talisman of a stern and severe, but yet a guardian spirit, who now forsook her; as recognising that, in spite of his strict watch over her heart, some new evil had crept into it, or some old one had never been expelled. As for little Pearl, the earnestness soon passed out of her face.

But the child did not see fit to let the matter drop. Two or three times, as her mother and she went homeward, and as often at supper-time, and while Hester was putting her to bed, and once after she seemed to be fairly asleep, Pearl looked up, with mischief gleaming in her black eyes.

"Mother," said she, "what does the scarlet letter mean?"
And the next morning, the first indication the child gave of being awake was by popping up her head from the pillow, and making that other enquiry, which she had so unaccountably connected with her investigations about the scarlet letter—

"Mother! Mother! Why does the minister keep his hand over his heart?"

"Hold thy tongue, naughty child!" answered her mother, with an asperity that she had never permitted to herself before. "Do not tease me; else I shall shut thee into the dark closet!"

## CHAPTER XVI

# A FOREST WALK

ESTER PRYNNE remained constant in her resolve to make known to Mr. Dimmesdale, at whatever risk of present pain or ulterior consequences, the true character of the man who had crept into his intimacy. For several days, however, she vainly sought an opportunity of addressing him in some of the meditative walks which she knew him to be in the habit of taking along the shores of the Peninsula, or on the wooded hills of the neighbouring There would have been no scandal, indeed, nor peril to the holy whiteness of the clergyman's good fame, had she visited him in his own study, where many a penitent, ere now, had confessed sins of perhaps as deep a dye as the one betokened by the scarlet letter. But, partly that she dreaded the secret or undisguised interference of old Roger Chillingworth, and partly that her conscious heart imparted suspicion where none could have been felt, and partly that both the minister and she would need the whole wide world to breathe in, while they talked together-for all these reasons Hester never thought of meeting him in any narrower privacy than beneath the open sky.

At last, while attending a sick chamber, whither the Rev. Mr. Dimmesdale had been summoned to make a prayer, she learnt that he had gone, the day before, to visit the Apostle Eliot, among his Indian converts. He would probably return by a certain hour in the afternoon of the morrow. Betimes, therefore, the next day, Hester took little Pearl—who wes necessarily the companion of all her mother's expeditions, however inconvenient her presence—and set

forth.

The road, after the two wayfarers had crossed from the Peninsula to the mainland, was no other than a foot-path. It straggled onward into the mystery of the primeval forest.

This hemmed it in so narrowly, and stood so black and dense on either side, and disclosed such imperfect glimpses of the sky above, that, to Hester's mind, it imaged not amiss the moral wilderness in which she had so long been wandering. The day was chill and sombre. Overhead was a gray expanse of cloud, slightly stirred, however, by a breeze; so that a gleam of flickering sunshine might now and then be seen at its solitary play along the path. This flitting cheerfulness was always at the further extremity of some long vista through the forest. The sportive sunlight—feebly sportive, at best, in the predominant pensiveness of the day and scene—withdrew itself as they came nigh, and left the spots where it had danced the drearier, because they had hoped to find them bright.

"Mother," said little Pearl, "the sunshine does not love you. It runs away and hides itself, because it is afraid of something on your bosom. Now, see! There it is, playing a good way off. Stand you here, and let me run and catch it. I am but a child. It will not flee from me—for I wear

nothing on my bosom yet!"

"Nor ever will, my child, I hope," said Hester.

"And why not, mother?" asked Pearl, stopping short, just at the beginning of her race. "Will not it come of its own accord when I am a woman grown?"

"Run away, child," answered her mother, "and catch the

sunshine! It will soon be gone."

Pearl set forth at a great pace, and as Hester smiled to perceive, did actually catch the sunshine, and stood laughing in the midst of it, all brightened by its splendour, and scintillating with the vivacity excited by rapid motion. The light lingered about the lonely child, as if glad of such a playmate, until her mother had drawn almost nigh enough to step into the magic circle too.

"It will go now," said Pearl, shaking her head.

"See!" answered Hester, smiling; "now I can stretch out

my hand and grasp some of it."

As she attempted to do so, the sunshine vanished; or, to judge from the bright expression that was dancing on Pearl's features, her mother could have fancied that the child had absorbed it into herself, and would give it forth

again, with a gleam about her path, as they should plunge into some gloomier shade. There was no other attribute that so much impressed her with a sense of new and untransmitted vigour in Pearl's nature, as this never-failing vivacity of spirits: she had not the disease of sadness, which almost all children, in these latter days, inherit, with the scrofula, from the troubles of their ancestors. Perhaps this, too, was a disease, and but the reflex of the wild energy with which Hester had fought against her sorrows before Pearl's birth. It was certainly a doubtful charm, imparting a hard, metallic lustre to the child's character. She wanted—what some people want throughout life—a gricf that should deeply touch her, and thus humanise and make her capable of sympathy. But there was time enough yet for little Pearl.

"Come, my child!" said Hester, looking about her from the spot where Pearl had stood still in the sunshine—"we will sit down a little way within the wood, and rest ourselves."

"I am not aweary, mother," replied the little girl. "But you may sit down, if you will tell me a story meanwhile."

"A story, child!" said Hester. "And about what?"

"Oh, a story about the Black Man," answered Pearl, taking hold of her mother's gown, and looking up, half ear-

nestly, half mischievously, into her face.

"How he haunts this forest, and carries a book with him—a big, heavy book, with iron clasps; and how this ugly Black Man offers his book and an iron pen to everybody that meets him here among the trees; and they are to write their names with their own blood; and then he sets his mark on their bosoms! Didst thou ever meet the Black Man, mother?"

"And who told you this story, Pearl," asked her mother,

recognising a common superstition of the period.

"It was the old dame in the chimney corner, at the house where you watched last night," said the child. "But she fancied me asleep while she was talking of it. She said that a thousand and a thousand people had met him here, and had written in his book, and have his mark on them. And that ugly-tempered lady, old Mistress Hibbins, was one.

And, mother, the old dame said that this scarlet letter was the Black Man's mark on thee, and that it glows like a red flame when thou meetest him at midnight, here in the dark wood. Is it true, mother? And dost thou go to meet him in the night-time?"

"Didst thou ever awake and find thy mother gone?" asked Hester.

"Not that I remember," said the child. "If thou fearest to leave me in our cottage, thou mightest take me along with thee. I would very gladly go! But, mother, tell me now! Is there such a Black Man? And didst thou ever meet him? And is this his mark?"

"Wilt thou let me be at peace, if I once tell thee?" asked her mother.

"Yes, if thou tellest me all," answered Pearl.

"Once in my life I met the Black Man!" said her mother. "This scarlet letter is his mark!"

Thus conversing, they entered sufficiently deep into the wood to secure themselves from the observation of any casual passenger along the forest track. Here they sat down on a luxuriant heap of moss; which at some epoch of the preceding century, had been a gigantic pine, with its roots and trunk in the darksome shade, and its head aloft in the upper atmosphere. It was a little dell where they had seated themselves, with a leaf-strewn bank rising gently on either side, and a brook flowing through the midst, over a bed of fallen and drowned leaves. The trees impending over it had flung down great branches from time to time, which choked up the current, and compelled it to form eddies and black depths at some points; while, in its swifter and livelier passages there appeared a channel-way of pebbles, and brown, sparkling sand. Letting the eyes follow along the course of the stream, they could catch the reflected light from its water, at some short distance within the forest, but soon lost all traces of it amid the bewilderment of tree-trunks and underbush, and here and there a huge rock covered with gray lichens. All these giant trees and boulders of granite seemed intent on making a mystery of the course of this small brook; fearing, perhaps, that, with its never-ceasing loquacity, it should whisper tales out of the heart of the old

forest whence it flowed, or mirror its revelations on the smooth surface of a pool. Continually, indeed, as it stole onward, the streamlet kept up a babble, kind, quiet, soothing, but melancholy, like the voice of a young child that was spending its infancy without playfulness, and knew not how to be merry among sad acquaintances and events of sombre hue.

"Oh, brook! Oh, foolish and tiresome little brook!" cried Pearl, after listening awhile to its talk. "Why art thou so sad? Pluck up a spirit, and do not be all the time sighing

and murmuring!"

But the brook, in the course of its little lifetime among the forest trees, had gone through so solemn an experience that it could not help talking about it, and seemed to have nothing else to say. Pearl resembled the brook, inasmuch as the current of her life gushed from a well-spring as mysterious, and had flowed through scenes shadowed as heavily with gloom. But, unlike the little stream, she danced and sparkled, and prattled airily along her course.

"What does this sad little brook say, mother?" inquired

she.

"If thou hadst a sorrow of thine own, the brook might tell thee of it," answered her mother, "even as it is telling me of mine. But now, Pearl, I hear a footstep along the path, and the noise of one putting aside the branches. I would have thee betake thyself to play, and leave me to speak with him that comes yonder."

"Is it the Black Man?" asked Pearl.

"Wilt thou go and play, child?" repeated her mother. "But do not stray far into the wood. And take heed that thou come at my first call."

"Yes, mother," answered Pearl. "But if it be the Black Man, wilt thou not let me stay a moment, and look at him,

with his big book under his arm?"

"Go, silly child!" said her mother impatiently. "It is no Black Man! Thou canst see him now, through the trees. It is the minister!"

"And so it is!" said the child. "And, mother, he has his hand over his heart! Is it because, when the minister wrote his name in the book, the Black Man set his mark in that

place? But why does he not wear it outside his bosom, as thou dost, mother?"

"Go now, child, and thou shalt tease me as thou wilt another time," cried Hester Prynne. "But do not stray far. Keep where thou canst hear the babble of the brook."

The child went singing away, following up the current of the brook, and striving to mingle a more lightsome cadence with its melancholy voice. But the little stream would not be comforted, and still kept telling its unintelligible secret of some very mournful mystery that had happened—or making a prophetic lamentation about something that was vet to happen—within the verge of the dismal forest. So Pearl, who had enough of shadow in her own little life, chose to break off all acquaintance with this repining brook. She set herself, therefore, to gathering violets and wood-anemones, and some scarlet columbines that she found growing in the crevice of a high rock.

When her elf-child had departed, Hester Prynne made a step or two towards the track that led through the forest, but still remained under the deep shadow of the trees. She beheld the minister advancing along the path entirely alone, and leaning on a staff which he had cut by the wayside. He looked haggard and feeble, and betrayed a nerveless despondency in his air, which had never so remarkably characterised him in his walks about the settlement, nor in any other situation where he deemed himself liable to notice. Here it was wofully visible, in this intense seclusion of the forest, which of itself would have been a heavy trial to the spirits. There was a listlessness in his gait, as if he saw no reason for taking one step further, nor felt any desire to do so, but would have been glad, could he be glad of anything. to fling himself down at the root of the nearest tree, and lie there passive for evermore. The leaves might bestrew him, and the soil gradually accumulate and form a little hillock over his frame, no matter whether there were life in it or no. Death was too definite an object to be wished for or avoided.

To Hester's eye, the Reverend Mr. Dimmesdale exhibited no symptom of positive and vivacious suffering, except that, as little Pearl had remarked, he kept his hand over his heart.

#### CHAPTER XVII

## THE PASTOR AND HIS PARISHIONER

SLOWLY as the minister walked, he had almost gone by before Hester Prynne could gather voice enough to attract his observation. At length she succeeded.

"Arthur Dimmesdale!" she said, faintly at first, then louder, but hoarsely—"Arthur Dimmesdale!"

"Who speaks?" answered the minister.

Gathering himself quickly up, he stood more erect, like a man taken by surprise in a mood to which he was reluctant to have witnesses. Throwing his eyes anxiously in the direction of the voice, he indistinctly beheld a form under the trees, clad in garments so sombre, and so little relieved from the gray twilight into which the clouded sky and the heavy foliage had darkened the noontide, that he knew not whether it were a woman or a shadow. It may be that his pathway through life was haunted thus by a spectre that had stolen out from among his thoughts.

He made a step nigher, and discovered the scarlet letter. "Hester! Hester Prynne!" said he; "is it thou? Art thou in life?"

"Even so," she answered. "In such life as has been mine these seven years past! And thou, Arthur Dimmesdale, dost thou yet live?"

It was no wonder that they thus questioned one another's actual and bodily existence, and even doubted of their own. So strangely did they meet in the dim wood that it was like the first encounter in the world beyond the grave of two spirits who had been intimately connected in their former life, but now stood coldly shuddering in mutual dread, as not yet familiar with their state, nor wonted to the companionship of disembodied beings. Each a ghost, and awe-stricken at the other ghost. They were awe-stricken likewise at themselves, because the crisis flung back to them their conscious-

ness, and revealed to each heart its history and experience, as life never does, except at such breathless epochs. The soul beheld its features in the mirror of the passing moment. It was with fear, and tremulously, and, as it were, by a slow, reluctant necessity, that Arthur Dimmesdale put forth his hand, chill as death, and touched the chill hand of Hester Prynne. The grasp, cold as it was, took away what was dreariest in the interview. They now felt themselves, at least, inhabitants of the same sphere

Without a word more spoken—neither he nor she assuming the guidance, but with an unexpressed consent—they glided back into the shadow of the woods whence Hester had emerged, and sat down on the heap of moss where she and Pearl had before been sitting. When they found voice to speak, it was at first only to utter remarks and inquiries such as any two acquaintances might have made, about the gloomy sky, the threatening storm, and, next, the health of each. Thus they went onward, not boldly, but step by step, into the themes that were brooding deepest in their hearts. So long estranged by fate and circumstances, they needed something slight and casual to run before and throw open the doors of intercourse, so that their real thoughts might be led across the threshold.

After awhile, the minister fixed his eyes on Hester Prynne's.

"Hester," said he, "hast thou found peace?"

She smiled drearily, looking down upon her bosom.

"Hast thou?" she asked.

"None—nothing but despair!" he answered. "What else could I look for, being what I am, and leading such a life as mine? Were I an atheist—a man devoid of conscience—a wretch with coarse and brutal instincts—I might have found peace long ere now. Nay, I never should have lost it! But, as matters stand with my soul, whatever of good capacity there originally was in me, all of God's gifts that were the choicest have become the ministers of spiritual torment. Hester, I am most miserable!"

"The people reverence thee," said Hester. "And surely thou workest good among them! Doth this bring thee no comfort?"

"More misery, Hester!—only the more misery!" answered the clergyman with a bitter smile. "As concerns the good which I may appear to do, I have no faith in it. It must needs be a delusion. What can a ruined soul like mine effect towards the redemption of other souls?—or a polluted soul towards the purification? And as for the people's reverence, would that it were turned to scorn and hatred! Canst thou deem it, Hester, a consolation that I must stand up in my pulpit, and meet so many eyes turned upward to my face, as if the light of heaven were beaming from it!—must see my flock hungry for the truth, and listening to my words as if a tongue of Pentecost were speaking!—and then look inward, and discern the black reality of what they idolize? I have laughed, in bitterness and agony of heart, at the contrast between what I seem and what I am! And Satan laughs at it!"

"You wrong yourself in this," said Hester gently. "You have deeply and sorely repented. Your sin is left behind you in the days long past. Your present life is not less holy, in very truth, than it seems in people's eyes. Is there no reality in the penitence thus sealed and witnessed by good works?

And wherefore should it not bring you peace?"

"No. Hester-no!" replied the clergyman. "There is no substance in it! It is cold and dead, and can do nothing for me! Of penance, I have had enough! Of penitence, there has been none! Else, I should long ago have thrown off these garments of mock holiness, and have shown myself to mankind as they will see me at the judgment-seat. Happy are you. Hester, that wear the scarlet letter openly upon your bosom! Mine burns in secret! Thou little knowest what a relief it is, after the torment of a seven years' cheat, to look into an eye that recognises me for what I am! Had I one friend-or were it my worst enemy!-to whom, when sickened with the praises of all other men, I could daily betake myself, and be known as the vilest of all sinners, methinks my soul might keep itself alive thereby. Even thus much of truth would save me! But now, it is all falsehood! -all emptiness !-all death !"

Hester Prynne looked into his face, but hesitated to speak. Yet, uttering his long-restrained emotions so vehemently as he did, his words here offered her the very point of circum-

stances in which to interpose what she came to say. She

conquered her fears, and spoke:

"Such a friend as thou hast even now wished for," said she, "with whom to weep over thy sin, thou hast in me, the partner of it!" Again she hesitated, but brought out the words with an effort. "Thou hast long had such an enemy, and dwellest with him, under the same roof!"

The minister started to his feet, gasping for breath, and clutching at his heart, as if he would have torn it out of his bosom.

"Ha! What sayest thou?" cried he. "An enemy! And

under mine own roof! What mean you?"

Hester Prynne was now fully sensible of the deep injury for which she was responsible to this unhappy man, in permitting him to lie for so many years, or, indeed, for a single moment, at the mercy of one whose purposes could not be other than malevolent. The very contiguity of his enemy, beneath whatever mask the latter might conceal himself, was enough to disturb the magnetic sphere of a being so sensitive as Arthur Dimmesdale. There had been a period when Hester was less alive to this consideration; or, perhaps, in the misanthropy of her own trouble, she left the minister to bear what she might picture to herself as a more tolerable doom. But of late, since the night of his vigil, all her sympathies towards him had been both softened and invigorated. She now read his heart more accurately. She doubted not that the continual presence of Roger Chillingworth-the secret poison of his malignity, infecting all the air about him—and his authorised interference, as a physician, with the minister's physical and spiritual infirmities-that these bad opportunities had been turned to a cruel purpose. By means of them, the sufferer's conscience had been kept in an irritated state, the tendency of which was, not to cure by wholesome pain, but to disorganize and corrupt his spiritual being. Its result, on earth could hardly fail to be insanity, and hereafter, that eternal alienation from the Good and True, of which madness is perhaps the earthly type.

Such was the ruin to which she had brought the man, once—nay, why should we not speak it?—still so passionately loved! Hester felt that the sacrifice of the clergyman's good

name, and death itself, as she had already told Roger Chillingworth, would have been infinitely preferable to the alternative which she had taken upon herself to choose. And now, rather than have had this grievous wrong to confess, she would gladly have laid down on the forest leaves, and died there, at Arthur Dimmesdale's feet.

"Oh, Arthur!" cried she, "forgive me! In all things else, I have striven to be true! Truth was the one virtue which I might have held fast, and did hold fast, through all extremity; save when thy good—thy life—thy fame—were put in question! Then I consented to a deception. But a lie is never good, even though death threaten on the other side! Dost thou not see what I would say? That old man!—the physician!—he whom they call Roger Chillingworth!—he was my husband!"

The minister looked at her for an instant, with all that violence of passion, which—intermixed in more shapes than one with his higher, purer, softer qualities—was, in fact, the portion of him which the devil claimed, and through which he sought to win the rest. Never was there a blacker or a fiercer frown than Hester now encountered. For the brief space that it lasted, it was a dark transfiguration. But his character had been so much enfeebled by suffering, that even its lower energies were incapable of more than a temporary struggle. He sank down on the ground, and buried his face in his hands.

"I might have known it," murmured he—"l did know it! Was not the secret told me, in the natural recoil of my heart at the first sight of him, and as often as I have seen him since? Why did I not understand? Oh, Hester Prynne, thou little, little knowest all the horror of this thing! And the shame!—the indelicacy!—the horrible ugliness of this exposure of a sick and guilty heart to the very eye that would gloat over it! Woman, woman, thou art accountable for this! I cannot forgive thee!"

'Thou shalt forgive me!" cried Hester, flinging herself on the fallen leaves beside him. "Let God punish! Thou shalt forgive!"

With sudden and desperate tenderness she threw her arms around him, and pressed his head against her bosom, little caring though his cheek rested on the scarlet letter. He would have released himself, but strove in vain to do so. Hester would not set him free, lest he should look her sternly in the face. All the world had frowned upon—for seven long years had it frowned upon this lonely woman—and still she bore it all, nor ever once turned away her firm, sad eyes. Heaven, likewise had frowned upon her, and she had not died. But the frown of this pale, weak, sinful, and sorrow-stricken man was what Hester could not bear, and live!

"Wilt thou yet forgive me?" she repeated, over and over

again. "Wilt thou not frown? Wilt thou forgive?"

"I do forgive you, Hester," replied the minister at length, with a deep utterance, out of an abyss of sadness, but no anger. "I freely forgive you now. May God forgive us both. We are not, Hester, the worst sinners in the world. There is one worse, than even the polluted priest! That old man's revenge has been blacker than my sin. He has violated, in cold blood, the sanctity of a human heart. Thou and I, Hester, never did so!"

"Never, never!" whispered she. "What we did had a consecration of its own. We felt it so! We said so to each other. Hast thou forgotten it?"

"Hush, Hester!" said Arthur Dimmesdale, rising from

the ground. "No; I have not forgotten!"

They sat down again, side by side, and hand clasped in hand, on the mossy trunk of the fallen tree. Life had never brought them a gloomier hour; it was the point whither their pathway had so long been tending, and darkening ever, as it stole along—and yet it unclosed a charm that made them linger upon it, and claim another, and another, and, after all, another moment. The forest was obscure around them, and creaked with a blast that was passing through it. The boughs were tossing heavily above their heads; while one solemn old tree groaned dolefuly to another, as if telling the sad story of the pair that sat beneath, or constrained to forbode evil to come.

And yet they lingered. How dreary looked the foresttrack that led backward to the settlement, where Hester Prynne must take up again the burden of her ignominy, and the minister the hollow mockery of his good name! So they lingered an instant longer. No golden light had ever been so precious as the gloom of this dark forest. Here seen only by his eyes, the scarlet letter need not burn into the bosom of the fallen woman! Here seen only by her eyes, Arthur Dimmesdale, false to God and man, might be, for one moment true!

He started at a thought that suddenly occurred to him. "Hester." cried he, "here is a new horror! Roger Chillingworth knows your purpose to reveal his true character. Will he continue, then, to keep our secret? What will now be the

course of his revenge?"

"There is a strange secrecy in his nature," replied Hester, thoughtfully: "and it has grown upon him by the hidden practices of his revenge. I deem it not likely that he will betray the secret. He will doubtless seek other means of

satiating his dark passion."

"And I !-how am I to live longer, breathing the same air with this deadly enemy?" exclaimed Arthur Dimmesdale, shrinking within himself, and pressing his hand nervously against his heart—a gesture that had grown involuntary with him. "Think for me, Hester! Thou art strong. Resolve for me!"

"Thou must dwell no longer with this man," said Hester, slowly and firmly. "Thy heart must be no longer under his

evil eye!"

"It were far worse than death!" replied the minister. "But how to avoid it? What choice remains to me? I lie down again on these withered leaves, where I cast myself when thou didst tell me what he was? Must I sink down there, and die at once?"

"Alas! what a ruin has befallen thee!" said Hester, with the tears gushing into her eyes. "Wilt thou die for very

weakness? There is no other cause!"

"The judgment of God is on me," answered the consciencestricken priest. "It is too mighty for me to struggle with!"

"Heaven would show mercy," rejoined Hester, "hadst thou but the strength to take advantage of it."

"Be thou strong for me!" answered he. "Advise me what to do."

"Is the world, then, so narrow?" exclaimed Hester Prvnne, fixing her deep eyes on the minister's, and instinctively exercising a magnetic power ever a spirit so shattered and subdued that it could hardly hold itself erect. "Doth the universe lie within the compass of yonder town, which only a little time ago was but a leaf-strewn desert, as lonely as this around us? Whither leads yonder forest-track? Backward to the settlement, thou savest! Yes; but, onward, too! Deeper it goes, and deeper into the wilderness, less plainly to be seen at every step; until some few miles hence the yellow leaves will show no vestige of the white man's tread. There thou art free! So brief a journey would bring thee from a world where thou hast been most wretched, to one where thou mayest still be happy! Is there not shade enough in all this boundless forest to hide thy heart from the gaze of Roger Chillingworth?"

"Yes, Hester; but only under the fallen leaves!" replied

the minister, with a sad smile.

"Then there is the broad pathway of the sea!" continued Hester. "It brought thee hither. If thou so choose, it will bear thee back again. In our native land, whether in some some remote rural village, or in vast London—or, surely, in Germany, in France, in pleasant Italy—thou wouldst be beyond his power and knowledge! And what hast thou to do with all these iron men, and their opinions? They have kept thy better part in bondage too long already!"

"It cannot be!" answered the minister, listening as if he were called upon to realise a dream. "I am powerless to go. Wretched and sinful as I am, I have had no other thought than to drag on my earthly existence in the sphere where Providence hath placed me. Lost as my own soul is, I would still do what I may for other human souls! I dare not quit my post, though an unfaithful sentinel, whose sure reward is death and dishonour, when his dreary watch shall come to

an end!"

"Thou art crushed under this seven years' weight of misery," replied Hester, fervently resolved to buoy him up with her own energy. "But thou shalt leave it all behind thee! It shall not cumber thy steps, as thou treadest along the forest-path: neither shalt thou freight the ship with it,

if thou prefer to cross the sea. Leave this wreck and ruin here where it hath happened. Meddle no more with it! Begin all anew! Hast thou exhausted possibility in the failure of this one trial? Not so! The future is vet full of trial and success. There is happiness to be enjoyed! There is good to be done! Exchange this false life of thine for a true one. Be, if thy spirit summon thee to such a mission, the teacher and apostle of the red men. Or, as is more thy nature, be a scholar and a sage among the wisest and the most renowned of the cultivated world. Preach! Write! Act! Do anything, save to lie down and die! Give up this name of Arthur Dimmesdale, and make thyself another, and a high one, such as thou canst wear without fear or shame. Why shouldst thou tarry so much as one other day in the torments that have so gnawed into thy life? that have made thee feeble to will and to do? that will leave thee powerless even to repent? Up, and away!"
"Oh, Hester!" cried Arthur Dimmesdale, in whose eyes a

"Oh, Hester!" cried Arthur Dimmesdale, in whose eyes a fitful light, kindled by her enthusiasm, flashed up and died away, "thou tellest of running a race to a man whose knees are tottering beneath him! I must die here! There is not the strength or courage left me to venture into the wide,

strange, difficult world alone!"

It was the last expression of the despondency of a broken spirit. He lacked energy to grasp the better fortune that seemed within his reach.

He repeated the word—"Alone, Hester!"

"Thou shall not go alone!" answered she, in a deep whisper. Then, all was spoken!

### CHAPTER XVIII

## A FLOOD OF SUNSHINE

ARTHUR DIMMESDALE gazed into Hester's face with a look in which hope and joy shone out, indeed, but with fear betwixt them, and a kind of horror at her boldness, who had spoken what he vaguely hinted at, but dared not speak.

But Hester Prynne, with a mind of native courage and activity, and for so long a period not merely estranged, but outlawed from society, had habituated herself to such latitude of speculation as was altogether foreign to the clergyman. She had wandered, without rule or guidance, in a moral wilderness, as vast, as intricate, and shadowy as the untamed forest, amid the gloom of which they were now holding a colloquy that was to decide their fate. Her intellect and heart had their home, as it were, in desert places, where she roamed as freely as the wild Indian in his woods. For years past she had looked from this estranged point of view at human institutions, and whatever priests or legislators had established; criticising all with hardly more reverence than the Indian would feel for the clerical band, the judicial robe, the pillory, the gallows, the fireside, or the church. The tendency of her fate and fortunes had been to set her free. The scarlet letter was her passport into regions where other women dared not tread. Shame, Despair, Solitude! had been her teachers-stern and wild ones-and they had made her strong, but taught her much amiss.

The minister, on the other hand, had never gone through an experience calculated to lead him beyond the scope of generally received laws; although, in a single instance, he had so fearfully transgressed one of the most sacred of them. But this had been a sign of passion, not of principle, nor even purpose. Since that wretched epoch, he had watched with morbid zeal and minuteness, not his acts—for those it

was easy to arrange—but each breath of emotion, and his every thought. At the head of the social system, as the clergymen of that day stood, he was only the more trammelled by its regulations, its principles, and even its prejudices. As a priest, the framework of his order inevitably hemmed him in. As a man who had once sinned, but who kept his conscience all alive and painfully sensitive by the fretting of an unhealed wound, he might have been supposed safer within the line of virtue than if he had never sinned at all.

Thus we seem to see that, as regarded Hester Prynne, the whole seven years of outlaw and ignominy had been little other than a preparation for this very hour. But Arthur Dimmesdale! Were such a man once more to fall, what plea could be urged in extenuation of his crime? None; unless it avail him somewhat that he was broken down by long and exquisite suffering; that his mind was darkened and confused by the very remorse which harrowed it; that, between fleeing as an avowed criminal, and remaining as a hypocrite, conscience might find it hard to strike the balance; that it was human to avoid the peril of death and infamy, and the inscrutable machinations of an enemy; that, finally, to this poor pilgrim, on his dreary and desert path, faint, sick, miserable, there appeared a glimpse of human affection and sympathy, a new life, and a true one, in exchange for the heavy doom which he was now expiating. And be the stern and sad truth spoken, that the breach which guilt has once made into the human soul is never, in this mortal state, repaired. It may be watched and guarded, so that the enemy shall not force his way again into the citadel, and might even in his subsequent assaults, select some other avenue, in preference to that where he had formerly succeeded. But there is still the ruined wall, and near it the stealthy tread of the foe that would win over again his unforgotten triumph.

The struggle, if there were one, need not be described. Let it suffice that the clergyman resolved to flee, and not alone.

"If, in all these past seven years," thought he, "I could recall one instant of peace or hope, I would yet endure, for

the sake of that earnest of Heaven's mercy. But now—since I am irrevocably doomed—wherefore should I not snatch the solace allowed to the condemned culprit before his execution? Or, if this be the path to a better life, as Hester would persuade me, I surely give up no fairer prospect by pursuing it! Neither can I any longer live without her companionship; so powerful is she to sustain—so tender to soothe! O Thou to whom I dare not lift mine eyes, wilt Thou yet pardon me?"

"Thou wilt go!" said Hester calmly, as he met her glance.

The decision once made, a glow of strange enjoyment threw its flickering brightness over the trouble of his breast. It was the exhilarating effect—upon a prisoner just escaped from the dungeon of his own heart—of breathing the wild, free atmosphere of an unredeemed, unchristianized, lawless region. His spirit rose, as it were, with a bound, and attained a nearer prospect of the sky, than throughout all the misery which had kept him grovelling on the earth. Of a deeply religious temperament, there was inevitably a tinge of the devotional in his mood.

"Do I feel joy again?" cried he, wondering at himself. "Methought the germ of it was dead in me! Oh, Hester, thou art my better angel! I seem to have flung myself—sick, sin-stained, and sorrow-blackened—down upon these forest leaves, and to have risen up all made anew, and with new powers to glorify Him that hath been merciful! This is already the better life! Why did we not find it sooner?"

"Let us not look back," answered Hester Prynne. "The past is gone! Wherefore should we linger upon it now? See! With this symbol I undo it all, and make it as if it had never been!"

So speaking, she undid the clasp that fastened the scarlet letter, and, taking it from her bosom, threw it to a distance among the withered leaves. The mystic token alighted on the hither verge of the stream. With a hand's-breadth further flight, it would have fallen into the water, and have given the little brook another woe to carry onward, besides the unintelligible tale which it still kept murmuring about. But there lay the embroidered letter, glittering like a lost

jewel, which some ill-fated wanderer might pick up, and thenceforth be haunted by strange phantoms of guilt, sink-

ings of the heart, and unaccountable misfortune.

The stigma gone, Hester heaved a long, deep sigh, in which the burden of shame and anguish departed from her spirit. O exquisite relief! She had not known the weight until she felt the freedom! By another impulse, she took off the formal cap that confined her hair, and down it fell upon her shoulders, dark and rich, with at once a shadow and a light in its abundance, and imparting the charm of softness to her features. There played around her mouth, and beamed out of her eyes, a radiant and tender smile, that seemed gushing from the very heart of womanhood. A crimson flush was glowing on her cheek, that had been long so pale. Her sex, her youth, and the whole richness of her beauty, came back from what men call the irrevocable past, and clustered themselves with her maiden hope, and happiness before unknown, within the magic circle of this hour. And, as if the gloom of the earth and sky had been but the effluence of these two mortal hearts, it vanished with their sorrow, All at once, as with a sudden smile of heaven, forth burst the sunshine, pouring a very flood into the obscure forest, gladdening each green leaf, transmuting the vellow fallen ones to gold, and gleaming adown the gray trunks of the solemn trees. The objects that had made a shadow hitherto, embodied the brightness now. The course of the little brook might be traced by its merry gleam afar into the wood's heart of mystery, which had become a mystery of joy.

Such was the sympathy of Nature—that wild, heathen Nature of the forest, never subjugated by human law, nor illumined by higher truth—with the bliss of these two spirits! Love, whether newly-born, or aroused from a death-like slumber, must always create a sunshine, filling the heart so full of radiance, that it overflows upon the outward world. Had the forest still kept its gloom, it would have been bright in Hester's eyes, and bright in Arthur Dimmesdale's!

Hester looked at him with a thrill of another joy.

"Thou must know Pearl!" said she. "Our little Pearl! Thou hast seen her—yes, I know it!—but thou wilt see her now with other eyes. She is a strange child! I hardly

comprehend her! But thou wilt love her dearly, as I do, and wilt advise me how to deal with her!"

"Dost thou think the child will be glad to know me?" asked the minister, somewhat uneasily. "I have long shrunk from children, because they often show a distrust—a backwardness to be familiar with me. I have even been afraid of little Pearl!"

"Ah, that was sad!" answered the mother. "But she will love thee dearly, and thou her. She is not far off. I will call her. Pearl!"

"I see the child," observed the minister. "Yonder she is, standing in a streak of sunshine, a good way off, on the other side of the brook. So thou thinkest the child will love me?"

Hester smiled, and again called to Pearl, who was visible at some distance, as the minister had described her, like a bright-apparelled vision in a sunbeam, which fell down upon her through an arch of boughs. The ray quivered to and fro, making her figure dim or distinct—now like a real child, now like a child's spirit—as the splendour went and came again. She heard her mother's voice, and approached slowly through the forest.

Pearl had not found the hour pass wearisomely while her mother sat talking with the clergyman. The great black forest-stern as it showed itself to those who brought the guilt and troubles of the world into its bosom—became the playmate of the lonely infant, as well as it knew how. Sombre as it was, it put on the kindest of its moods to welcome her. It offered her the partridge-berries, the growth of the preceding autumn, but ripening only in the spring, and now red as drops of blood upon the withered leaves. These Pearl gathered, and was pleased with their wild flavour. The small denizens of the wilderness hardly took pains to move out of her path. A partridge, indeed, with a brood of ten behind her, ran forward threateningly, but soon repented of her fierceness, and clucked to her young ones not to be afraid. A pigeon, alone on a low branch, allowed Pearl to come beneath, and uttered a sound as much of greeting as alarm. A squirrel, from the lofty depths of his domestic tree, chattered either in anger or merriment-for the squirrel is such a choleric and humorous little personage, that it is hard to distinguish between his moods—so he chattered at the child, and flung down a nut upon her head. It was a last year's nut, and already gnawed by his sharp tooth. A fox, startled from his sleep by her light footstep on the leaves, looked inquisitively at Pearl, as doubting whether it were better to steal off, or renew his nap on the same spot. A wolf, it is said—but here the tale has surely lapsed into the improbable—came up and smelt of Pearl's robe, and offered his savage head to be patted by her hand. The truth seems to be, however, that the mother-forest, and these wild things which it nourished, all recognised a kindred wilderness in the human child.

And she was gentler here than in the grassy-margined streets of the settlement, or in her mother's cottage. The flowers appeared to know it, and one and another whispered as she passed, "Adorn thyself with me, thou beautiful child, adorn thyself with me!"—and, to please them, Pearl gathered the violets, and anemones, and columbines, and some twigs of the freshest green, which the old trees held down before her eyes. With these she decorated her hair and her young waist, and became a nymph-child, of an infant dryad, or whatever else was in closest sympathy with the antique wood. In such guise had Pearl adorned herself, when she heard her mother's voice, and came slowly back.

Slowly-for she saw the clergyman.

#### CHAPTER XIX

#### THE CHILD AT THE BROOK-SIDE

"HOU wilt love her dearly," repeated Hester Prynne, as she and the minister sat watching little Pearl. "Dost thou not think her beautiful? And see with what natural skill she has made those simple flowers adorn her! Had she gathered pearls, and diamonds, and rubies in the wood, they could not have become her better! She is a splendid child! But I know whose brow she has!"

"Dost thou know, Hester," said Arthur Dimmesdale, with an unquiet smile, "that this dear child, tripping about always at thy side, hath caused me many an alarm? Methought—oh, Hester, what a thought is that, and how terrible to dread it!—that my own features were partly repeated in her face, and so strikingly that the world might see them! But she

is mostly thine!"

"No, no! Not mostly!" answered the mother, with a tender smile. "A little longer, and thou needest not to be afraid to trace whose child she is. But how strangely beautiful she looks with those wild flowers in her hair! It is as if one of the fairies, whom we left in dear old England, had decked her out to meet us."

It was with a feeling which neither of them had ever before experienced, that they sat and watched Pearl's slow advance. In her was visible the tie that united them. She had been offered to the world, these seven past years, as the living hieroglyphic, in which was revealed the secret they so darkly sought to hide—all written in this symbol—all plainly manifest—had there been a prophet or magician skilled to read the character of flame! And Pearl was the oneness of their being. Be the foregone evil what it might, how could they doubt that their earthly lives and future destinies were conjoined when they beheld at once the material union, and the spiritual idea, in whom they met, and were to dwell immortally together; thoughts like these—

and perhaps other thoughts, which they did not acknowledge or define—threw an awe about the child as she came onward.

"Let her see nothing strange—no passion or eagerness—in thy way of accosting her," whispered Hester. "Our Pearl is a fitful and fantastic little elf sometimes. Especially she is generally intolerant of emotion, when she does not fully comprehend the why and wherefore. But the child hath strong affections! She loves me, and will love thee!"

"Thou canst not think," said the minister, glancing aside at Hester Prynne, "how my heart dreads this interview, and yearns for it! But, in truth, as I already told thee, children are not readily won to be familiar with me. They will not climb my knee, nor prattle in my ear, nor answer to my smile, but stand apart, and eye me strangely. Even little babes, when I take them in my arms, weep bitterly. Yet Pearl, twice in her little lifetime, hath been kind to me! The first time—thou knowest it well! The last was when thou ledst her with thee to the house of yonder stern old Governor."

"And thou didst plead so bravely in her behalf and mine!" answered the mother. "I remember it; and so shall little Pearl. Fear nothing. She may be strange and shy at first, but will soon learn to love thee!"

By this time Pearl had reached the margin of the brook, and stood on the further side, gazing silently at Hester and the clergyman, who still sat together on the mossy tree-trunk waiting to receive her. Just where she had paused, the brook chanced to form a pool so smooth and quiet that it reflected a perfect image of her little figure, with all the brilliant picturesqueness of her beauty, in its adornment of flowers and wreathed foliage, but more refined and spiritualized than the reality. This image, so nearly identical with the living Pearl, seemed to communicate somewhat of its own shadowy and intangible quality to the child herself. It was strange, the way in which Pearl stood, looking so steadfastly at them through the dim medium of the forest gloom, herself, meanwhile, all glorified with a ray of sunshine, that was attracted thitherward as by a certain sympathy. In the brook beneath stood another child-another and the same-with likewise its rays of golden light. Hester felt herself, in some indistinct

and tantalizing manner, estranged from Pearl, as if the child, in her lonely ramble through the forest, had strayed out of the sphere in which she and her mother dwelt together, and was now vainly seeking to return to it.

There were both truth and error in the impression; the child and mother were estranged, but through Hester's fault, not Pearl's. Since the latter rambled from her side, another inmate had been admitted within the circle of the mother's feelings, and so modified the aspect of them all, that Pearl, the returning wanderer, could not find her wonted place, and hardly knew where she was.

"I have a strange fancy," observed the sensitive minister. "that this brook is the boundary between two worlds, and that thou canst never meet thy Pearl again. Or is she an elfish spirit, who, as the legend of our childhood taught us, is forbidden to cross a running stream? Pray hasten her, for this delay has already imparted a tremor to my nerves."

"Come, dearest child!" said Hester encouragingly, and stretching out both her arms. "How slow thou art! When hast thou been so sluggish before now? Here is a friend of mine, who must be thy friend also. Thou wilt have twice as much love henceforward as thy mother alone could give thee! Leap across the brook and come to us. Thou canst leap like a young deer!"

Pearl, without responding in any manner to these honey-sweet expressions, remained on the other side of the brook. Now she fixed her bright wild eyes on her mother, now on the minister, and now included them both in the same glance, as if to detect and explain to herself the relation which they bore to one another. For some unaccountable reason, as Arthur Dimmesdale felt the child's eyes upon himself, his hand—with that gesture so habitual as to have become involuntary—stole over his heart. At length, assuming a singular air of authority, Pearl stretched out her hand, with the small forefinger extended, and pointing evidently towards her mother's breast. And beneath, in the mirror of the brook, there was the flower-girdled and sunny image of little Pearl, pointing her small forefinger too.

"Thou strange child! why dost thou not come to me?" exclaimed Hester.

Pearl still pointed with her forefinger, and a frown gathered on her brow—the more impressive from the childish, the almost baby-like aspect of the features that conveyed it. As her mother still kept beckoning to her, and arraying her face in a holiday suit of unaccustomed smiles, the child stamped her foot with a yet more imperious look and gesture. In the brook, again, was the fantastic beauty of the image, with its reflected frown, its pointed finger, and imperious gesture, giving emphasis to the aspect of little Pearl.

"Hasten, Pearl, or I shall be angry with thee!" cried Hester Prynne, who, however, inured to such behaviour on the elf-child's part at other seasons, was naturally anxious for a more seemly deportment now. "Leap across the brook, naughty child, and run hither! Else I must come to thee!"

But Pearl, not a whit startled at her mother's threats any more than mollified by her entreaties, now suddenly burst into a fit of passion, gesticulating violently, and throwing her small figure into the most extravagant contortions. She accompanied this wild outbreak with piercing shrieks, which the woods reverberated on all sides, so that, alone as she was in her childish and unreasonable wrath, it seemed as if a hidden multitude were lending her their sympathy and encouragement. Seen in the brook once more was the shadowy wrath of Pearl's image, crowned and girdled with flowers, but stamping its foot, wildly gesticulating, and, in the midst of all, still pointing its small forefinger at Hester's bosom.

"I see what ails the child," whispered Hester to the clergyman, and turning pale in spite of a strong effort to conceal her trouble and annoyance. "Children will not abide any, the slightest, change in the accustomed aspect of things that are daily before their eyes. Pearl misses something that she has always seen me wear!"

"I pray you," answered the minister, "if thou hast any means of pacifying the child, do it forthwith! Save it were the cankered wrath of an old witch like Mistress Hibbins," added he, attempting to smile, "I know nothing that I would not sooner encounter than this passion in a child. In Pearl's young beauty, as in the wrinkled witch, it has a preternatural effect. Pacify her if thou lovest me!"

Hester turned again towards Pearl with a crimson blush upon her cheeks, a conscious glance aside at the clergyman, and then a heavy sigh, while, even before she had time to speak, the blush yielded to a deadly pallor.

"Pearl," said she sadly, "look down at thy feet! There!

-before thee !-on the hither side of the brook!"

The child turned her eyes to the point indicated, and there lay the scarlet letter so close upon the margin of the stream that the gold embroidery was reflected in it.

"Bring it hither!" said Hester.

"Come thou and take it up!" answered Pearl.

"Was ever such a child!" observed Hester aside to the minister. "Oh, I have much to tell thee about her! But, in very truth, she is right as regards this hateful token. I must bear its torture yet a little longer—only a few days longer—until we shall have left this region, and look back hither as to a land which we have dreamed of. The forest cannot hide it! The mid-ocean shall take it from my hand, and

swallow it up for ever!"

With these words she advanced to the margin of the brook, took up the scarlet letter, and fastened it again into her bosom. Hopefully, but a moment ago, as Hester had spoken of drowning it in the deep sea, there was a sense of inevitable doom upon her as she thus received back this deadly symbol from the hand of fate. She had flung it into infinite space! she had drawn an hour's free breath! and here again was the scarlet misery glittering on the old spot! So it ever is, whether thus typified or no, that an evil deed invests itself with the character of doom. Hester next gathered up the heavy tresses of her hair and confined them beneath her cap. As if there were a withering spell in the sad letter, her beauty, the warmth and richness of her womanhood, departed like fading sunshine, and a gray shadow seemed to fall across her.

When the dreary change was wrought, she extended her hand to Pearl.

"Dost thou know thy mother now, child?" asked she, reproachfully, but with a subdued tone. "Wilt thou come across the brook, and own thy mother, now that she has her shame upon her—now that she is sad?"

"Yes; now I will!" answered the child, bounding across the brook, and clasping Hester in her arms. "Now thou art

my mother indeed! and I am thy little Pearl!"

In a mood of tenderness that was not usual with her, she drew down her mother's head, and kissed her brow and both her cheeks. But then-by a kind of necessity that always impelled this child to allow whatever comfort she might chance to give with a throb of anguish—Pearl put up her mouth and kissed the scarlet letter, too!

"That was not kind!" said Hester. "When thou hast shown

me a little love, thou mockest me!"

"Why doth the minister sit yonder?" asked Pearl.

"He waits to welcome thee,' replied her mother. "Come thou, and entreat his blessing! He loves thee, my little Pearl, and loves thy mother, too. Wilt thou not love him? Come he longs to greet thee!"

"Doth he love us?" said Pearl, looking up with acute intelligence into her mother's face. "Will he go back with us, hand in hand, we three together, into the town?"

"Not now, my child," answered Hester. "But in days to come he will walk hand in hand with us. We will have a home and fireside of our own; and thou shalt sit upon his knee; and he will teach thee many things, and love thee dearly. Thou wilt love him-wilt thou not?"

"And will he always keep his hand over his heart?" in-

quired Pearl.

"Foolish child, what a question is that!" exclaimed her

mother. "Come, and ask his blessing!"

But, whether influenced by the jealousy that seems instinctive with every petted child towards a dangerons rival, or from whatever caprice of her freakish nature, Pearl would show no favour to the clergyman. It was only by an exertion of force that her mother brought her up to him, hanging back, and manifesting her reluctance by odd grimaces; of which, ever since her babyhood, she had possessed a singular variety, and could transform her mobile physiognomy into a series of different aspects, with a new mischief in them, each and all. The minister-painfully embarrassed, but hoping that a kiss might prove a talisman to admit him into the child's kindlier regards—bent forward, and impressed one on

her brow. Hereupon, Pearl broke away from her mother, and, running to the brook, stooped over it, and bathed her forehead, until the unwelcome kiss was quite washed off and diffused through a long lapse of the gliding water. She then remained apart, silently watching Hester and the clergyman; while they talked together and made such arrangements as were suggested by their new position and the purposes soon to be fulfilled.

And now this fateful interview had come to a close. The dell was to be left in solitude among its dark, old trees, which, with their multitudinous tongues, would whisper long of what had passed there, and no mortal be the wiser. And the melancholy brook would add this other tale to the mystery with which its little heart was already overburdened, and whereof it still kept up a murmuring babble, with not a whit more cheerfulness of tone than for ages heretofore.

#### CHAPTER XX

## THE MINISTER IN A MAZE

As the minister departed, in advance of Hester Prynne and little Pearl, he threw a backward glance, half expecting that he should discover only some faintly traced features or outline of the mother and the child, slowly fading into the twilight of the woods. So great a vicissitude in his life could not at once be received as real. But there was Hester, clad in her gray robe, still standing beside the tree-trunk, which some blast had overthrown a long antiquity ago, and which time had ever since been covering with moss, so that these two fated ones, with earth's heaviest burden on them, might there sit down together, and find a single hour's rest and solace. And there was Pearl, too, lightly dancing from the margin of the brook—now that the intrusive third person was gone—and taking her old place by her mother's side. So the minister had not fallen asleep and dreamed!

In order to free his mind from this indistinctness and duplicity of impression, which vexed with a strange disquietude, he recalled and more thoroughly defined the plans which Hester and himself had sketched for their departure. It had been determined between them that the Old World, with its crowds and cities, offered them a more eligible shelter and concealment than the wilds of New England or all America, with its alternatives of an Indian Wigwam, or the few settlements of Europeans scattered thinly along the scaboard. Not to speak of the clergyman's health, so inadequate to sustain the hardships of a forest life, his native gifts, his culture, and his entire development would secure him a home only in the midst of civilization and refinement; the higher the state the more delicately adapted to it the man. In furtherance of this choice, it so happened that a ship lay in the harbour; one of those unquestionable cruisers, frequent at that day, which, without being absolutely outlaws of the deep, yet roamed over its surface with a remarkable irresponsibility of character. This vessel had recently arrived from the Spanish Main, and within three days' time would sail for Bristol. Hester Prynne— whose vocation, as a self-enlisted Sister of Charity, had brought her acquainted with the captain and crew—could take upon herself to secure the passage of two individuals and a child with all the secrecy which circumstances rendered more than desirable.

The minister had inquired of Hester, with no little interest, the precise time at which the vessel might be expected to depart. It would probably be on the fourth day from the present. "This is most fortunate!" he had then said to himself. Now, why the Reverend Mr. Dimmesdale considered it so very fortunate we hesitate to reveal. Nevertheless-to hold nothing back from the reader-it was because, on the third day from the present, he was to preach the Election Sermon; and, as such an occasion formed an honourable epoch in the life of a New England Clergyman, he could not have chanced upon a more suitable mode and time of terminating his professional career. "At least, they shall say of me," thought this exemplary man, "that I leave no public duty unperformed or ill-performed!" Sad, indeed, that an introspection so profound and acute as this poor minister's should be so miserably deceived! We have had, and may still have, worse things to tell of him; but none, we apprehend, so pitiably weak; no evidence, at once so slight and irrefragable, of a subtle disease that had long since begun to eat into the real substance of his character. No man, for any considerable period, can wear one face to himself and another to the multitude, without finally getting bewildered as to which may be the true.

The excitement of Mr. Dimmesdale's feelings as he returned from his interview with Hester, lent him unaccustomed physical energy, and hurried him townward at a rapid pace. The pathway among the woods seemed wilder, more uncouth with its rude natural obstacles, and less trodden by the foot of man, than he remembered it on his outward journey. But he leaped across the plashy places, thrust himself through the clinging underbush, climbed the ascent, plunged into the hollow, and overcame, in short, all the diffi-

culties of the track, with an unweariable activity that astonished him. He could not but recall how feebly, and with what frequent pauses for breath he had toiled over the same ground, only two days before. As he drew near the town, he took an impression of change from the series of familiar objects that presented themselves. It seemed not yesterday, not one, not two, but many days, or even years ago, since he had quitted them. There, indeed, was each former trace of the street, as he remembered it, and all the peculiarities of the houses, with the due multitude of gablepeaks, and a weather-cock at every point where his memory suggested one. Not the less, however, came this importunately obtrusive sense of change. The same was true as regarded the acquaintances whom he met, and all the wellknown shapes of human life, about the little town. They looked neither older nor younger now; the beards of the aged were no whiter, nor could the creeping babe of yesterday walk on his feet to-day; it was impossible to describe in what respect they differed from the individuals on whom he had so recently bestowed a parting glance; and yet the minister's deepest sense seemed to inform him of their mutability. A similar impression struck him most remarkably as he passed under the walls of his own church. The edifice had so very strange, and yet so familiar an aspect, that Mr. Dimmesdale's mind vibrated between two ideas: either that he had seen it only in a dream hitherto, or that he was merely dreaming about it now.

This phenomenon, in the various shapes which it assumed, indicated no external change, but so sudden and important a change in the spectator of the familiar scene, that the intervening space of a single day had operated on his consciousness like the lapse of years. The minister's own will, and Hester's will, and the fate that grew between them, had wrought this transformation. It was the same town as heretofore, but the same minister returned not from the forest. He might have said to the friends who greeted him—"I am not the man for whom you take me! I left him yonder in the forest, withdrawn into a secret dell, by a mossy tree trunk, and near a melancholy brook! Go, seek your minister, and see if his emaciated figure, his thin cheek, his white,

heavy, pain-wrinkled brow, be not flung down there, like a cast-off garment!" His friends, no doubt, would still have insisted with him—"Thou art thyself the man!" but the error would have been their own, not his.

Before Mr. Dimmesdale reached home, his inner man gave him other evidences of a revolution in the sphere of thought and feeling. In truth, nothing short of a total change of dynasty and moral code, in that interior kingdom. was adequate to account for the impulses now communicated to the unfortunate and startled minister. At every step he was incited to do some strange, wild, wicked thing or other, with a sense that it would be at once involuntary and intentional, in spite of himself, yet growing out of a profounder self than that which opposed the impulse. For instance, he met one of his own deacons. The good old man addressed him with the paternal affection and patriarchal privilege which his venerable age, his upright and holy character, and his station in the church, entitled him to use; and, conjoined with this, the deep, almost worshipping respect, which the minister's professional and private claims alike demanded. Never was there a more beautiful example of how the majesty of age and wisdom may comport with the obeisance and respect enjoined upon it, as from a lower social rank, and inferior order of endowment, towards a higher. Now, during a conversation of some two or three moments between the Reverend Mr. Dimmesdale and this excellent and hoarybearded deacon, it was only by the most careful self-control that the former could refrain from uttering certain blasphemous suggestions that rose into his mind, respecting the communion-supper. He absolutely trembled and turned pale as ashes, lest his tongue should wag itself in utterance of these horrible matters, and plead his own consent for so doing, without his having fairly given it. And, even with this terror in his heart, he could hardly avoid laughing, to imagine how the sanctified old patriarchal deacon would have been petrified by his minister's impiety.

Again, another incident of the same nature. Hurrying along the street, the Reverend Mr. Dimmesdale encountered the eldest female member of his church, a most pious and exemplary old dame, poor, widowed, lonely, and with a heart

as full of reminiscences about her dead husband and children and her dead friends of long ago, as a burial-ground is full of storied gravestones. Yet all this, which would else have been such heavy sorrow, was made almost a solemn joy to her devout old soul, by religious consolations and the truths of Scripture, wherewith she had fed herself continually for more than thirty years. And since Mr. Dimmesdale had taken her in charge, the good grandam's chief earthly comfort-which, unless it had been likewise a heavenly comfort. could have been none at all—was to meet her pastor, whether casually, or of set purpose, and be refreshed with a word of warm, fragrant, heaven-breathing Gospel truth, from his beloved lips, into her dulled, but rapturously attentive ear. But, on this occasion, up to the moment of putting his lips to the old woman's ear, Mr. Dimmesdale, as the great enemy of souls would have it, could recall no text of Scripture, nor aught else, except a brief, pithy, and, as it then appeared to him, unanswerable argument against the immortality of the human soul. The instilment thereof into her mind would probably have caused this aged sister to drop down dead. at once, as by the effect of an intensely poisonous infusion. What he really did whisper, the minister could never afterwards recollect. There was, perhaps, a fortunate disorder in his utterance, which failed to impart any distinct idea to the good widow's comprehension, or which Providence interpreted after a method of its own. Assuredly, as the minister looked back, he beheld an expression of divine gratitude and ecstasy that seemed like the shine of the celestial city on her face, so wrinkled and ashy pale.

Again, a third instance. After parting from the old church-member, he met the youngest sister of them all. It was a maiden newly-won—and won by the Reverend Mr. Dimmesdale's own sermon, on the Sabbath after his vigil—to barter the transitory pleasures of the world for the heavenly hope that was to assume brighter substance as life grew dark around her, and which would gild the utter gloom with final glory. She was fair and pure as a lily that had bloomed in Paradise. The minister knew well that he was himself enshrined within the stainless sanctity of her heart, which hung its snowy curtains about his image, imparting

to religion the warmth of love, and to love a religious purity. Satan, that afternoon, had surely led the poor young girl away from her mother's side, and thrown her into the pathway of this sorely tempted, or-shall we not rather say?this lost and desperate man. As she drew nigh, the archfiend whispered him to condense into small compass, and drop into her tender bosom a germ of evil that would be sure to blossom darkly soon, and bear black fruit betimes. Such was his sense of power over this virgin soul, trusting him as she did, that the minister felt potent to blight all the field of innocence with but one wicked look, and develop all its opposite with but a word. So-with a mightier struggle than he had vet sustained—he held his Geneva cloak before his face, and hurried onward, making no sign of recognition, and leaving the young sister to digest his rudeness as she might. She ransacked her conscience—which was full of harmless little matters, like her pocket or her work-bag-and took herself to task, poor thing! for a thousand imaginary faults, and went about her household duties with swollen evelids the next morning.

Before the minister had time to celebrate his victory over this last temptation, he was conscious of another impulse, more ludicrous, and almost as horrible. It waswe blush to tell it-it was to stop short in the road, and teach some very wicked words to a knot of little Puritan children who were playing there, and had but just begun to talk. Denying himself this freak, as unworthy of his cloth, he met a drunken seaman, one of the ship's crew from the Spanish Main. And here, since he had so valiantly forborne all other wickedness, poor Mr. Dimmesdale longed at least to shake hands with the tarry blackguard, and recreate himself with a few improper jests, such as dissolute sailors so abound with, and a volley of good, round, solid, satisfactory, and heaven-defying oaths! It was not so much a better principle, as partly his natural good taste, and still more his buckramed habit of clerical decorum, that carried him safely through the latter crisis.

"What is it that haunts and tempts me thus?" cried the minister to himself, at length, pausing in the street, and striking his hand against his forehead.

"Am I mad? or am I given over utterly to the fiend? Did I make a contract with him in the forest, and sign it with my blood? And does he now summon me to its fulfilment, by suggesting the performance of every wickedness which his most foul imagination can conceive?"

At the moment when the Reverend Mr. Dimmesdale thus communed with himself, and struck his forehead with his hand, old Mistress Hibbins, the reputed witch-lady, is said to have been passing by. She made a very grand appearance, having on a high head-dress, a rich gown of velvet, and a ruff done up with the famous yellow starch, of which Anne Turner, her especial friend, had taught her the secret, before this last good lady had been hanged for Sir Thomas Overbury's murder. Whether the witch had read the minister's thoughts or no, she came to a full stop, looked shrewdly into his face, smiled craftily, and—though little given to converse with clergymen—began a conversation.

"So, reverend sir, you have made a visit into the forest," observed the witch-lady, nodding her high head-dress at him. "The next time I pray you to allow me only a fair warning, and I shall be proud to bear you company. Without taking overmuch upon myself, my good word will go far towards gaining any strange gentleman a fair reception from yonder potentate you wot of."

"I profess, madam," answered the clergyman, with a grave obeisance, such as the lady's rank demanded, and his own good breeding made imperative—"I profess, on my conscience and character, that I am utterly bewildered as touching the purport of your words! I went not into the forest to seek a potentate, neither do I, at any future time, design a visit thither, with a view to gaining favour of such personage. My one sufficient object was to greet that pious friend of mine, the Apostle Eliot, and rejoice with him over the many precious souls he hath won from heathendom!"

"Ha, ha, ha!" crackled the old witch-lady, still nodding her high head-dress at the minister. "Well, well! we must needs talk thus in the daytime! You carry it off like an old hand! But at midnight, and in the forest, we shall have other talk together!" She passed on with her aged stateliness, but often turning back her head and smiling at him, like one willing to recognise a secret intimacy of connexion.

"Have I then sold myself," thought the minister, "to the fiend whom, if men say true, this yellow-starched and velveted old hag has chosen for her prince and master?"

The wretched minister! He had made a bargain very like it! Tempted by a dream of happiness, he had yielded himself with deliberate choice, as he had never done before, to what he knew was deadly sin. And the infectious poison of that sin had been thus rapidly diffused throughout his moral system.

It had stupefied all blessed impulses, and awakened into vivid life the whole brotherhood of bad ones. Scorn, bitterness, unprovoked malignity, gratuitous desire of ill, ridicule of whatever was good and holy, all awoke to tempt, even while they frightened him. And his encounter with old Mistress Hibbins, if it were a real incident, did but show its sympathy and fellowship with wicked mortals, and the world of perverted spirits.

He had by this time reached his dwelling on the edge of the burial ground, and, hastening up the stairs, took refuge in his study. The minister was glad to have reached this shelter, without first betraying himself to the world by any of those strange and wicked eccentricities to which he had been continually impelled while passing through the streets. He entered the accustomed room, and looked around him on its books, its windows, its fireplace, and the tapestried comfort of the walls, with the same perception of strangeness that had haunted him throughout his walk from the forest dell into the town and thitherward. Here he had studied and written; here gone through fast and vigil, and come forth half alive; here striven to pray; here borne a hundred thousand agonies! There was the Bible, in its rich old Hebrew, with Moses and the Prophets speaking to him, and God's voice through all! There on the table, with the inky pen beside it, was an unfinished sermon, with a sentence broken in the midst, where his thoughts had ceased to gush out upon the page two days before. He knew that it was himself, the thin and white-cheeked minister, who had done

and suffered these things, and written thus far into the Election Sermon! But he seemed to stand apart, and eye this former self with scornful pitying, but half-envious curiosity. That self was gone. Another man had returned out of the forest—a wiser one—with a knowledge of hidden mysteries which the simplicity of the former never could have reached. A bitter kind of knowledge that!

While occupied with these reflections, a knock came at the door of the study, and the minister said, "Come in!"—not wholly devoid of an idea that he might behold an evil

spirit.

And so he did! It was old Roger Chillingworth that entered. The minister stood white and speechless, with one hand on the Hebrew Scriptures, and the other spread

upon his breast.

"Welcome home, reverend sir," said the physician. "And how found you that godly man, the Apostle Eliot? But methinks, dear sir, you look pale, as if the travel through the wilderness had been too sore for you. Will not my aid be requisite to put you in heart and strength to preach your Election Sermon?"

"Nay, I think not so," rejoined the Reverend Mr. Dimmesdale. "My journey, and the sight of the holy Apostle yonder, and the free air which I have breathed have done me good, after so long confinement in my study. I think to need no more of your drugs, my kind physician, good though they

be, and administered by a friendly hand."

All this time Roger Chillingworth was looking at the minister with the grave and intent regard of a physician towards his patient. But, in spite of this outward show, the latter was almost convinced of the old man's knowledge, or, at least, his confident suspicion, with respect to his own interview with Hester Prynne. The physician knew then that in the minister's regard he was no longer a trusted friend, but his bitterest enemy. So much being known, it would appear natural that a part of it should be expressed. It is singular, however, how long a time often passes before words embody things; and with what security two persons, who choose to avoid a certain subject, may approach its very verge, and retire without disturbing it. Thus the min-

ister felt no apprehension that Roger Chillingworth would touch, in express words, upon the real position which they sustained towards one another. Yet did the physician, in his dark way, creep frightfully near the secret.

"Were it not better," said he, "that you use my poor skill to-night? Verily, dear sir, we must take pains to make you strong and vigorous for this occasion of the Election discourse. The people look for great things from you, apprehending that another year may come about and find their pastor gone."

"Yes, to another world," replied the minister with pious resignation. "Heaven grant it be a better one; for, in good sooth, I hardly think to tarry with my flock through the flitting seasons of another year! But touching your medicine, kind sir, in my present frame of body I need it not."

"I joy to hear it," answered the physician. "It may be that my remedies, so long administered in vain, begin now to take due effect. Happy man were I, and well deserving of New England's gratitude, could I achieve this cure!"

"I thank you from my heart, most watchfui friend," said the Reverend Mr. Dimmesdale with a solemn smile. "I thank you, and can but requite your good deeds with my prayers."

"A good man's prayers are golden recompense!" rejoined old Roger Chillingworth, as he took his leave. "Yea, they are the current gold coin of the New Jerusalem, with the

King's own mint mark on them!"

Left alone, the minister summoned a servant of the house, and requested food, which, being set before him, he ate with ravenous appetite. Then flinging the already written pages of the Election Sermon into the fire, he forthwith began another, which he wrote with such an impulsive flow of thought and emotion, that he fancied himself inspired; and only wondered that Heaven should see fit to transmit the grand and solemn music of its oracles through so foul an organ pipe as he. However, leaving that mystery to solve itself, or go unsolved for ever, he drove his task onward with earnest haste and ecstasy.

Thus the night fled away, as if it were a winged steed, and he careering on it; morning came, and peeped, blushing, through the curtains; and at last sunrise threw a golden beam into the study, and laid it right across the minister's bedazzled eyes. There he was, with the pen still between his fingers, and a vast, immeasurable tract of written space behind him!

#### CHAPTER XXI

# THE NEW ENGLAND HOLIDAY

BETIMES in the morning of the day on which the new Governor was to receive his office at the hands of the people, Hester Prynne and little Pearl came into the market-place. It was already thronged with the craftsmen and other plebeian inhabitants of the town, in considerable numbers, among whom, likewise, were many rough figures, whose attire of deer-skins marked them as belonging to some of the forest settlements, which surrounded the little metropolis of the colony.

On this public holiday, as on all other occasions for seven years past, Hester was clad in a garment of coarse gray cloth. Not more by its hue than by some indescribable peculiarity in its fashion, it had the effect of making her fade personally out of sight and outline; while 'again the scarlet letter brought her back from this twilight indistinctness, and revealed her under the moral aspect of its own illumination. Her face, so long familiar to the townspeople, showed the marble quietude which they were accustomed to behold there. It was like a mask; or, rather like the frozen calmness of a dead woman's features; owing this dreary resemblance to the fact that Hester was actually dead, in respect to any claim of sympathy, and had departed out of the world with which she still seemed to mingle.

It might be, on this one day, that there was an expression unseen before, nor, indeed, vivid enough to be detected now; unless some preternaturally gifted observer should have first read the heart, and have afterwards sought a corresponding development in the countenance and mien. Such a spiritual sneer might have conceived, that, after sustaining the gaze of the multitude through several miserable years as a necessity, a penance, and something which it was a stern religion to endure, she now, for one last time more, encountered it

freely and voluntarily, in order to convert what had so long been agony into a kind of triumph. "Look your last on the scarlet letter and its wearer!"—the people's victim and lifelong bond-slave, as they fancied her, might say to them. "Yet a little while, and she will be beyond your reach! A few hours longer and the deep, mysterious ocean will quench and hide for ever the symbol which we have caused to burn on her bosom!" Nor were it an inconsistency too improbable to be assigned to human nature, should we suppose a feeling of regret in Hester's mind, at the moment when she was about to win her freedom from the pain which had been thus deeply incorporated with her being. Might there not be an irresistible desire to quaff a last, long, breathless draught of the cup of wormwood and aloes, with which nearly all her years of womanhood had been perpetually flavoured. The wine of life, henceforth to be presented to her lips, must be indeed rich, delicious, and exhilarating, in its chased and golden beaker; or else leave an inevitable and weary languor, after the lees of bitterness wherewith she had been drugged, as with a cordial of intensest potency.

Pearl was decked out with airy gaiety. It would have been impossible to guess that this bright and sunny apparition owed its existence to the shape of gloomy gray; or that a fancy, at once so gorgeous and so delicate as must have been requisite to contrive the child's apparel, was the same that had achieved a task perhaps more difficult, in imparting so distinct a peculiarity to Hester's simple robe. The dress, so proper was it to little Pearl, seemed an effluence, or inevitable development and outward manifestation of her character, no more to be separated from her than the manyhued brilliancy from a butterfly's wing, or the painted glory from the leaf of a bright flower. As with these, so with the child; her garb was all of one idea with her nature. On this eventful day, moreover, there was a certain singular inquietude and excitement in her mood, resembling nothing so much as the shimmer of a diamond, that sparkles and flashes with the varied throbbings of the breast on which it is displayed. Children have always a sympathy in the agitations of those connected with them: always, especially, a sense of any trouble or impending revolution, of whatever kind, in domestic circumstances; and therefore Pearl, who was the gem on her mother's unquiet bosom, betrayed, by the very dance of her spirits, the emotions which none could detect in the marble passiveness of Hester's brow.

This effervescence made her flit with a bird-like movement, rather than walk by her mother's side. She broke continually into shouts of a wild, inarticulate, and sometimes piercing music. When they reached the market-place, she became still more restless, on perceiving the stir and bustle that enlivened the spot; for it was usually more like the broad and lonesome green before a village meeting-house, than the centre of a town's business.

"Why, what is this, mother?" cried she. "Wherefore have all the people left their work to-day? Is it a play-day for the whole world? See, there is the blacksmith! He has washed his sooty face, and put on his Sabbath-day clothes, and looks as if he would gladly be merry, if any kind body would only teach him how! And there is Master Brackett, the old jailer, nodding and smiling at me. Why does he do so, mother?"

"He remembers thee a little babe, my child," answered Hester.

"He should not nod and smile at me, for all that—the black, grim, ugly-eyed old man!" said Pearl.

"He may nod at thee, if he will; for thou art clad in gray, and wearest the scarlet letter. But see, mother, how many faces of strange people, and Indians among them, and sailors! What have they all come to do, here in the market-place?"

"They wait to see the procession pass," said Hester. "For the Governor and the magistrates are to go by, and the ministers, and all the great people and good people, with the music and the soldiers marching before them."

"And will the minister be there?" asked Pearl. "And will he hold out both his hands to me, as when thou led'st me to him from the brook-side?"

"He will be there, child," answered her mother; "but he will not greet thee to-day, nor must thou greet him."

"What a strange, sad man is he!" said the child, as if speaking partly to herself. "In the dark night-time he calls

us to him, and holds thy hand and mine, as when we stood with him on the scaffold yonder! And in the deep forest, where only the old trees can hear, and the strip of sky see it, he talks with thee, sitting on a heap of moss! And he kisses my forehead, too, so that the little brook would hardly wash it off! But, here, in the sunny day, and among all the people he knows us not; nor must we know him! A strange, sad man is he, with his hands always over his heart!"

"Be quiet, Pearl—thou understandest not these things," said her mother. "Think not now of the minister, but look about thee, and see how cheery is everybody's face to-day. The children have come from their schools, and the grown people from their workshops and their fields, on purpose to be happy, for, to-day, a new man is beginning to rule over them; and so—as has been the custom of mankind ever since a nation was first gathered—they make merry and rejoice: as if a good and golden year were at length to pass over the poor old world!"

It was as Hester said, in regard to the unwonted jollity that brightened the faces of the people. Into this festal season of the year—as it already was, and continued to be during the greater part of two centuries—the Puritans compressed whatever mirth and public joy they deemed allowable to human infimity; thereby so far dispelling the customary cloud, that, for the space of a single holiday, they appeared scarcely more grave than most other communities at a period of general affliction.

But we perhaps exaggerate the gray or sable tinge, which undoubtedly characterized the mood and manners of the age. The persons now in the market-place of Boston had not been born to an inheritance of Puritanic gloom. They were native Englishmen, whose fathers had lived in the sunny richness of the Elizabethan epoch; a time when the life of England, viewed as one great mass, would appear to have been as stately, magnificent, and joyous, as the world has ever witnessed. Had they followed their hereditary taste, the New England settlers would have illustrated all events of public importance by bonfires, banquets, pageantries, and processions. Nor would it have been impracticable, in the observ-

ance of majestic ceremonies, to combine mirthful recreation with solemnity, and give, as it were, a grotesque and brilliant embroidery to the great robe of state, which a nation, at such festivals, puts on. There was some shadow of an attempt of this kind in the mode of celebrating the day on which the political year of the colony commenced. The dim reflection of a remembered splendour, a colourless and manifold diluted repetition of what they had beheld in proud old London we will not say at a royal coronation, but at a Lord Mayor's show—might be traced in the customs which our forefathers instituted, with reference to the annual installation of magistrates. The fathers and founders of the commonwealththe statesman, the priest, and the soldier-deemed it a duty then to assume the outward state and majesty, which, in accordance with antique style, was looked upon as the proper garb of public and social eminence. All came forth to move in procession before the people's eye, and thus impart a needed dignity to the simple framework of a government so newly constructed.

Then, too, the people were countenanced, if not encouraged, in relaxing the severe and close application to their various modes of rugged industry, which, at all other times, seemed of the same piece and material with their religion. Here, it is true, were none of the appliances which popular merriment would so readily have found in the England of Elizabeth's time, or that of James—no rude shows of a theatrical kind; no minstrel, with his harp and legendary ballad, nor gleeman with an ape dancing to his music; no juggler, with his tricks of mimic witchcraft; no Merry Andrew, to stir up the multitude with jests, perhaps a hundred years old, but still effective, by their appeals to the very broadest sources of mirthful sympathy. All such professors of the several branches of jocularity would have been sternly repressed, not only by the rigid discipline of law, but by the general sentiment which gives law its vitality. Not the less, however, the great, honest face of the people smiled—grimly, perhaps, but widely too. Nor were sports wanting, such as the colonists had witnessed, and shared in, long ago at the country fairs and on the village-greens of England; and which it was thought well to keep alive on this new soil, for

the sake of the courage and manliness that were essential in them. Wrestling matches, in the different fashions of Cornwall and Devonshire, were seen here and there about the market-place; in one corner, there was a friendly bout at quarterstaff; and—what attracted most interest of all—on the platform of the pillory, already so noted in our pages, two masters of defence were commencing an exhibition with the buckler and broadsword. But, much to the disappointment of the crowd, this latter business was broken off by the interposition of the town beadle, who had no idea of permitting the majesty of the law to be violated by such an abuse of one of its consecrated places.

It may not be too much to affirm, on the whole, (the people being then in the first stages of joyless deportment, and the offspring of sires who had known how to be merry, in their day), that they would compare favourably, in point of holiday keeping, with their descendants, even at so long an interval as ourselves. Their immediate posterity, the generation next to the early emigrants, wore the blackest shade of Puritanism, and so darkened the national visage with it, that all the subsequent years have not sufficed to clear it up. We

have yet to learn again the forgotten art of gaiety.

The picture of human life in the market-place, though its general tint was the sad gray, brown, or black of the English emigrants, was yet enlivened by some diversity of hue. A party of Indians-in their savage finery of curiously embroidered deerskin robes, wampum-belts, red and vellow ochre, and feathers, and armed with the bow and arrow and stone-headed spear-stood apart with countenances of inflexible gravity, beyond what even the Puritan aspect could attain. Nor, wild as were these painted barbarians, were they the wildest feature of the scene. This distinction could more justly be claimed by some mariners—a part of the crew of the vessel from the Spanish Main-who had come ashore to see the humours of Election Day. They were rough-looking desperadoes, with sun-blackened faces, and an immensity of beard: their wide short trousers were confined about the waist by belts, often clasped with a rough plate of gold, and sustaining always a long knife, and in some instances, a sword. From beneath their broad-brimmed hats of palmleaf, gleamed eyes which, even in good-nature and merriment, had a kind of animal ferocity. They transgressed without fear or scruple, the rules of behaviour that were binding on all others: smoking tobacco under the beadle's very nose, although each whiff would have cost a townsman a shilling; and quaffing at their pleasure, draughts of wine or aqua-vitæ from pocket flasks, which they freely tendered to the gaping crowd around them. It remarkably characterised the incomplete morality of the age, rigid as we call it, that a licence was allowed the seafaring class, not merely for their freaks on shore, but for far more desperate deeds on their proper element. The sailor of that day would go near to be arraigned as a pirate in our own. There could be little doubt, for instance, that this very ship's crew, though no unfavourable specimens of the nautical brotherhood, had been guilty, as we should phrase it, of depredations on the Spanish commerce, such as would have perilled all their necks in a modern court of justice.

But the sea in those old times heaved, swelled, and foamed very much at its own will, or subject only to the tempestuous wind, with hardly any attempts at regulation by human law. The buccaneer on the wave might relinquish his calling and become at once if he chose, a man of probity and piety on land; nor, ever in the full career of his reckless life, was he regarded as a personage with whom it was disreputable to traffic or casually associate. Thus the Puritan elders in their black cloaks, starched bands, and steeple-crowned hats, smiled not unbenignantly at the clamour and rude deportment of these jolly seafaring men; and it excited neither surprise nor animadversion when so reputable a citizen as old Roger Chillingworth, the physician, was seen to enter the market-place in close and familiar talk with the commander of the questionable vessel.

The latter was by far the most showy and gallant figure, so far as apparel went, anywhere to be seen among the multitude. He wore a profusion of ribbons on his garment, and gold lace on his hat, which was also encircled by a gold chain, and surmounted with a feather. There was a sword at his side and a swordcut on his forehead, which, by the arrangement of his hair, he seemed anxious rather to display than

hide. A landsman could hardly have worn this garb and shown this face, and worn and shown them both with such a galliard air, without undergoing stern question before a magistrate, and probably incurring a fine or imprisonment, or perhaps an exhibition in the stocks. As regarded the shipmaster, however, all was looked upon as pertaining to the character, as to a fish his glistening scales.

After parting from the physician, the commander of the Bristol ship strolled idly through the market-place; until happening to approach the spot where Hester Prynne was standing, he appeared to recognise, and did not hesitate to address her. As was usually the case wherever Hester stood. a small vacant area—a sort of magic circle—had formed itself about her, into which, though the people were elbowing one another at a little distance, none ventured or felt disposed to intrude. It was a forcible type of the moral solitude in which the scarlet letter enveloped its fated wearer; partly by her own reserve, and partly by the instinctive. though no longer so unkindly, withdrawal of her fellowcreatures. Now, if never before, it answered a good purpose by enabling Hester and the seaman to speak together without risk of being overheard; and so changed was Hester Prynne's repute before the public, that the matron in town. most eminent for rigid morality, could not have held such intercourse with less result of scandal than herself.

"So, mistress," said the mariner, "I must bid the steward make ready one more berth than you bargained for! No fear of scurvy or ship fever this voyage. What with the ship's surgeon and this other doctor, our only danger will be from drug or pill; more by token, as there is a lot of apothecary's stuff aboard, which I traded for with a Spanish vessel."

"What mean you?" inquired Hester, startled more than she permitted to appear. "Have you another passenger?"

"Why, know you not," cried the shipmaster. "that this physician here—Chillingworth he calls himself—is minded to try my cabin-fare with you? Ay, ay, you must have known it; for he tells me he is of your party, and a close friend to the gentleman you spoke of—he that is in peril from the sour old Puritan rulers."

"They know each other well, indeed," replied Hester, with a mien of calmness, though in the utmost consternation.

"They have long dwelt together."

Nothing further passed between the mariner and Hester Prynne. But at that instant she beheld old Roger Chillingworth himself, standing in the remotest corner of the market-place and smiling on her; a smile which—across the wide and bustling square, and through all the talk and laughter, and various thoughts, moods, and interests of the crowd—conveyed secret and fearful meaning.

## CHAPTER XXII

## THE PROCESSION

EFORE Hester Prynne could call together her thoughts, and consider what was practicable to be done in this new and startling aspect of affairs, the sound of military music was heard approaching along a contiguous street. It denoted the advance of the procession of magistrates and citizens on its way towards the meetinghouse: where, in compliance with a custom thus early established, and ever since observed, the Reverend Mr. Dimmesdale was to deliver an Election Scrmon.

Soon the head of the procession showed itself, with a slow and stately march, turning a corner, and making its way across the market-place. First came the music. prised a variety of instruments, perhaps imperfectly adapted to one another, and played with no great skill; but yet attaining the great object for which the harmony of drum and clarion addresses itself to the multitude—that of imparting a higher and more heroic air to the scene of life that passes before the eye. Little Pearl at first clapped her hands, but then lost for an instant the restless agitation that had kept her in a continual effervescence throughout the morning; she gazed silently, and seemed to be borne upward like a floating sea-bird on the long heaves and swells of sound. But she was brought back to her former mood by the shimmer of the sunshine on the weapons and bright armour of the military company, which followed after the music, and formed the honorary escort of the procession. body of soldiery—which still sustains a corporate existence, and marches down from past ages with an ancient and honourable fame—was composed of no mercenary materials. Its ranks were filled with gentlemen who felt the stirrings of martial impulse, and sought to establish a kind of College of Arms, where, as in an association of Knights Templars, they

might learn the science, and, so far as peaceful exercise would teach them, the practices of war. The high estimation then placed upon the military character might be seen in the lofty port of each individual member of the company. Some of them, indeed, by their services in the Low Countries and on other fields of European warfare, had fairly won their title to assume the name and pomp of soldiership. The entire array, moreover, clad in burnished steel, and with plumage nodding over their bright morions, had a brilliancy of effect which no modern display can aspire to equal.

And yet the men of civil eminence, who came immediately behind the military escort, were better worth a thoughtful observer's eve. Even in outward demeanour they showed a stamp of majesty that made the warrior's haughty stride look vulgar, if not absurd. It was an age when what we call talent had far less consideration than now, but the massive materials which produce stability and dignity of character a great deal more. The people possessed by hereditary right the quality of reverence, which, in their descendants, if it survive at all, exists in smaller proportion, and with a vastly diminished force in the selection and estimate of public men. The change may be for good or ill, and is partly, perhaps, for both. In that old day the English settler on these rude shores-having left king, nobles, and all degrees of awful rank behind, while still the faculty and necessity of reverence was strong in him-bestowed it on the white hair and venerable brow of age-on long-tried integrity-on solid wisdom and sad-coloured experience—on endowments of that grave and weighty order which gave the idea of permanence, and comes under the general definition of respecta-These primitive statesmen, therefore—Bradstreet, bility. Endicott, Dudley, Bellingham, and their compeers—who were elevated to power by the early choice of the people, seem to have been not often brilliant, but distinguished by a ponderous sobriety, rather than activity of intellect. They had fortitude and self-reliance, and in time of difficulty or peril stood up for the welfare of the state like a line of cliffs against a tempestuous tide. The traits of character here indicated were well represented in the square cast of countenance and large physical development of the new colonial magistrates. So far as a demeanour of natural authority was concerned, the mother country need not have been ashamed to see these foremost men of an actual democracy adopted into the House of Peers, or make the Privy Council of the Sovereign.

Next in order to the magistrates came the young and eminently distinguished divine, from whose lips the religious discourse of the anniversary was expected. His was the profession at that era in which intellectual ability displayed itself far more than in political life; for—leaving a higher motive out of the question—it offered inducements powerful enough in the almost worshipping respect of the community, to win the most aspiring ambition into its service. Even political power—as in the case of Increase Mather—was within the grasp of a successful priest.

It was the observation of those who beheld him now, that never, since Mr. Dimmesdale first set his foot on the New England shore, had he exhibited such energy as was seen in the gait and air with which he kept his pace in the proces-There was no feebleness of step as at other times: his frame was not bent, nor did his hand rest ominously upon his heart. Yet, if the clergyman were rightly viewed, his strength seemed not of the body. It might be spiritual and imparted to him by angelical ministrations. It might be the exhilaration of that potent cordial which is distilled only on the furnace-glow of earnest and long-continued thought. Or perchance his sensitive temperament was invigorated by the loud and piercing music that swelled heavenward, and uplifted him on its ascending wave. Nevertheless, abstracted was his look, it might be questioned whether Mr. Dimmesdale ever heard the music. There was his body, moving onward, and with an unaccustomed force. But where was his mind? Far and deep in its own region, busying itself, with preternatural activity, to marshal a procession of stately thoughts that were soon to issue thence; and so he saw nothing, heard nothing, knew nothing of what was around him; but the spiritual element took up the feeble frame and carried it along, unconscious of the burden, and converting it to spirit like itself. Men of uncommon intellect, who have grown morbid, possess this occasional power of mighty effort, into which they throw the life of many days and then are lifeless for as many more.

Hester Prynne, gazing steadfastly at the clergyman, felt a dreary influence come over her, but wherefore or whence she knew not, unless that he seemed so remote from her own sphere, and utterly beyond her reach. One glance of recognition she had imagined must needs pass between them. She thought of the dim forest, with its little dell of solitude, and love, and anguish, and the mossy tree-trunk, where, sitting hand-in-hand, they had mingled their sad and passionate talk with the melancholy murmur of the brook. How deeply had they known each other then! And was this the man? She hardly knew him now! He, moving proudly past, enveloped as it were, in the rich music, with the procession of majestic and venerable fathers; he, so unattainable in his worldly position, and still more so in that far vista of his unsympathizing thoughts, through which she now beheld him? Her spirit sank with the idea that all must have been a delusion, and that, vividly as she had dreamed it, there could be no real bond betwixt the clergyman and herself. And thus much of woman was there in Hester, that she could scarcely forgive him-least of all now, when the heavy footstep of their approaching Fate might be heard, nearer, nearer, nearer!-for being able so completely to withdraw himself from their mutual world-while she groped darkly, and stretched forth her cold hands, and found him not.

Pearl either saw and responded to her mother's feelings, or herself felt the remoteness and intangibility that had fallen around the minister. While the procession passed, the child was uneasy, fluttering up and down, like a bird on the point of taking flight. When the whole had gone by, she looked up into Hester's face—

"Mother," said she, "was that the same minister that kissed

me by the brook?"

"Hold thy peace, dear little Pearl!" whispered her mother. "We must not always talk in the market-place of what happens to us in the forest."

"I could not be sure that it was he—so strange he looked," continued the child. "Else I would have run to him, and

bid him kiss me now, before all the people, even as he did yonder among the dark old trees. What would the minister have said, mother? Would he have clapped his hand over his heart, and scowled on me, and bid me begone?"

"What should he say, Pearl," answered Hester, "save that it was no time to kiss, and that kisses are not to be given in the market-place? Well for thee, foolish child, that thou

didst not speak to him!"

Another shade of the same sentiment, in reference to Mr. Dimmesdale, was expressed by a person whose eccentricities -or insanity, as we should term it-led her to do what few of the townspeople would have ventured on-to begin a conversation with the wearer of the scarlet letter in public. It was Mistress Hibbins, who, arraved in great magnificence, with a triple ruff, a broidered stomacher, a gown of rich velvet, and a gold-headed cane, had come forth to see the procession. As this ancient lady had the renown (which subsequently cost her no less a price than her life) of being a principal actor in all the works of necromancy that were continually going forward, the crowd gave way before her, and seemed to fear the touch of her garment, as if it carried the plague among its gorgeous folds. Seen in conjunction with Hester Prynne-kindly as so many now felt towards the latter-the dread inspired by Mistress Hibbins had doubled, and caused a general movement from that part of the market-place in which the two women stood.

"Now, what mortal imagination could conceive it?" whispered the old lady confidentially to Hester. "Yonder divine man! That saint on earth, as the people uphold him to be, and as—I must needs say—he really looks! Who, now, that saw him pass in the procession, would think how little while it is since he went forth out of his study—chewing a Hebrew text of Scripture in his mouth, I warrant—to take an airing in the forest! Aha! we know what that means, Hester Prynne! But truly, forsooth, I find it hard to believe him the same man. Many a church member saw I walking behind the music, that has danced in the same measure with me, when Somebody was fiddler, and, it might be, an Indian powwow or a Lapland wizard changing hands with us! That is but a trifle, when a woman knows the world. But

this minister. Couldst thou surely tell, Hester, whether he was the same man that encountered thee on the forest

path?"

"Madam, I know not of what you speak," answered Hester Prynne, feeling Mistress Hibbins to be of infirm mind; yet strangely startled and awe-stricken by the confidence with which she affirmed a personal connexion between so many persons (herself among them) and the Evil One. "It is not for me to talk lightly of a learned pious minister of the Word, like the Reverend Mr. Dimmesdale."

"Fie, woman—fie!" cried the old lady, shaking her finger at Hester. "Dost thou think I have been to the forest so many times, and have yet no skill to judge who else has been there? Yea, though no leaf of the wild garlands which they wore while they danced be left in their hair! I know thee, Hester, for I behold the token. We may all see it in the sunshine! and it glows like a red flame in the dark. Thou wearest it openly, so there need be no question about that. But this minister! Let me tell thee in thine ear! When the Black Man sees one of his own servants, signed and sealed, so shy of owning to the bond as is the Reverend Mr. Dimmesdale, he hath a way of ordering matters so that the mark shall be disclosed, in open daylight, to the eyes of all the world! What is that the minister seeks to hide, with his hand always over his heart? Ha, Hester Prynne?"

"What is it, good Mistress Hibbins?" eagerly asked little

Pearl. "Hast thou seen it?"

"No matter, darling!" responded Mistress Hibbins, making Pearl a profound reverence. "Thou thyself wilt see it, one time or another. They say, child, thou art of the lineage of the Prince of Air! Wilt thou ride with me some fine night to see thy father? Then thou shalt know wherefore the minister keeps his hand over his heart!"

Laughing so shrilly that all the market-place could hear

her, the weird old gentlewoman took her departure.

By this time the preliminary prayer had been offered in the meeting-house, and the accents of the Reverend Mr. Dimmesdale were heard commencing his discourse. An irresistible feeling kept Hester near the spot. As the sacred edifice was too much thronged to admit another auditor, she took up her position close beside the scaffold of the pillory. It was in sufficient proximity to bring the whole sermon to her ears, in the shape of an indistinct but varied murmur

and flow of the minister's very peculiar voice.

This vocal organ was in itself a rich endowment, insomuch that a listener, comprehending nothing of the language in which the preacher spoke, might still have been swayed to and fro by the mere tone and cadence. Like all other music, it breathed passion and pathos, and emotions high or tender, in a tongue native to the human heart, wherever educated. Muffled as the sound was by its passage through the church walls. Hester Prynne listened with such intenseness, and sympathized so intimately, that the sermon had throughout a meaning for her, entirely apart from its indistinguishable words. These, perhaps, if more distinctly heard, might have been only a grosser medium, and have clogged the spiritual sense. Now she caught the low undertone, as of the wind sinking down to repose itself; then ascended with it, as it rose through progressive gradations of sweetness and power, until its volume seemed to envelop her with an atmosphere of awe and solemn grandeur. And vet, majestic as the voice sometimes became, there was for ever in it an essential character of plaintiveness. A loud or low expression of anguish—the whisper, or the shriek, as it might be conceived, of suffering humanity, that touched a sensibility in every bosom! At times this deep strain of pathos was all that could be heard, and scarcely heard sighing amid a desolate silence. But even when the minister's voice grew high and commanding—when it gushed irrepressibly upward —when it assumed its utmost breadth and power, so overfilling the church as to burst its way through the solid walls, and diffuse itself in the open air-still, if the auditor listened intently, and for the purpose, he could detect the same cry of pain. What was it? The complaint of a human heart, sorrow-laden, perchance guilty, telling its secret, whether of guilt or sorrow, to the great heart of mankind; beseeching its sympathy or forgiveness,—at every moment,—in each accent.—and never in vain! It was this profound and continual undertone that gave the clergyman his most appropriate power.

During all this time, Hester stood, statue-like, at the foot of the scaffold. If the minister's voice had not kept her there, there would, nevertheless, have been an inevitable magnetism in that spot, whence she dated the first hour of her life of ignominy. There was a sense within her—too ill-defined to be made a thought, but weighing heavily on her mind—that her whole orb of life, both before and after, was connected with this spot, as with the one point that gave it unity.

Little Pearl, meanwhile, had quitted her mother's side, and was playing at her own will about the market-place. She made the sombre crowd cheerful by her erratic and glistening ray, even as a bird of bright plumage illuminates a whole tree of dusky foliage by darting to and fro, half seen and half concealed amid the twilight of the clustering leaves. She had an undulating, but oftentimes a sharp and irregular movement. It indicated the restless vivacity of her spirit, which to-day was doubly indefatigable in its tip-toe dance, because it was played upon and vibrated with her mother's disquietude. Whenever Pearl saw anything to excite her ever active and wandering curiosity, she flew thitherward, and, as we might say, seized upon that man or thing as her own property, so far as she desired it, but without yielding the minutest degree of control over her motions in requital. The Puritans looked on, and, if they smiled, were none the less inclined to pronounce the child a demon offspring, from the indescribable charm of beauty and eccentricity that shone through her little figure, and sparkled with its activity. She ran and looked the wild Indian in the face, and he grew conscious of a nature wilder than his own. Thence, with native audacity, but still with a reserve as characteristic, she flew into the midst of a group of mariners, the swarthy-cheeked wild men of the ocean, as the Indians were of the land; and they gazed wonderingly and admiringly at Pearl, as if a flake of the sea-foam had taken the shape of a little maid, and were gifted with a soul of the sea-fire, that flashes beneath the prow in the night-time.

One of these seafaring men—the shipmaster, indeed, who had spoken to Hester Prynne—was so smitten with Pearl's aspect, that he attempted to lay hands upon her, with pur-

pose to snatch a kiss. Finding it as impossible to touch her as to catch a humming-bird in the air, he took from his hat the gold chain that was twisted about it, and threw it to the child. Pearl immediately twined it around her neck and waist with such happy skill, that, once seen there, it became a part of her, and it was difficult to imagine her without it.

"Thy mother is yonder woman with the scarlet letter," said the seaman. "Wilt thou carry her a message from me? "If the message pleases me, I will," answered Pearl.

"Then tell her," rejoined he, "that I spake again with the black-a-visaged, hump-shouldered old doctor, and he engages to bring his friend, the gentleman she wots of, aboard with him. So let thy mother take no thought, save for herself and thee. Wilt thou tell her this, thou witch-baby?"

"Mistress Hibbins says my father is the Prince of the Air!" cried Pearl, with a naughty smile. "If thou callest me that ill-name, I shall tell him of thee, and he will chase thy ship with a tempest!"

Pursuing a zigzag course across the market-place, the child returned to her mother, and communicated what the mariner had said. Hester's strong, calm steadfastly-enduring spirit almost sank, at last, on beholding this dark and grim countenance of an inevitable doom, which—at the moment when a passage seemed to open for the minister and herself out of their labyrinth of misery—showed itself, with an unrelenting smile, right in the midst of their path.

With her mind harassed by the terrible perplexity in which the shipmaster's intelligence involved her, she was also subjected to another trial. There were many people present from the country round about, who had often heard of the scarlet letter, and to whom it had been made terrific by a hundred false or exaggerated rumours, but who had never beheld it with their own bodily eyes. These, after exhausting other modes of amusement, now thronged about Hester Prynne with rude and boorish intrusiveness. Unscrupulous as it was, however, it could not bring them nearer than a circuit of several yards. At that distance they accordingly stood, fixed there by the centrifugal force of the repugnance which the mystic symbol inspired. The whole gang of sailors, likewise, observing the press of spectators, and learn-

ing the purport of the scarlet letter, came and thrust their sunburnt and desperado-looking faces into the ring. Even the Indians were affected by a sort of cold shadow of the white man's curiosity, and, gliding through the crowd, fastened their snake-like black eyes on Hester's bosom, conceiving, perhaps, that the wearer of this brilliantly-embroidered badge must needs be a personage of high dignity among her people. Lastly, the inhabitants of the town (their own interest in this worn-out subject languidly reviving itself, by sympathy with what they saw others feel) lounged idly to the same quarter, and tormented Hester Prynne, perhaps more than all the rest, with their cool, well-acquainted gaze at her familiar shame. Hester saw and recognized the selfsame faces of that group of matrons, who had awaited her forthcoming from the prison-door seven years ago; all save one, the youngest and only compassionate among them, whose burial-robe she had since made. At the final hour, when she was so soon to fling aside the burning letter, it had strangely become the centre of more remark and excitement, and was thus made to sear her breast more painfully, than at any time since the first day she put it on.

While Hester stood in that magic circle of ignominy, where the cunning cruelty of her sentence seemed to have fixed her for ever, the admirable preacher was looking down from the sacred pulpit upon an audience whose very inmost spirits had yielded to his control. The sainted minister in the church! The woman of the scarlet letter in the market-place! What imagination would have been irreverent enough to surmise

that the same scorching stigma was on them both!

## CHAPTER XXIII

# THE REVELATION OF THE SCARLET LETTER

HE eloquent voice, on which the souls of the listening audience had been borne aloft as on the swelling waves of the sea, at length came to a pause. There was a momentary silence, profound as what should follow the utterance of oracles. Then ensued a murmur and half-hushed tumult, as if the auditors, released from the high spell that had transported them into the region of another's mind, were returning into themselves, with all their awe and wonder still heavy on them. In a moment more the crowd began to gush forth from the doors of the church. Now that there was an end, they needed more breath, more fit to support the gross and earthly life into which they relapsed, than that atmosphere which the preacher had converted into words of flame, and had burdened with the rich fragrance of his thought.

In the open air their rapture broke into speech. The street and the market-place absolutely babbled, from side to side, with applauses of the minister. His hearers could not rest until they had told one another of what each knew better than he could tell or hear. According to their united testimony, never had man spoken in so wise, so high, and so holy a spirit, as he that spake this day; nor had inspiration ever breathed through mortal lips more evidently than it did through his. Its influence could be seen, as it were, descending upon him, and possessing him, and continually lifting him out of the written discourse that lay before him, and filling him with ideas that must have been as marvellous to himself as to his audience. His subject, it appeared, had been the relation between the Deity and the communities of mankind, with a special reference to the New England which they were here planting in the wilderness. And, as he drew towards the close, a spirit as of prophecy had come upon

218

him, constraining him to its purpose as mightily as the old prophets of Israel were constrained, only with this difference, that, whereas the Iewish seers had denounced judgments and ruin on their country, it was his mission to foretell a high and glorious destiny for the newly gathered people of the Lord. But, throughout it all, and through the whole discourse, there had been a certain deep, sad undertone of pathos, which could not be interpreted otherwise than as the natural regret of one soon to pass away. Yes; their minister whom they so loved—and who so loved them all. that he could not depart heavenward without a sigh-had the foreboding of untimely death upon him, and would soon leave them in their tears. This idea of his transitory stay on earth gave the last emphasis to the effect which the preacher had produced; it was as if an angel, in his passage to the skies, had shaken his bright wings over the people for an instant—at once a shadow and a splendour—and had shed down a shower of golden truths upon them.

Thus, there had come to the Reverend Mr. Dimmesdale—as to most men, in their various spheres, though seldom recognised until they see it far behind them—an epoch of life more brilliant and full of triumph than any previous one, or than any which could hereafter be. He stood, at this moment, on the very proudest eminence of superiority, to which the gifts or intellect, rich lore, prevailing eloquence, and a reputation of whitest sanctity, could exalt a clergyman in New England's earliest days, when the professional character was of itself a lofty pedestal. Such was the position which the minister occupied, as he bowed his head forward on the cushions of the pulpit at the close of his Election Sermon. Meanwhile Hester Prynne was standing beside the scaffold of the pillory, with the scarlet letter still burning on her breast!

Now was heard again the clamour of the music, and the measured tramp of the military escort issuing from the church door. The procession was to be marshalled thence to the town hall, where a solemn banquet would complete the ceremonies of the day.

Once more, therefore, the train of venerable and majestic fathers were seen moving through a broad pathway of the

people, who drew back reverently, on either side, as the Governor and magistrates, the old and wise men, the holy ministers, and all that were eminent and renowned, advanced into the midst of them. When they were fairly in the market-place, their presence was greeted by a shout. Thisthough doubtless it might acquire additional force and volume from the child-like loyalty which the age awarded to its rulers—was felt to be an irrepressible outburst of enthusiasm kindled in the auditors by that high strain of eloquence which was yet reverberating in their ears. Each felt the impulse in himself, and, in the same breath, caught it from his neighbour. Within the church, it had hardly been kept down: beneath the sky it pealed upward to the zenith. There were human beings enough, and enough of highly wrought and symphonious feeling to produce that more impressive sound than the organ tones of the blast, or the thunder, or the roar of the sea; even that mighty swell of many voices, blended into one great voice by the universal impulse which makes likewise one vast heart out of the many. Never, from the soil of New England had gone up such a shout! Never. on New England soil had stood the man so honoured by his mortal brethren as the preacher!

How fared it with him, then? Were there not the brilliant particles of a halo in the air about his head? So etherealised by spirit as he was, and so apotheosised by worshipping admirers, did his footsteps, in the procession, really tread upon

the dust of earth?

As the ranks of military men and civil fathers moved onward, all eyes were turned towards the point where the minister was seen to approach among them. The shout died into a murmur, as one portion of the crowd after another obtained a glimpse of him. How feeble and pale he looked, amid all his triumph! The energy—or say, rather, the inspiration which had held him up, until he should have delivered the sacred message that had brought its own strength along with it from heaven—was withdrawn, now that it had so faithfully performed its office. The glow, which they had just before beheld burning on his cheek, was extinguished, like a flame that sinks down hopelessly among the late decaying embers. It seemed hardly the face of a

man alive, with such a death-like hue: it was hardly a man with life in him, that tottered on his path so nervously, yet tottered, and did not fall!

One of his clerical brethren—it was the venerable John Wilson-observing the state in which Mr. Dimmesdale was left by the retiring wave of intellect and sensibility, stepped forward hastily to offer his support. The minister tremulously, but decidedly, repelled the old man's arm. He still walked onward, if that movement could be so described, which rather resembled the wavering effort of an infant. with its mother's arms in view, outstretched to tempt him forward. And now, almost imperceptible as were the latter steps of his progress, he had come opposite the well-remembered and weather-darkened scaffold, where, long since, with all that dreary lapse of time between, Hester Prynne had encountered the world's ignominious stare. There stood Hester, holding little Pearl by the hand! And there was the scarlet letter on her breast! The minister here made a pause: although the music still played the stately and rejoicing march to which the procession moved. It summoned him onward—onward to the festival!—but here he made a pause.

Bellingham, for the last few moments, had kept an anxious eye upon him. He now left his own place in the procession, and advanced to give assistance; judging, from Mr. Dimmesdale's aspect that he must otherwise inevitably fall. But there was something in the latter's expression that warned back the magistrate, although a man not readily obeying the vague intimations that pass from one spirit to another. The crowd, meanwhile, looked on with awe and wonder. This earthly faintness, was, in their view, only another phase of the minister's celestial strength; nor would it have seemed a miracle too high to be wrought for one so holy, had he ascended before their eyes, waxing dimmer and brighter, and fading at last into the light of heaven!

He turned towards the scaffold, and stretched forth his arms.

"Hester," said he, "come hither! Come, my little Pearl!"

It was a ghastly look with which he regarded them; but
there was something at once tender and strangely triumphant

in it. The child, with the birdlike motion, which was one of her characteristics, flew to him, and clasped her arms about his knees. Hester Prynne—slowly, as if impelled by inevitable fate, and against her strongest will—likewise drew near, but paused before she reached him. At this instant old Roger Chillingworth thrust himself through the crowd—or, perhaps, so dark, disturbed, and evil was his look, he rose up out of some nether region—to snatch back his victim from what he sought to do! Be that as it might, the old man rushed forward, and caught the minister by the arm.

"Madman, hold! what is your purpose?" whispered he. "Wave back that woman! Cast off this child! All shall be well! Do not blacken your fame, and perish in dishonour! I can yet save you! Would you bring infamy on your sacred profession?"

"Ha, tempter! Methinks thou art too late!" answered the minister, encountering his eye, fearfully, but firmly. "Thy power is not what it was! With God's help, I shall escape thee now!"

He again extended his hand to the woman of the scarlet letter.

"Hester Prynne," cried he, with a piercing earnestness, "in the name of Him, so terrible and so merciful, who gives me grace, at this last moment, to do what—for my own heavy sin and miserable agony—I withheld myself from doing seven years ago, come hither now, and twine thy strength about me! Thy strength, Hester; but let it be guided by the will which God hath granted me! This wretched and wronged old man is opposing it with all his might!—with all his own might, and the fiend's! Come, Hester—Come! Support me up yonder scaffold."

The crowd was in a tumult. The men of rank and dignity, who stood more immediately around the clergyman, were so taken by surprise, and so perplexed as to the purport of what they saw—unable to receive the explanation which most readily presented itself, or to imagine any other—that they remained silent and inactive spectators of the judgment which Providence seemed about to work. They beheld the minister, leaning on Hester's shoulder, and supported by her

arm around him, approach the scaffold, and ascend its steps; while still the little hand of the sin-born child was clasped in his. Old Roger Chillingworth followed, as one intimately connected with the drama of guilt and sorrow in which they had all been actors, and well entitled, therefore, to be present at its closing scene.

"Hadst thou sought the whole earth over," said he, looking darkly at the clergyman, "there was no one place so secret—no high place nor lowly place, where thou couldst have escaped me—save on this very scaffold!"

"Thanks be to Him who hath led me hither!" answered the minister.

Yet he trembled, and turned to Hester, with an expression of doubt and anxiety in his eyes, not the less evidently betrayed, that there was a feeble smile upon his lips.

"Is not this better," murmured he, "than that we dreamed

of in the forest?"

"I know not! I know not!" she hurriedly replied. "Better? Yea; so we may both die, and little Pearl die with us!"

"For thee and Pearl, be it as God shall order," said the minister; "and God is merciful! Let me now do the will which He hath made plain before my sight. For, Hester, I am a dying man. So let me make haste to take my shame upon me!"

Partly supported by Hester Prynne, and holding one hand of little Pearl's the Reverend Mr. Dimmesdale turned to the dignified and venerable rulers; to the holy ministers, who were his brethren; to the people, whose great heart was thoroughly appalled, yet overflowing with tearful sympathy, as knowing that some deep life-matter—which, if full of sin, was full of anguish and repentance likewise—was now to be laid open to them. The sun, but little past its meridian, shone down upon the clergyman, and gave a distinctness to his figure, as he stood out from all the earth, to put in his plea of guilty at the bar of Eternal Justice.

"People of New England!" cried he, with a voice that rose over them, high, solemn, and majestic—yet had always a tremor through it, and sometimes a shriek, struggling up out of a fathomless depth of remorse and woe—"ye, that have loved me!—ye, that have deemed me holy!—behold me here,

the one sinner of the world! At last!—at last!—I stand upon the spot where, seven years since, I should have stood here, with this woman, whose arm, more than the little strength wherewith I have crept hitherward, sustains me at this dreadful moment, from grovelling down upon my face! Lo, the scarlet letter which Hester wears! Ye have all shuddered at it! Wherever her walk hath been—wherever, so miserably burdened, she may have hoped to find repose—it hath cast a lurid gleam of awe and horrible repugnance round about her. But there stood one in the midst of you, at whose brand of sin and infamy ye have not shuddered!"

It seemed, at this point, as if the minister must leave the remainder of his secret undisclosed. But he fought back the bodily weakness—and, still more, the faintness of heart—that was striving for the mastery with him. He threw off all assistance, and stepped passionately forward a pace before the woman and the child.

"It was on him!" he continued, with a kind of fierceness; so determined was he to speak out the whole. "God's eye beheld it! The angels were for ever pointing at it! The Devil knew it well, and fretted it continually with the touch of his burning finger! But he hid it cunningly from men, and walked among you with the mien of a spirit, mournful, because so pure in a sinful world!—and sad, because he missed his heavenly kindred! Now, at the death-hour, he stands up before you! He bids you look again at Hester's scarlet letter! He tells you, that, with all its mysterious horror, it is but the shadow of what he bears on his own breast, and that even this, his own red stigma, is no more than the type of what has seared his inmost heart! Stand any here that question God's judgment on a sinner! Behold! Behold, a dreadful witness of it!"

With a convulsive motion, he tore away the ministerial band from before his breast. It was revealed! But it were irreverent to describe that revelation. For an instant, the gaze of the horror-stricken multitude was concentrated on the ghastly miracle; while the minister stood, with a flush of triumph in his face, as one who, in the crisis of acutest pain, had won a victory. Then, down he sank upon the

scaffold! Hester partly raised him, and supported his head against her bosom. Old Roger Chillingworth knelt down beside him, with a blank, dull countenance, out of which the life seemed to have departed.

"Thou hast escaped me!" he repeated more than once.

"Thou has escaped me!"

"May God forgive thee!" said the minister. "Thou, too, hast deeply sinned!"

He withdrew his dying eyes from the old man, and fixed

them on the woman and the child.

"My little Pearl," said he, feebly—and there was a sweet and gentle smile over his face, as of a spirit sinking into deep repose; nay, now that the burden was removed, it seemed almost as if he would be sportive with the child—"dear little Pearl, wilt thou kiss me now? Thou wouldst not, yonder, in the forest! But now thou wilt?"

Pearl kissed his lips. A spell was broken. The great scene of grief, in which the wild infant bore a part had developed all her sympathies; and as her tears fell upon her father's cheek, they were the pledge that she would grow up amid human joy and sorrow, nor forever do battle with the world, but be a woman in it. Towards her mother, too, Pearl's errand as a messenger of anguish was fulfilled.

"Hester," said the clergyman, "farewell!"

"Shall we not meet again?" whispered she, bending her face down close to his. "Shall we not spend our immortal life together? Surely, surely, we have ransomed one another, with all this woe! Thou lookest far into eternity, with those

bright dying eyes! Then tell me what thou seest!"

"Hush, Hester—hush!" said he, with a tremulous solemnity. "The law we broke!—the sin here so awfully revealed!—let these alone be in thy thoughts! I fear! I fear! It may be, that, when we forgot our God—when we violated our reverence each for the other's soul—it was thenceforth vain to hope that we could meet hereafter, in an everlasting and pure reunion. God knows; and He is merciful! He hath proved his mercy, most of all, in my afflictions. By giving me this burning torture to bear upon my breast! By sending yonder dark and terrible old man, to keep the torture always at red-heat! By bringing me hither, to die this death of

triumphant ignominy before the people! Had either of these agonies been wanting, I had been lost for ever! Praised be His name! His will be done! Farewell!"

That final word came forth with the minister's expiring breath. The multitude, silent till then, broke out in a strange, deep voice of awe and wonder, which could not as yet find utterance, save in this murmur that rolled so heavily after the departed spirit.

## CHAPTER XXIV

## Conclusion

AFTER many days, when time sufficed for the people to arrange their thoughts in reference to the foregoing scene, there was more than one account of what had been witnessed on the scaffold.

Most of the spectators testified to having seen, on the breast of the unhappy minister, a SCARLET LETTER—the very semblance of that worn by Hester Prynne-imprinted in the flesh. As regarded its origin there were various explanations, all of which must necessarily have been conjectural. Some affirmed that the Reverend Mr. Dimmesdale, on the very day when Hester Prynne first wore her ignominious badge, had begun a course of penance—which he afterwards, in so many futile methods, followed out-by inflicting a hideous torture on himself. Others contended that the stigma had not been produced until a long time subsequent, when old Roger Chillingworth, being a potent necromancer, had caused it to appear, through the agency of magic and poisonous drugs. Others, again—and those best able to appreciate the minister's peculiar sensibility, and the wonderful operation of his spirit upon the body—whispered their belief, that the awful symbol was the effect of the ever-active tooth of remorse, gnawing from the inmost heart outwardly, and at last manifesting Heaven's dreadful judgment by the visible presence of the letter. The reader may choose among these We have thrown all the light we could acquire upon the portent, and would gladly, now that it has done its office, erase its deep print out of our own brain, where long meditation has fixed it in very undesirable distinctness.

It is singular, nevertheless, that certain persons, who were spectators of the whole scene, and professed never once to have removed their eyes from the Reverend Mr. Dimmesdale, denied that there was any mark whatever on his breast, more

than on a new-born infant's. Neither, by their report, had his dying words acknowledged, nor even remotely implied, any -the slightest-connexion on his part, with the guilt for which Hester Prynne had so long worn the scarlet letter. According to these highly-respectable witnesses, the minister. conscious that he was dving—conscious, also, that the reverence of the multitude placed him already among saints and angels-had desired, by yielding up his breath in the arms of that fallen woman, to express to the world how utterly nugatory is the choicest of man's own righteousness. After exhausting life in his efforts for mankind's spiritual good, he had made the manner of his death a parable, in order to impress on his admirers the mighty and mournful lesson, that, in the view of Infinite Purity, we are sinners all alike. It was to teach them, that the holiest amongst us has but attained so far above his fellows as to discern more clearly the Mercy which looks down, and repudiate more utterly the phantom of human merit, which would look aspiringly upward. Without disputing a truth so momentous, we must be allowed to consider this version of Mr. Dimmesdale's story as only an instance of that stubborn fidelity with which a man's friends—and especially a clergyman's—will sometimes uphold his character, when proofs, clear as the mid-day sunshine on the scarlet letter, establish him a false and sinstained creature of the dust.

The authority which we have chiefly followed—a manuscript of old date, drawn up from the verbal testimony of individuals, some of whom had known Hester Prynne, while others had heard the tale from contemporary witnesses—fully confirms the view taken in the foregoing pages. Among many morals which press upon us from the poor minister's miserable experience, we put only this into a sentence:—"Be true! Be true! Be true! Show freely to the world, if not your worst, yet some trait whereby the worst may be inferred!"

Nothing was more remarkable than the change which took place, almost immediately after Mr. Dimmesdale's death, in the appearance and demeanour of the old man known as Roger Chillingworth. All his strength and energy—all his vital and intellectual force—seemed at once to

desert him, insomuch that he positively withered up, shrivelled away and almost vanished from mortal sight, like an uprooted weed that lies wilting in the sun. This unhappy man had made the very principle of his life to consist in the pursuit and systematic exercise of revenge; and when, by its completest triumph and consummation that evil principle was left with no further material to support it when, in short, there was no more Devil's work on earth for him to do, it only remained for the unhumanised mortal to betake himself whither his master would find him tasks enough, and pay him his wages duly. But, to all these shadowy beings, so long our near acquaintances—as well Roger Chillingworth as his companions—we would fain be merciful. It is a curious subject of observation and inquiry, whether hatred and love be not the same thing at bottom. Each, in its utmost development, supposes a high degree of intimacy and heart-knowledge; each renders one individual dependent for the food of his affections and spiritual life upon another; each leaves the passionate lover, or the no less passionate hater, forlorn and desolate by the withdrawal of his subject. Philosophically considered, therefore, the two passions seem essentially the same, except that one happens to be seen in a celestial radiance, and the other in a dusky and lurid glow. In the spiritual world, the old physician and the minister-mutual victims as they have been-may, unawares, have found their earthly stock of hatred and antipathy transmuted into golden love.

Leaving this discussion apart, we have a matter of business to communicate to the reader. At old Roger Chillingworth's decease, (which took place within the year), and by his last will and testament, of which Governor Bellingham and the Reverend Mr. Wilson were executors, he bequeathed a very considerable amount of property, both here and in England to little Pearl, the daughter of Hester Prynne.

So Pearl—the elf child—the demon offspring, as some people up to that epoch persisted in considering her—became the richest heiress of her day in the New World. Not improbably this circumstance wrought a very material change in the public estimation; and had the mother and

child remained here, little Pearl at a marriageable period of life might have mingled her wild blood with the lineage of the devoutest Puritan among them all. But, in no long time after the physician's death, the wearer of the scarlet letter disappeared, and Pearl along with her. For many years, though a vague report would now and then find its way across the sea-like a shapeless piece of driftwood tossed ashore with the initials of a name upon it-vet no tidings of them unquestionably authentic were received. The story of the scarlet letter grew into a legend. Its spell, however, was still potent, and kept the scaffold awful where the poor minister had died, and likewise the cottage by the sea-shore where Hester Prynne had dwelt. Near this latter spot, one afternoon some children were at play, when they beheld a tall woman in a gray robe approach the cottagedoor. In all those years it had never once been opened: but either she unlocked it or the decaying wood and iron yielded to her hand, or she glided shadow-like through these impediments-and, at all events, went in.

On the threshold she paused—turned partly round—for perchance the idea of entering alone and all so changed, the home of so intense a former life, was more dreary and desolate than even she could bear. But her hesitation was only for an instant, though long enough to display a scarlet letter on her breast

And Hester Prynne had returned, and taken up her longforsaken shame! But where was little Pearl? If still alive she must now have been in the flush and bloom of early womanhood. None knew—nor ever learned with the fulness of perfect certainty—whether the elf-child had gone thus untimely to a maiden grave; or whether her wild, rich nature had been softened and subdued and made capable of a woman's gentle happiness. But through the remainder of Hester's life there were indications that the recluse of the scarlet letter was the object of love and interest with some inhabitant of another land. Letters came, with armorial seals upon them, though of bearings unknown to English heraldry. In the cottage there were articles of comfort and luxury such as Hester never cared to use, but which only wealth could have purchased and affection have imagined for her. There were trifles too, little ornaments, beautiful tokens of a continual remembrance, that must have been wrought by delicate fingers at the impulse of a fond heart. And once Hester was seen embroidering a babygarment with such a lavish richness of golden fancy as would have raised a public tunult had any infant thus apparelled, been shown to our sober-hued community.

In fine, the gossips of that day believed—and Mr. Surveyor Pue, who made investigations a century later, believed—and one of his recent successors in office, moreover, faithfully believes—that Pearl was not only alive, but married, and happy, and mindful of her mother; and that she would most joyfully have entertained that sad and lonely mother at her fireside.

But there was a more real life for Hester Prynne, here, in New England, than in that unknown region where Pearl had found a home. Here had been her sin; here, her sorrow; and here was yet to be her penitence. She had returned, therefore, and resumed—of her own free will, for not the sternest magistrate of that iron period would have imposed it—resumed the symbol of which we have related so dark a tale. Never afterwards did it quit her bosom. But, in the lapse of the toilsome, thoughtful, and self-devoted years that made up Hester's life, the scarlet letter ceased to be a stigma which attracted the world's scorn and bitterness, and became a type of something to be sorrowed over, and looked upon with awe, yet with reverence too. And, as Hester Prynne had no selfish ends, nor lived in any measure for her own profit and enjoyment, people brought all their sorrows and perplexities, and besought her counsel. as one who had herself gone through a mighty trouble. Women, more especially—in the continually recurring trials of wounded, wasted, wronged, misplaced, or erring and sinful passion-or with the dreary burden of a heart unyielded, because unvalued and unsought-came to Hester's cottage, demanding why they were so wretched, and what the remedy! Hester comforted and counselled them, as best she might. She assured them, too, of her firm belief that, at some brighter period, when the world should have grown ripe for it, in Heaven's own time, a new truth would be I---0

revealed, in order to establish the whole relation between man and woman on a surer ground of mutual happiness. Earlier in life, Hester had vainly imagined that she herself might be the destined prophetess, but had long since recognised the impossibility that any mission of divine and mysterious truth should be confided to a woman stained with sin, bowed down with shame, or even burdened with a lifelong sorrow. The angel and apostle of the coming revelation must be a woman, indeed, but lofty, pure, and beautiful, and wise; moreover, not through dusky grief, but the ethereal medium of joy; and showing how sacred love should make us happy, by the truest test of a life successful to such an end.

So said Hester Prynne, and glanced her sad eyes downward at the scarlet letter. And, after many, many years, a new grave was delved, near an old and sunken one, in that burial-ground beside which King's Chapel has since been built. It was near that old and sunken grave, yet with a space between, as if the dust of the two sleepers had no right to mingle. Yet one tomb-stone served for both. All around, there were monuments carved with armorial bearings; and on this simple slab of slate—as the curious investigator may still discern, and perplex himself with the purport—there appeared the semblance of an engraved escutcheon. It bore a device, a herald's wording of which may serve for a motto and brief description of our now concluded legend; so sombre is it, and relieved only by one ever-glowing point of light gloomier than the shadow:—

<sup>&</sup>quot;On a field, sable, the letter A, gules."

## RAPPACCINI'S DAUGHTER

[FROM THE WRITINGS OF AUBEPINE]

TE do not remember to have seen any translated specimens of the productions of M. de l'Aubépine —a fact the less to be wondered at, as his very name is unknown to many of his own countrymen as well as to the student of foreign literature. As a writer, he seems to occupy an unfortunate position between the Transcendentalists (who, under one name or another, have their share in all the current literature of the world) and the great body of pen-and-ink men who address the intellect and sympathies of the multitude. If not too refined, at all events too remote, too shadowy, and unsubstantial in his modes of development to suit the taste of the latter class, and yet too popular to satisfy the spiritual or metaphysical requisitions of the former, he must necessarily find himself without an audience, except here and there an individual or possibly an isolated clique. His writings, to do them justice, are not altogether destitute of fancy and originality; they might have won him greater reputation but for an inveterate love of allegory, which is apt to invest his plots and characters with the aspect of scenery and people in the clouds, and to steal away the human warmth out of his conceptions. His fictions are sometimes historical, sometimes of the present day, and sometimes, so far as can be discovered, have little or no reference either to time or space. In any case, he generally contents himself with a very slight embroidery of outward manners,—the faintest possible counterfeit of real life,-and endeavors to create an interest by some less obvious peculiarity of the subject. Occasionally a breath of Nature, a raindrop of pathos and tenderness, or a gleam of humor, will find its way into the midst of his fantastic imagery, and make us feel as if, after all, we were yet within the limits of our native earth. We will only add to this very cursory notice that M. de l'Aubépine's productions, if the reader chance to take them in precisely the proper point of view, may amuse a leisure hour as well as those of a brighter man; if otherwise, they can hardly fail to look excessively like nonsense.

Our author is voluminous: he continues to write and publish with as much praiseworthy and indefatigable prolixity as if his efforts were crowned with the brilliant success that so justly attends those of Eugene Sue. His first appearance was by a collection of stories in a long series of volumes entitled "Contes deux fois racontées." titles of some of his more recent works (we quote from memory) are as follows: "Le Voyage Céleste à Chemin de Fer." 3 tom., 1838: "Le nouveau Père Adam et la nouvelle Mère Eve," 2 tom., 1839; "Roderic; ou le Serpent à l'estomac," 2 tom., 1840; "Le Culte du Feu," a folio volume of ponderous research into the religion and ritual of the old Persian Ghebers, published in 1841; "La Soirée du Chateau en Espagne," I tom., 8vo, 1842; and "L'Artiste du Beau; ou le Papillon Mécanique," 5 tom., 4to, 1843. Our somewhat wearisome perusal of this startling catalogue of volumes has left behind it a certain personal affection and sympathy, though by no means admiration, for M. de l'Aubépine; and we would fain do the little in our power towards introducing him favorably to the American public. The ensuing tale is a translation of his "Beatrice; ou la Belle Empoisonneuse," recently published in "La Revue Anti-Aristocratique." This journal, edited by the Comte de Bearhaven, has for some years past led the defence of liberal principles and popular rights with a faithfulness and ability worthy of all praise.

A young man, named Giovanni Guasconti, came, very long ago, from the more southern region of Italy, to pursue his studies at the University of Padua. Giovanni, who had but a scanty supply of gold ducats in his pocket, took lodgings in a high and gloomy chamber of an old edifice which looked not unworthy to have been the palace of a Paduan noble, and which, in fact, exhibited over its entrance the

armorial bearings of a family long since extinct. The young stranger, who was not unstudied in the great poem of his country, recollected that one of the ancestors of this family, and perhaps an occupant of this very mansion, had been pictured by Dante as a partaker of the immortal agonies of his Inferno. These reminiscences and associations, together with the tendency to heartbreak natural to a young man for the first time out of his native sphere, caused Giovanni to sigh heavily as he looked around the desolate and ill-furnished apartment.

"Holy Virgin, signor!" cried old Dame Lisabetta, who, won by the youth's remarkable beauty of person, was kindly endeavoring to give the chamber a habitable air, "what a sigh was that to come out of a young man's heart! Do you find this old mansion gloomy? For the love of Heaven, then, put your head out of the window, and you will see as

bright sunshine as you have left in Naples."

Guasconti mechanically did as the old woman advised, but could not quite agree with her that the Paduan sunshine was as cheerful as that of southern Italy. Such as it was, however, it fell upon a garden beneath the window and expended its fostering influences on a variety of plants, which seemed to have been cultivated with exceeding care.

"Does this garden belong to the house?" asked Giovanni.

"Heaven forbid, signor, unless it were fruitful of better pot herbs than any that grow there now," answered old Lisabetta. "No; that garden is cultivated by the own hands of Signor Giacomo Rappaccini, the famous doctor, who, I warrant him, has been heard of as far as Naples. It is said that he distils these plants into medicines that are as potent as a charm. Oftentimes you may see the signor doctor at work, and perchance the signora, his daughter, too, gathering the strange flowers that grow in the garden."

The old woman had now done what she could for the aspect of the chamber; and, commending the young man to

the protection of the saints, took her departure.

Giovanni still found no better occupation than to look down into the garden beneath his window. From its appearance, he judged it to be one of those botanic gardens which were of earlier date in Padua than elsewhere in Italy

or in the world. Or, not improbably, it might once have been the pleasure-place of an opulent family: for there was the ruin of a marble fountain in the centre, sculptured with rare art, but so wofully shattered that it was impossible to trace the original design from the chaos of remaining fragments. The water, however, continued to gush and sparkle into the sunbeams as cheerfully as ever. A little gurgling sound ascended to the young man's window, and made him feel as if the fountain were an immortal spirit that sung its song unceasingly and without heeding the vicissitudes around it, while one century imbodied it in marble and another scattered the perishable garniture on the soil. All about the pool into which the water subsided grew various plants, that seemed to require a plentiful supply of moisture for the nourishment of gigantic leaves, and, in some instances, flowers gorgeously magnificent. There was one shrub in particular, set in a marble vase in the midst of the pool, that bore a profusion of purple blossoms, each of which had the lustre and richness of a gem; and the whole together made a show so resplendent that it seemed enough to illuminate the garden, even had there been no sunshine. Every portion of the soil was peopled with plants and herbs, which, if less beautiful, still bore tokens of assiduous care, as if all had their individual virtues, known to the scientific mind that fostered them. Some were placed in urns, rich with old carving, and others in common garden pots; some crept serpent-like along the ground or climbed on high, using whatever means of ascent was offered them. One plant had wreathed itself round a statue of Vertumnus. which was thus quite veiled and shrouded in a drapery of hanging foliage, so happily arranged that it might have served a sculptor for a study.

While Giovanni stood at the window he heard a rustling behind a screen of leaves, and became aware that a person was at work in the garden. His figure soon emerged into view, and showed itself to be that of no common laborer, but a tall, emaciated, sallow, and sickly-looking man, dressed in a scholar's garb of black. He was beyond the middle term of life, with gray hair, a thin, gray beard, and a face singularly marked with intellect and cultivation, but

which could never, even in his more youthful days, have expressed much warmth of heart.

Nothing could exceed the intentness with which this scientific gardener examined every shrub which grew in his path: it seemed as if he was looking into their inmost nature, making observations in regard to their creative essence, and discovering why one leaf grew in this shape and another in that, and wherefore such and such flowers differed among themselves in hue and perfume. Nevertheless, in spite of this deep intelligence on his part, there was no approach to intimacy between himself and these vegetable existences. On the contrary, he avoided their actual touch or the direct inhaling of their odors with a caution that impressed Giovanni most disagreeably; for the man's demeanor was that of one walking among malignant influences, such as savage beasts, or deadly snakes, or evil spirits, which, should he allow them one moment of license, would wreak upon him some terrible fatality. It was strangely frightful to the young man's imagination to see this air of insecurity in a person cultivating a garden, that most simple and innocent of human toils, and which had been alike the joy and labor of the unfallen parents of the Was this garden, then, the Eden of the present world? And this man, with such a perception of harm in what his own hands caused to grow,—was he the Adam?

The distrustful gardener, while plucking away the dead leaves or pruning the too luxuriant growth of the shrubs, defended his hands with a pair of thick gloves. Nor were these his only armor. When, in his walk through the garden, he came to the magnificent plant that hung its purple gems beside the marble fountain, he placed a kind of mask over his mouth and nostrils, as if all this beauty did but conceal a deadlier malice; but, finding his task still too dangerous, he drew back, removed the mask, and called loudly, but in the infirm voice of a person affected with inward disease.—

"Beatrice! Beatrice!"

"Here am I, my father. What would you?" cried a rich and youthful voice from the window of the opposite house—a voice as rich as a tropical sunset, and which made

Giovanni, though he knew not why, think of deep hues of purple or crimson and of perfumes heavily delectable. "Are you in the garden?"

"Yes, Beatrice," answered the gardener, "and I need

your help."

Soon there emerged from under a sculptured portal the figure of a young girl, arrayed with as much richness of taste as the most splendid of the flowers, beautiful as the day, and with a bloom so deep and vivid that one shade more would have been too much. She looked redundant with life, health, and energy; all of which attributes were bound down and compressed, as it were, and girdled tensely, in their luxuriance, by her virgin zone. Yet Giovanni's fancy must have grown morbid while he looked down into the garden; for the impression which the fair stranger made upon him was as if here were another flower, the human sister of those vegetable ones, as beautiful as they, more beautiful than the richest of them, but still to be touched only with a glove, nor to be approached without a mask. As Beatrice came down the garden path, it was observable that she handled and inhaled the odor of several of the plants which her father had most sedulously avoided.

"Here, Beatrice," said the latter, "see how many needful offices require to be done to our chief treasure. Yet, shattered as I am, my life might pay the penalty of approaching it so closely as circumstances demand. Henceforth, I fear,

this plant must be consigned to your sole charge."

"And gladly will I undertake it," cried again the rich tones of the young lady, as she bent towards the magnificent plant and opened her arms as if to embrace it. "Yes, my sister, my splendor, it shall be Beatrice's task to nurse and serve thee; and thou shalt reward her with thy kisses and perfumed breath, which to her is as the breath of life."

Then, with all the tenderness in her manner that was so strikingly expressed in her words, she busied herself with such attentions as the plant seemed to require; and Giovanni, at his lofty window, rubbed his eyes and almost doubted whether it were a girl tending her favorite flower. or one sister performing the duties of affection to another. The scene soon terminated. Whether Dr. Rappaccini had

finished his labors in the garden, or that his watchful eye had caught the stranger's face, he now took his daughter's arm and retired. Night was already closing in; oppressive exhalations seemed to proceed from the plants and steal upward past the open window; and Giovanni, closing the lattice, went to his couch and dreamed of a rich flower and beautiful girl. Flower and maiden were different, and yet the same, and fraught with some strange peril in either shape.

But there is an influence in the light of morning that tends to rectify whatever errors of fancy, or even of judgment, we may have incurred during the sun's decline, or among the shadows of the night, or in the less wholesome glow of moonshine. Giovanni's first movement, on starting from sleep, was to throw open the window and gaze down into the garden which his dreams had made so fertile of mysteries. He was surprised and a little ashamed to find how real and matter-of-fact an affair it proved to be, in the first rays of the sun which gilded the dew-drops that hung upon leaf and blossom, and, while giving a brighter beauty to each rare flower, brought everything within the limits of ordinary experience. The young man rejoiced that, in the heart of the barren city, he had the privilege of overlooking this spot of lovely and luxuriant vegetation. would serve, he said to himself, as a symbolic language to keep him in communion with Nature. Neither the sickly and thoughtworn Dr. Giacomo Rappaccini, it is true, nor his brilliant daughter, were now visible; so that Giovanni could not determine how much of the singularity which he attributed to both was due to their own qualities and how much to his wonder-working fancy; but he was inclined to take a most rational view of the whole matter.

In the course of the day he paid his respects to Signor Pietro Baglioni, professor of medicine in the university, a physician of eminent repute, to whom Giovanni had brought a letter of introduction. The professor was an elderly personage, apparently of genial nature, and habits that might almost be called jovial. He kept the young man to dinner, and made himself very agreeable by the freedom and liveliness of his conversation, especially when warmed by a flask

or two of Tuscan wine. Giovanni, conceiving that men of science, inhabitants of the same city, must needs be on familiar terms with one another, took an opportunity to mention the name of Dr. Rappaccini. But the professor did not respond with so much cordiality as he had anticipated.

"Ill would it become a teacher of the divine art of medicine," said Professor Pietro Baglioni, in answer to a question of Giovanni, "to withhold due and well-considered praise of a physician so eminently skilled as Rappaccini; but, on the other hand, I should answer it but scantily to my conscience were I to permit a worthy youth like yourself, Signor Giovanni, the son of an ancient friend, to imbibe erroneous ideas respecting a man who might hereafter chance to hold your life and death in his hands. The truth is, our worshipful Dr. Rappaccini has as much science as any member of the faculty—with perhaps one single exception—in Padua, or all Italy; but there are certain grave objections to his professional character."

"And what are they?" asked the young man.

"Has my friend Giovanni any disease of body or heart, that he is so inquisitive about physicians?" said the professor, with a smile. "But as for Rappaccini, it is said of him—and I, who know the man well, can answer for its truth—that he cares infinitely more for science than for mankind. His patients are interesting to him only as subjects for some new experiment. He would sacrifice human life, his own among the rest, or whatever else was dearest to him, for the sake of adding so much as a grain of mustard seed to the great heap of his accumulated knowledge."

"Methinks he is an awful man indeed," remarked Guasconti, mentally recalling the cold and purely intellectual aspect of Rappaccini. "And yet, worshipful professor, is it not a noble spirit? Are there many men capable of so spiritual a love of science?"

"God forbid," answered the professor, somewhat testily; "at least, unless they take sounder views of the healing art than those adopted by Rappaccini. It is his theory that all medicinal virtues are comprised within those substances

which we term vegetable poisons. These he cultivates with his own hands, and is said even to have produced new varieties of poison, more horribly deleterious than Nature, without the assistance of this learned person, would ever have plagued the world withal. That the signor doctor does less mischief than might be expected with such dangerous substances is undeniable. Now and then, it must be owned, he has effected, or seemed to effect, a marvellous cure; but, to tell you my private mind, Signor Giovanni, he should receive little credit for such instances of success,—they being probably the work of chance,—but should be held strictly accountable for his failures, which may justly be considered his own work."

The youth might have taken Baglioni's opinions with many grains of allowance had he known that there was a professional warfare of long continuance between him and Dr. Rappaccini, in which the latter was generally thought to have gained the advantage. If the reader be inclined to judge for himself, we refer him to certain black-letter tracts on both sides, preserved in the medical department of the University of Padua.

"I know not, most learned professor," returned Giovanni, after musing on what had been said of Rappaccini's exclusive zeal for science,—"I know not how dearly this physician may love his art; but surely there is one object more dear to him. He has a daughter."

"Aha!" cried the professor, with a laugh. "So now our friend Giovanni's secret is out. You have heard of this daughter, whom all the young men in Padua are wild about, though not half a dozen have ever had the good hap to see her face. I know little of the Signora Beatrice save that Rappaccini is said to have instructed her deeply in his science, and that, young and beautiful as fame reports her, she is already qualified to fill a professor's chair. Perchance her father destines her for mine! Other absurd rumors there be, not worth talking about or listening to. So now, Signor Giovanni, drink off your glass of lachryma."

Guasconti returned to his lodgings somewhat heated with the wine he had quaffed, and which caused his brain to swim with strange fantasies in reference to Dr. Rappaccini and the beautiful Beatrice. On his way happening to pass by a florist's, he bought a fresh bouquet of flowers.

Ascending to his chamber, he seated himself near the window, but within the shadow thrown by the depth of the wall, so that he could look down into the garden with little risk of being discovered. All beneath his eve was a solitude. The strange plants were basking in the sunshine, and now and then nodding gently to one another, as if in acknowledgment of sympathy and kindred. In the midst, by the shattered fountain, grew the magnificent shrub, with its purple gems clustering all over it; they glowed in the air, and gleamed back again out of the depths of the pool, which thus seemed to overflow with colored radiance from the rich reflection that was steeped in it. At first, as we have said, the garden was a solitude. Soon, however,—as Giovanni had half hoped, half feared, would be the case,—a figure appeared beneath the antique sculptured portal, and came down between the rows of plants, inhaling their various perfumes as if she were one of those beings of old classic fable that lived upon sweet odors. On again beholding Beatrice, the young man was even startled to perceive how much her beauty exceeded his recollection of it: so brilliant. so vivid, was its character, that she glowed amid the sunlight, and, as Giovanni whispered to himself, positively illuminated the more shadowy intervals of the garden path. Her face being now more revealed than on the former occasion, he was struck by its expression of simplicity and sweetness,—qualities that had not entered into his idea of her character, and which made him ask anew what manner of mortal she might be. Nor did he fail again to observe, or imagine, an analogy between the beautiful girl and the gorgeous shrub that hung its gemlike flowers over the fountain, —a resemblance which Beatrice seemed to have indulged a fantastic humor in heightening, both by the arrangement of her dress and the selection of its hues.

Approaching the shrub, she threw open her arms, as with a passionate ardor, and drew its branches into an intimate embrace—so intimate that her features were hidden in its leafy bosom and her glistening ringlets all intermingled with the flowers.

"Give me thy breath, my sister," exclaimed Beatrice, "for I am faint with common air. And give me this flower of thine, which I separate with gentlest fingers from the stem

and place it close beside my heart."

With these words the beautiful daughter of Rappaccini plucked one of the richest blossoms of the shrub, and was about to fasten it in her bosom. But now, unless Giovanni's draughts of wine had bewildered his senses, a singular incident occurred. A small orange-colored reptile, of the lizard or chameleon species, chanced to be creeping along the path, just at the feet of Beatrice. It appeared to Giovanni,—but, at the distance from which he gazed, he could scarcely have seen anything so minute.—it appeared to him, however, that a drop or two of moisture from the broken stem of the flower descended upon the lizard's head. For an instant the reptile contorted itself violently, and then lay motionless in the sunshine. Beatrice observed this remarkable phenomenon, and crossed herself, sadly, but without surprise; nor did she therefore hesitate to arrange the fatal flower in her bosom. There it blushed, and almost glimmered with the dazzling effect of a precious stone, adding to her dress and aspect the one appropriate charm which nothing else in the world could have supplied. But Giovanni, out of the shadow of his window, bent forward and shrank back, and murmured and trembled.

"Am I awake? Have I my senses?" said he to himself. "What is this being? Beautiful shall I call her, or inexpres-

sibly terrible?"

Beatrice now strayed carelessly through the garden, approaching closer beneath Giovanni's window, so that he was compelled to thrust his head quite out of its concealment in order to gratify the intense and painful curiosity which she excited. At this moment there came a beautiful insect over the garden wall; it had, perhaps, wandered through the city, and found no flowers or verdure among those antique haunts of men until the heavy perfumes of Dr. Rappaccini's shrubs had lured it from afar. Without alighting on the flowers, this winged brightness seemed to be attracted by Beatrice, and lingered in the air and fluttered about her head. Now, here it could not be but that

Giovanni Guasconti's eyes deceived him. Be that as it might, he fancied that, while Beatrice was gazing at the insect with childish delight, it grew faint and fell at her feet; its bright wings shivered; it was dead—from no cause that he could discern, unless it were the atmosphere of her breath. Again Beatrice crossed herself and sighed heavily as she bent over the dead insect.

An impulsive movement of Giovanni drew her eyes to the window. There she beheld the beautiful head of the young man—rather a Grecian than an Italian head, with fair, regular features, and a glistening of gold among his ringlets—gazing down upon her like a being that hovered in mid air.

Scarcely knowing what he did, Giovanni threw down the bouquet which he had hitherto held in his hand.

"Signora," said he, "there are pure and healthful flowers.

Wear them for the sake of Giovanni Guasconti."

"Thanks, signor," replied Beatrice, with her rich voice, that came forth as it were like a gush of music, and with a mirthful expression half childish and half woman-like. "I accept your gift, and would fain recompense it with this precious purple flower; but if I toss it into the air it will not reach you. So Signor Guasconti must even content himself with my thanks."

She lifted the bouquet from the ground, and then, as if inwardly ashamed at having stepped aside from her maidenly reserve to respond to a stranger's greeting, passed swiftly homeward through the garden. But few as the moments were, it seemed to Giovanni, when she was on the point of vanishing beneath the sculptured portal, that his beautiful bouquet was already beginning to wither in her grasp. It was an idle thought; there could be no possibility of distinguishing a faded flower from a fresh one at so great a distance.

For many days after this incident the young man avoided the window that looked into Dr. Rappaccini's garden, as if something ugly and monstrous would have blasted his eyesight had be been betrayed into a glance. He felt conscious of having put himself, to a certain extent, within the influence of an unintelligible power by the communication

which he had opened with Beatrice. The wisest course would have been, if his heart were in any real danger, to guit his lodgings and Padua itself at once: the next wiser, to have accustomed himself, as far as possible, to the familiar and daylight view of Beatrice—thus bringing her rigidly and systematically within the limits of ordinary experience. Least of all, while avoiding her sight, ought Giovanni to have remained so near this extraordinary being that the proximity and possibility even of intercourse should give a kind of substance and reality to the wild vagaries which his imagination ran riot continually in producing. Guasconti had not a deep heart-or, at all events, its depths were not sounded now; but he had a quick fancy, and an ardent southern temperament, which rose every instant to a higher fever Whether or no Beatrice possessed those terrible attributes, that fatal breath, the affinity with those so beautiful and deadly flowers which were indicated by what Giovanni had witnessed, she had at least instilled a fierce and subtle poison into his system. It was not love, although her rich beauty was a madness to him; nor horror, even while he fancied her spirit to be imbued with the same baneful essence that seemed to pervade her physical frame; but a wild offspring of both love and horror that had each parent in it, and burned like one and shivered like the other. Giovanni knew not what to dread: still less did he know what to hope; yet hope and dread kept a continual warfare in his breast, alternately vanquishing one another and starting up afresh to renew the contest. Blessed are all simple emotions, be they dark or bright! It is the lurid intermixture of the two that produces the illuminating blaze of the infernal regions.

Sometimes he endeavored to assuage the fever of his spirit by a rapid walk through the streets of Padua or beyond its gates: his footsteps kept time with the throbbings of his brain, so that the walk was apt to accelerate itself to a race. One day he found himself arrested; his arm was seized by a portly personage, who had turned back on recognizing the young man and expended much breath in overtaking him.

"Signor Giovanni! Stay, my young friend!" cried he.

"Have you forgotten me? That might well be the case if I were as much altered as yourself."

It was Baglioni, whom Giovanni had avoided ever since their first meeting, from a doubt that the professor's sagacity would look too deeply into his secrets. Endeavoring to recover himself, he stared forth wildly from his inner world into the outer one and spoke like a man in a dream.

"Yes; I am Giovanni Guasconti. You are Professor

Pietro Baglioni. Now let me pass!"

"Not yet, not yet, Signor Giovanni Guasconti," said the professor, smiling, but at the same time scrutinizing the youth with an earnest glance. "What! did I grow up side by side with your father? and shall his son pass me like a stranger in these old streets of Padua? Stand still, Signor Giovanni; for we must have a word or two before we part."

"Speedily, then, most worshipful professor, speedily," said Giovanni, with feverish impatience. "Does not your worship

see that I am in haste?"

Now, while he was speaking there came a man in black along the street, stooping and moving feebly like a person in inferior health. His face was all overspread with a most sickly and sallow hue, but yet so pervaded with an expression of piercing and active intellect that an observer might easily have overlooked the merely physical attributes and have seen only this wonderful energy. As he passed, this person exchanged a cold and distant salutation with Baglioni, but fixed his eyes upon Giovanni with an intentness that seemed to bring out whatever was within him worthy of notice.

Nevertheless, there was a peculiar quietness in the look, as if taking merely a speculative, not a human, interest in the young man.

"It is Dr. Rappaccini!" whispered the professor when the stranger had passed. "Has he ever seen your face before?"

"Not that I know," answered Giovanni, starting at the name.

"He has seen you! he must have seen you!" said Baglioni, hastily. "For some purpose or other, this man of science is making a study of you. I know that look of his! It is the same that coldly illuminates his face as he bends over

a bird, a mouse, or a butterfly, which, in pursuance of some experiment, he has killed by the perfume of a flower; a look as deep as Nature itself, but without Nature's warmth of love. Signor Giovanni, I will stake my life upon it, you are the subject of one of Rappaccini's experiments!"

"Will you make a fool of me?" cried Giovanni, passionately. "That, signor professor, were an untoward experi-

ment."

"Patience! patience!" replied the imperturbable professor. "I tell thee, my poor Giovanni, that Rappaccini has a scientific interest in thee. Thou hast fallen into fearful hands! And the Signora Beatrice,—what part does she act in this mystery?"

But Guasconti, finding Baglioni's pertinacity intolerable, here broke away, and was gone before the professor could again seize his arm. He looked after the young man intently

and shook his head.

"This must not be," said Baglioni to himself. "The youth is the son of my old friend, and shall not come to any harm from which the arcana of medical science can preserve him. Besides, it is too insufferable an impertinence in Rappaccini, thus to snatch the lad out of my own hands, as I may say, and make use of him for his infernal experiments. This daughter of his! It shall be looked to. Perchance, most learned Rappaccini, I may foil you where you little dream of it!"

Meanwhile Giovanni had pursued a circuitous route, and at length found himself at the door of his lodgings. As he crossed the threshold he was met by old Lisabetta, who smirked and smiled, and was evidently desirous to attract his attention; vainly, however, as the ebullition of his feelings had momentarily subsided into a cold and dull vacuity. He turned his eyes full upon the withered face that was puckering itself into a smile, but seemed to behold it not. The old dame, therefore, laid her grasp upon his cloak.

"Signor! signor!" whispered she, still with a smile over the whole breadth of her visage, so that it looked not unlike a grotesque carving in wood, darkened by centuries. "Listen, signor! There is a private entrance into the garden!" "What do you say?" exclaimed Giovanni, turning quickly about, as if an inanimate thing should start into feverish life. "A private entrance into Dr. Rappaccini's garden?"

"Hush! hush! not so loud!" whispered Lisabetta, putfing her hand over his mouth. "Yes; into the worshipful doctor's garden, where you may see all his fine shrubbery. Many a young man in Padua would give gold to be admitted among those flowers."

Giovanni put a piece of gold into her hand.

"Show me the way," said he.

A surmise, probably excited by his conversation with Baglioni, crossed his mind, that this interposition of old Lisabetta might perchance be connected with the intrigue. whatever were its nature, in which the professor seemed to suppose that Dr. Rappaccini was involving him. But such a suspicion, though it disturbed Giovanni, was inadequate to restrain him. The instant that he was aware of the possibility of approaching Beatrice, it seemed an absolute necessity of his existence to do so. It mattered not whether she were angel or demon; he was irrevocably within her sphere, and must obey the law that whirled him onward, in everlessening circles, towards a result which he did not attempt to foreshadow; and yet, strange to say, there came across him a sudden doubt whether this intense interest on his part were not delusory; whether it were really of so deep and positive a nature as to justify him in now thrusting himself into an incalculable position; whether it were not merely the fantasy of a young man's brain, only slightly or not at all connected with his heart.

He paused, hesitated, turned half about, but again went on. His withered guide led him along several obscure passages, and finally undid a door, through which, as it was opened, there came the sight and sound of rustling leaves, with the broken sunshine glimmering among them. Giovanni stepped forth, and, forcing himself through the entanglement of a shrub that wreathed its tendrils over the hidden entrance, stood beneath his own window in the open area of Dr. Rappaccini's garden.

How often is it the case that, when impossibilities have come to pass and dreams have condensed their misty sub-

stance into tangible realities, we find ourselves calm, and even coldly self-possessed, amid circumstances which it would have been a delirium of joy or agony to anticipate! Fate delights to thwart us thus. Passion will choose his own time to rush upon the scene, and lingers sluggishly behind when an appropriate adjustment of events would seem to summon his appearance. So was it now with Giovanni. Day after day his pulses had throbbed with feverish blood at the improbable idea of an interview with Beatrice, and of standing with her, face to face, in this very garden, basking in the Oriental sunshine of her beauty, and snatching from her full gaze the mystery which he deemed the riddle of his own existence. But now there was a singular and untimely equanimity within his breast. He threw a glance around the garden to discover if Beatrice or her father were present, and, perceiving that he was alone, began a critical observation of the plants.

The aspect of one and all of them dissatisfied him; their gorgeousness seemed fierce, passionate, and even unnatural. There was hardly an individual shrub which a wanderer, straying by himself through a forest, would not have been startled to find growing wild, as if an unearthly face had glared at him out of the thicket. Several also would have shocked a delicate instinct by an appearance of artificialness indicating that there had been such commixture, and, as it were, adultery, of various vegetable species, that the production was no longer of God's making, but the monstrous offspring of man's depraved fancy, glowing with only an evil mockery of beauty. They were probably the result of experiment, which in one or two cases had succeeded in mingling plants individually lovely into a compound possessing the questionable and ominous character that distinguished the whole growth of the garden. In fine, Giovanni recognized but two or three plants in the collection, and those of a kind that he well knew to be poisonous. While busy with these contemplations he heard the rustling of a silken garment, and, turning, beheld Beatrice emerging from beneath the sculptured portal.

Giovanni had not considered with himself what should be his deportment; whether he should apologize for his

intrusion into the garden, or assume that he was there with the privity at least, if not by the desire, of Dr. Rappaccini or his daughter; but Beatrice's manner placed him at his ease, though leaving him still in doubt by what agency he had gained admittance. She came lightly along the path and met him near the broken fountain. There was surprise in her face, but brightened by a simple and kind expression of pleasure.

"You are a connoisseur in flowers, signor," said Beatrice, with a smile, alluding to the bouquet which he had flung her from the window. "It is no marvel, therefore, if the sight of my father's rare collection has tempted you to take a nearer view. If he were here, he could tell you many strange and interesting facts as to the nature and habits of these shrubs; for he has spent a lifetime in such studies, and this garden is his world."

"And yourself, lady," observed Giovanni, "if fame says true,—you likewise are deeply skilled in the virtues indicated by these rich blossoms and these spicy perfumes. Would you deign to be my instructress, I should prove an apter scholar than if taught by Signor Rappaccini himself"

"Are there such idle rumors?" asked Beatrice, with the music of a pleasant laugh. "Do people say that I am skilled in my father's science of plants? What a jest is there! No; though I have grown up among these flowers, I know no more of them than their hues and perfume; and sometimes methinks I would fain rid myself of even that small knowledge. There are many flowers here, and those not the least brilliant, that shock and offend me when they meet my eye. But pray, signor, do not believe these stories about my science. Believe nothing of me save what you see with your own eyes."

"And must I believe all that I have seen with my own eyes?" asked Giovanni, pointedly, while the recollection of former scenes made him shrink. "No, signora; you demand too little of me. Bid me believe nothing save what comes from your own lips."

It would appear that Beatrice understood him. There came a deep flush to her cheek; but she looked full into

Giovanni's eyes, and responded to his gaze of uneasy suspicion with a queenlike haughtiness.

"I do so bid you, signor," she replied. "Forget whatever you may have fancied in regard to me. If true to the outward senses, still it may be false in its essence; but the words of Beatrice Rappaccini's lips are true from the depths of the heart outward. Those you may believe."

A fervor glowed in her whole aspect and beamed upon Giovanni's consciousness like the light of truth itself; but while she spoke there was a fragrance in the atmosphere around her, rich and delightful, though evanescent, yet which the young man, from an indefinable reluctance, scarcely dared to draw into his lungs. It might be the odor of the flowers. Could it be Beatrice's breath which thus embalmed her words with a strange richness, as if by steeping them in her heart? A faintness passed like a shadow over Giovanni and flitted away; he seemed to gaze through the beautiful girl's eyes into her transparent soul, and felt no more doubt or fear.

The tinge of passion that had colored Beatrice's manner vanished; she became gay, and appeared to derive a pure delight from her communion with the youth not unlike what the maiden of a lonely island might have felt conversing with a vovager from the civilized world. Evidently her experience of life had been confined within the limits of that garden. She talked now about matters as simple as the daylight or summer clouds, and now asked questions in reference to the city, or Giovanni's distant home, his friends, his mother, and his sisters—questions indicating such seclusion, and such lack of familiarity with modes and forms, that Giovanni responded as if to an infant. Her spirit gushed out before him like a fresh rill that was just catching its first glimpse of the sunlight and wondering at the reflections of earth and sky which were flung into its bosom. There came thoughts, too, from a deep source, and fantasies of a gemlike brilliancy, as if diamonds and rubies sparkled upward among the bubbles of the fountain. Ever and anon there gleamed across the young man's mind a sense of wonder that he should be walking side by side with the being who had so wrought upon his imagination, whom he had idealized in such hues of terror, in whom he had positively witnessed such manifestations of dreadful attributes,—that he should be conversing with Beatrice like a brother, and should find her so human and so maidenlike. But such reflections were only momentary; the effect of her character was too real not to make itself familiar at once.

In this free intercourse they had strayed through the garden, and now, after many turns among its avenues, were come to the shattered fountain, beside which grew the magnificent shrub, with its treasury of glowing blossoms. A fragrance was diffused from it which Giovanni recognized as identical with that which he had attributed to Beatrice's breath, but incomparably more powerful. As her eyes fell upon it, Giovanni beheld her press her hand to her bosom as if her heart were throbbing suddenly and painfully.

"For the first time in my life," murmured she, addressing

the shrub, "I had forgotten thee."

"I remember, signora," said Giovanni, "that you once promised to reward me with one of these living gems for the bouquet which I had the happy boldness to fling to your feet. Permit me now to pluck it as a memorial of this interview."

He made a step toward the shrub with extended hand; but Beatrice darted forward, uttering a shrick that went through his heart like a dagger. She caught his hand and drew it back with the whole force of her slender figure. Giovanni felt her touch thrilling through his fibres.

"Touch it not!" exclaimed she, in a voice of agony. "Not

for thy life! It is fatal!"

Then, hiding her face, she fled from him and vanished beneath the sculptured portal. As Giovanni followed her with his eyes, he beheld the emaciated figure and pale intelligence of Dr. Rappaccini, who had been watching the scene, he knew not how long, within the shadow of the entrance.

No sooner was Guasconti alone in his chamber than the image of Beatrice came back to his passionate musings, invested with all the witchery that had been gathering around it ever since his first glimpse of her, and now likewise imbued with a tender warmth of girlish womanhood. She was human; her nature was endowed with all gentle and

feminine qualities; she was worthiest to be worshipped: she was capable, surely, on her part, of the height and heroism of love. Those tokens which he had hitherto considered as proofs of a frightful peculiarity in her physical and moral system were now either forgotten, or, by the subtle sophistry of passion transmitted into a golden crown of enchantment, rendering Beatrice the more admirable by so much as she was the more unique. Whatever had looked ugly was now beautiful; or, if incapable of such a change, it stole away and hid itself among those shapeless half ideas which throng the dim region beyond the daylight of our perfect consciousness. Thus did he spend the night, nor fell asleep until the dawn had begun to awake the slumbering flowers in Dr. Rappaccini's garden, whither Giovanni's dreams doubtless led him. Up rose the sun in his due season, and, flinging his beams upon the young man's eyelids, awoke him to a sense of pain. When thoroughly aroused, he became sensible of a burning and tingling agony in his hand-in his right hand-the very hand which Beatrice had grasped in her own when he was on the point of plucking one of the gemlike flowers. On the back of that hand there was now a purple print like that of four small fingers, and the likeness of a slender thumb upon his wrist.

Oh, how stubbornly does love,—or even that cunning semblance of love which flourishes in the imagination, but strikes no depth of root into the heart,—how stubbornly does it hold its faith until the moment comes when it is doomed to vanish into thin mist! Giovanni wrapped a handkerchief about his hand and wondered what evil thing had stung him, and soon forgot his pain in a reverie of Beatrice.

After the first interview, a second was in the inevitable course of what we call fate. A third; a fourth; and a meeting with Beatrice in the garden was no longer an incident in Giovanni's daily life, but the whole space in which he might be said to live; for the anticipation and memory of that ecstatic hour made up the remainder. Nor was it otherwise with the daughter of Rappaccini. She watched for the youth's appearance, and flew to his side with confidence as unreserved as if they had been playmates from early infancy—as if they were such playmates still. If, by any

unwonted chance, he failed to come at the appointed moment, she stood beneath the window and sent up the rich sweetness of her tones to float around him in his chamber and echo and reverberate throughout his heart: "Giovanni! Giovanni! Why tarriest thou? Come down!" And down he hastened into that Eden of poisonous flowers.

But, with all this intimate familiarity, there was still a reserve in Beatrice's demeanor, so rigidly and invariably sustained that the idea of infringing it scarcely occurred to his imagination. By all appreciable signs, they loved: they had looked love with eyes that conveyed the holy secret from the depths of one soul into the depths of the other, as if it were too sacred to be whispered by the way: they had even spoken love in those gushes of passion when their spirits darted forth in articulated breath like tongues of long-hidden flame; and yet there had been no seal of lips, no clasp of hands, nor any slightest caress such as love claims and hallows. He had never touched one of the gleaming ringlets of her hair; her garment—so marked was the physical barrier between them-had never been waved against him by a breeze. On the few occasions when Giovanni had seemed tempted to overstep the limit. Beatrice grew so sad, so stern, and withal wore such a look of desolate separation, shuddering at itself, that not a spoken word was requisite to repel him. At such times he was startled at the horrible suspicions that rose, monster-like, out of the caverns of his heart and stared him in the face; his love grew thin and faint as the morning mist. his doubts alone had substance. But, when Beatrice's face brightened again after the momentary shadow, she was transformed at once from the mysterious, questionable being whom he had watched with so much awe and horror; she was now the beautiful and unsophisticated girl whom he felt that his spirit knew with a certainty beyond all other knowledge.

A considerable time had now passed since Giovanni's last meeting with Baglioni. One morning, however, he was disagreeably surprised by a visit from the professor, whom he had scarcely thought of for whole weeks, and would willingly have forgotten still longer. Given up as he had long been to a pervading excitement, he could tolerate no

companions except upon condition of their perfect sympathy with his present state of feeling. Such sympathy was not to be expected from Professor Baglioni.

The visitor chatted carelessly for a few moments about the gossip of the city and the university, and then took

up another topic.

"I have been reading an old classic author lately," said he, "and met with a story that strangely interested me. Possibly you may remember it. It is of an Indian prince, who sent a beautiful woman as a present to Alexander the Great. She was as lovely as the dawn and gorgeous as the sunset; but what especially distinguished her was a certain rich perfume in her breath—richer than a garden of Persian roses. Alexander, as was natural to a youthful conqueror, fell in love at first sight with this magnificent stranger; but a certain sage physician, happening to be present, discovered a terrible secret in regard to her."

"And what was that?" asked Giovanni, turning his eyes

downward to avoid those of the professor.

"That this lovely woman," continued Baglioni, with emphasis, "had been nourished with poisons from her birth upward, until her whole nature was so imbued with them that she herself had become the deadliest poison in existence. Poison was her element of life. With that rich perfume of her breath she blasted the very air. Her love would have been poison—her embrace death. Is not this a marvellous tale?"

"A childish fable," answered Giovanni, nervously starting from his chair. "I marvel how your worship finds time to read such nonsense among your graver studies."

"By the by," said the professor, looking uneasily about him, "what singular fragrance is this in your apartment? Is it the perfume of your gloves? It is faint, but delicious; and yet, after all, by no means agreeable. Were I to breathe it long, methinks it would make me ill. It is like the breath of a flower; but I see no flowers in the chamber."

"Nor are there any," replied Giovanni, who had turned pale as the professor spoke; "nor, I think, is there any fragrance except in your worship's imagination. Odors, being a sort of element combined of the sensual and the spiritual, are apt to deceive us in this manner. The recol-

lection of a perfume, the bare idea of it, may easily be mistaken for a present reality."

"Ay; but my sober imagination does not often play such tricks," said Baglioni; "and, were I to fancy any kind of odor, it would be that of some vile apothecary drug, wherewith my fingers are likely enough to be imbued. Our worshipful friend Rappaccini, as I have heard, tinctures his medicaments with odors richer than those of Araby. Doubtless, likewise, the fair and learned Signora Beatrice would minister to her patients with draughts as sweet as a maiden's breath; but woe to him that sips them!"

Giovanni's face evinced many contending emotions. The tone in which the professor alluded to the pure and lovely daughter of Rappaccini was a torture to his soul; and yet the intimation of a view of her character, opposite to his own, gave instantaneous distinctness to a thousand dim suspicions, which now grinned at him like so many demons. But he strove hard to quell them and to respond to Baglioni with a true lover's perfect faith.

"Signor professor," said he, "you were my father's friend; perchance, too, it is your purpose to act a friendly part towards his son. I would fain feel nothing towards you save respect and deference; but I pray you to observe, signor, that there is one subject on which we must not speak. You know not the Signora Beatrice. You cannot, therefore, estimate the wrong—the blasphemy, I may even say—that is offered to her character by a light or injurious word."

"Giovanni! my poor Giovanni!" answered the professor, with a calm expression of pity, "I know this wretched girl far better than yourself. You shall hear the truth in respect to the poisoner Rappaccini and his poisonous daughter; yes, poisonous as she is beautiful. Listen; for, even should you do violence to my gray hair, it shall not silence me. That old fable of the Indian woman has become a truth by the deep and deadly science of Rappaccini and in the person of the lovely Beatrice."

Giovanni groaned and hid his face.

"Her father," continued Baglioni, "was not restrained by natural affection from offering up his child in this horrible manner as the victim of his insane zeal for science; for, let us do him justice, he is as true a man of science as ever distilled his own heart in an alembic. What, then, will be your fate? Beyond a doubt you are selected as the material of some new experiment. Perhaps the result is to be death; perhaps a fate more awful still. Rappaccini, with what he calls the interest of science before his eyes, will hesitate at nothing."

"It is a dream," muttered Giovanni to himself; "surely it

is a dream."

"But," resumed the professor, "be of good cheer, son of my friend. It is not yet too late for the rescue. Possibly we may even succeed in bringing back this miserable child within the limits of ordinary nature, from which her father's madness has estranged her. Behold this little silver vase! It was wrought by the hands of the renowned Benvenuto Cellini, and is well worthy to be a love gift to the fairest dame in Italy. But its contents are invaluable. One little sip of this antidote would have rendered the most virulent poisons of the Borgias innocuous. Doubt not that it will be as efficacious against those of Rappaccini. Bestow the vase, and the precious liquid within it, on your Beatrice, and hopefully await the result."

Baglioni laid a small, exquisitely wrought silver vial on the table and withdrew, leaving what he had said to produce

its effect upon the young man's mind.

"We will thwart Rappaccini yet," thought he, chuckling to himself, as he descended the stairs; "but, let us confess the truth of him, he is a wonderful man—a wonderful man indeed; a vile empiric, however, in his practice, and therefore not to be tolerated by those who respect the good old

rules of the medical profession."

Throughout Giovanni's whole acquaintance with Beatrice, he had occasionally, as we have said, been haunted by dark surmises as to her character; yet so thoroughly had she made herself felt by him as a simple, natural, most affectionate, and guileless creature, that the image now held up by Professor Baglioni looked as strange and incredible as if it were not in accordance with his own original conception. True, there were ugly recollections connected with his first glimpses of the beautiful girl; he could not quite forget

the bouquet that withered in her grasp, and the insect that perished amid the sunny air, by no ostensible agency save the fragrance of her breath. These incidents, however, dissolving in the pure light of her character, had no longer the efficacy of facts, but were acknowledged as mistaken fantasies, by whatever testimony of the senses they might appear to be substantiated. There is something truer and more real than what we can see with the eyes and touch with the finger. On such better evidence had Giovanni founded his confidence in Beatrice, though rather by the necessary force of her high attributes than by any deep and generous faith on his part. But now his spirit was incapable of sustaining itself at the height to which the early enthusiasm of passion had exalted it; he fell down, grovelling among earthly doubts, and defiled therewith the pure whiteness of Beatrice's image. Not that he gave her up; he did but distrust. He resolved to institute some decisive test that should satisfy him, once for all, whether there were those dreadful peculiarities in her physical nature which could not be supposed to exist without some corresponding monstrosity of soul. His eyes, gazing down afar, might have deceived him as to the lizard, the insect, and the flowers; but if he could witness, at the distance of a few paces, the sudden blight of one fresh and healthful flower in Beatrice's hand. there would be room for no further question. With this idea he hastened to the florist's and purchased a bouquet that was still gemmed with the morning dew-drops.

It was now the customary hour of his daily interview with Beatrice. Before descending into the garden, Giovanni failed not to look at his figure in the mirror,—a vanity to be expected in a beautiful young man, yet, as displaying itself at that troubled and feverish moment, the token of a certain shallowness of feeling and insincerity of character. He did gaze, however, and said to himself that his features had never before possessed so rich a grace, nor his eyes such vivacity, nor his cheeks so warm a hue of superabundant

life.

"At least," thought he, "her poison has not yet insinuated itself into my system. I am no flower to perish in her grasp."

With that thought he turned his eyes on the bouquet, which he had never once laid aside from his hand. A thrill of indefinable horror shot through his frame on perceiving that those dewy flowers were already beginning to droop; they wore the aspect of things that had been fresh and lovely yesterday. Giovanni grew white as marble, and stood motionless before the mirror, staring at his own reflection there as at the likeness of something frightful. He remembered Baglioni's remark about the fragrance that seemed to pervade the chamber. It must have been the poison in his breath! Then he shuddered—shuddered at himself. Recovering from his stupor, he began to watch with curious eve a spider that was busily at work hanging its web from the antique cornice of the apartment, crossing and recrossing the artful system of interwoven lines-as vigorous and active a spider as ever dangled from an old ceiling. Giovanni bent towards the insect, and emitted a deep, long breath. The spider suddenly ceased its toil; the web vibrated with a tremor originating in the body of the small artisan. Again Giovanni sent forth a breath, deeper, longer, and imbued with a venomous feeling out of his heart: he knew not whether he were wicked, or only desperate. The spider made a convulsive gripe with his limbs and hung dead across the window.

"Accursed! accursed!" muttered Giovanni, addressing himself. "Hast thou grown so poisonous that this deadly insect perishes by thy breath?"

At that moment a rich, sweet voice came floating up from

the garden.

"Giovanni! Giovanni! It is past the hour! Why tarriest thou? Come down!"

"Yes," muttered Giovanni again. "She is the only being whom my breath may not slay! Would that it might!"

He rushed down, and in an instant was standing before the bright and loving eyes of Beatrice. A moment ago his wrath and despair had been so fierce that he could have desired nothing so much as to wither her by a glance; but with her actual presence there came influences which had too real an existence to be at once shaken off: recollections of the delicate and benign power of her feminine nature, which had so often enveloped him in a religious calm; recollections of many a holy and passionate outgush of her heart, when the pure fountain had been unsealed from its depths and made visible in its transparency to his mental eye; recollections which, had Giovanni known how to estimate them, would have assured him that all this ugly mystery was but an earthly illusion, and that, whatever mist of evil might seem to have gathered over her, the real Beatrice was a heavenly angel. Incapable as he was of such high faith, still her presence had not utterly lost its magic. Giovanni's rage was quelled into an aspect of sullen insensibility.

Beatrice, with a quick spiritual sense, immediately felt that there was a gulf of blackness between them which neither he nor she could pass. They walked on together, sad and silent, and came thus to the marble fountain and to its pool of water on the ground, in the midst of which grew the shrub that bore gem-like blossoms. Giovanni was affrighted at the eager enjoyment—the appetite, as it were—with which he found himself inhaling the fragrance of the flowers.

"Beatrice," asked he, abruptly, "whence came this shrub?" "My father created it," answered she, with simplicity.

"Created it! created it!" repeated Giovanni. "What mean you, Beatrice?"

"He is a man fearfully acquainted with the secrets of Nature," replied Beatrice; "and, at the hour when I first drew breath, this plant sprang from the soil, the offspring of his science, of his intellect, while I was but his earthly child. Approach it not!" continued she, observing with terror that Giovanni was drawing nearer to the shrub. "It has qualities that you little dream of. But I, dearest Giovanni,—I grew up and blossomed with the plant and was nourished with its breath. It was my sister, and I loved it with a human affection; for, alas!—hast thou not suspected it?—there was an awful doom."

Here Giovanni frowned so darkly upon her that Beatrice paused and trembled. But her faith in his tenderness reassured her, and made her blush that she had doubted for an instant "There was an awful doom," she continued, "the effect of my father's fatal love of science, which estranged me from all society of my kind. Until Heaven sent thee, dearest Giovanni, oh, how lonely was thy poor Beatrice!"

"Was it a hard doom?" asked Giovanni, fixing his eyes

upon her.

"Only of late have I known how hard it was," answered she, tenderly. "Oh, yes; but my heart was torpid, and therefore quiet."

Giovanni's rage broke forth from his sullen gloom like a

lightning flash out of a dark cloud.

"Accursed one!" cried he, with venomous scorn and anger. "And, finding thy solitude wearisome, thou hast severed me likewise from all the warmth of life and enticed me into thy region of unspeakable horror!"

"Giovanni!" exclaimed Beatrice, turning her large bright eyes upon his face. The force of his words had not found its way into her mind: she was merely thunderstruck.

"Yes, poisonous thing!" repeated Giovanni, beside himself with passion. "Thou hast done it! Thou hast blasted me! Thou hast filled my veins with poison! Thou hast made me as hateful, as ugly, as loathsome and deadly a creature as thyself—a world's wonder of hideous monstrosity! Now, if our breath be happily as fatal to ourselves as to all others, let us join our lips in one kiss of unutterable hatred, and so die!"

"What has befallen me?" murmured Beatrice, with a low moan out of her heart. "Holy Virgin, pity me, a poor heart-broken child!"

"Thou,—dost thou pray?" cried Giovanni, still with the same fiendish scorn. "Thy very prayers, as they come from thy lips, taint the atmosphere with death. Yes, yes; let us pray! Let us to church and dip our fingers in the holy water at the portal! They that come after us will perish as by a pestilence! Let us sign crosses in the air! It will be scattering curses abroad in the likeness of holy symbols!"

"Giovanni," said Beatrice, calmly, for her grief was beyond passion, "why dost thou join thyself with me thus in those terrible words? I, it is true, am the horrible thing thou

namest me. But thou,-what hast thou to do, save with one other shudder at my hideous misery to go forth out of the garden and mingle with thy race, and forget that there ever crawled on earth such a monster as poor Beatrice?"

"Dost thou pretend ignorance?" asked Giovanni, scowling upon her. "Behold! this power have I gained from the pure

daughter of Rappaccini."

There was a swarm of summer insects flitting through the air in search of the food promised by the flower odors of the fatal garden. They circled round Giovanni's head, and were evidently attracted towards him by the same influence which had drawn them for an instant within the sphere of several of the shrubs. He sent forth a breath among them. and smiled bitterly at Beatrice as at least a score of the insects fell dead upon the ground.

"I see it! I see it!" shrieked Beatrice. "It is my father's fatal science! No. no. Giovanni: it was not I! Never! never! I dreamed only to love thee and be with thee a little time, and so to let thee pass away, leaving but thine image in mine heart; for, Giovanni, believe it, though my body be nourished with poison, my spirit is God's creature, and craves love as its daily food. But my father,—he has united us in this fearful sympathy. Yes; spurn me, tread upon me, kill me. Oh, what is death after such words as thine? But it was not I. Not a world of bliss would I have done it."

Giovanni's passion had exhausted itself in its outburst from his lips. There now came across him a sense, mournful, and not without tenderness, of the intimate and peculiar relationship between Beatrice and himself. They stood, as it were, in an utter solitude, which would be made none the less solitary by the densest throng of human life. Ought not, then, the desert of humanity around them to press this insulated pair closer together? If they should be cruel to one another, who was there to be kind to them? Besides, thought Giovanni, might there not still be a hope of his returning within the limits of ordinary nature, and leading Beatrice, the redeemed Beatrice, by the hand? O, weak, and selfish, and unworthy spirit, that could dream of an earthly union and earthly happiness as possible, after such

deep love had been so bitterly wronged as was Beatrice's love by Giovanni's blighting words! No, no; there could be no such hope. She must pass heavily, with that broken heart, across the borders of Time—she must bathe her hurts in some fount of paradise, and forget her grief in the light of immortality, and there be well.

But Giovanni did not know it.

"Dear Beatrice," said he, approaching her, while she shrank away as always at his approach, but now with a different impulse, "dearest Beatrice, our fate is not yet so desperate. Behold! there is a medicine, potent, as a wise physician has assured me, and almost divine in its efficacy. It is composed of ingredients the most opposite to those by which thy awful father has brought this calamity upon thee and me. It is distilled of blessed herbs. Shall we not quaff it together, and thus be purified from evil?"

"Give it me!" said Beatrice, extending her hand to receive the little silver vial which Giovanni took from his bosom. She added, with a peculiar emphasis, "I will drink; but do

thou await the result."

She put Baglioni's antidote to her lips; and, at the same moment, the figure of Rappaccini emerged from the portal and came slowly towards the marble fountain. As he drew near, the pale man of science seemed to gaze with a triumphant expression at the beautiful youth and maiden, as might an artist who should spend his life in achieving a picture or a group of statuary and finally be satisfied with his success. He paused; his bent form grew erect with conscious power; he spread out his hands over them in the attitude of a father imploring a blessing upon his children; but those were the same hands that had thrown poison into the stream of their lives. Giovanni trembled. Beatrice shuddered nervously, and pressed her hand upon her heart.

"My daughter," said Rappaccini, "thou art no longer lonely in the world. Pluck one of those precious gems from thy sister shrub and bid thy bridegroom wear it in his bosom. It will not harm him now. My science and the sympathy between thee and him have so wrought within his system that he now stands apart from common men, as thou dost, daughter of my pride and triumph, from ordinary women. Pass

on, then, through the world, most dear to one another, and dreadful to all besides!"

"My father," said Beatrice, feebly,—and still as she spoke she kept her hand upon her heart,—"wherefore didst thou inflict this miserable doom upon thy child?"

"Miserable!" exclaimed Rappaccini. "What mean you, foolish girl? Dost thou deem it misery to be endowed with marvellous gifts against which no power nor strength could avail an enemy—misery, to be able to quell the mightiest with a breath—misery, to be as terrible as thou art beautiful? Wouldst thou, then, have preferred the condition of a weak woman, exposed to all evil and capable of none?"

"I would fain have been loved, not feared," murmured Beatrice, sinking down upon the ground. "But now it matters not. I am going, father, where the evil which thou hast striven to mingle with my being will pass away like a dream—like the fragrance of these poisonous flowers, which will no longer taint my breath among the flowers of Eden. Farewell, Giovanni! Thy words of hatred are like lead within my heart; but they, too, will fall away as I ascend. Oh, was there not, from the first, more poison in thy nature than in mine?"

To Beatrice,—so radically had her earthly part been wrought upon by Rappaccini's skill,—as poison had been life, so the powerful antidote was death; and thus the poor victim of man's ingenuity and of thwarted nature, and of the fatality that attends all such efforts of perverted wisdom, perished there, at the feet of her father and Giovanni. Just at that moment Professor Pietro Baglioni looked forth from the window, and called loudly, in a tone of triumph mixed with horror, to the thunderstricken man of science,—

"Rappaccini! Rappaccini! and is this the upshot of your experiment!"

# RIP VAN WINKLE THE LEGEND OF SLEEPY HOLLOW

BY WASHINGTON IRVING



## BIOGRAPHICAL NOTE

Washington Irving was the first American man of letters, it is not to be questioned that he was the first American author whose work was received abroad as a permanent contribution to English literature. This estimate of it still holds good, for the qualities which won it recognition a hundred years ago wear well.

Irving was born in New York on April 3, 1783. His father had come from the extreme north of Scotland, his mother from the extreme south of England; they had become American citizens by the fact of the Revolution a few years before the birth of their son. The elder Irving, a well-to-do merchant, destined the future author for the law, and he was in fact later called to the bar, though he practised little. But his legal education was interrupted by an illness which led to a stay of two years in Europe.

After he came home in 1806, he joined with his brother and J. K. Paulding in the production of the satirical miscellany, "Salmagundi," and in 1809 published his first important work, "A History of New York from the Beginning of the World to the End of the Dutch Dynasty" by "Diedrich Knickerbocker."

This book, which made him known in England as well as at home, was begun as a burlesque on a pretentiously written "Picture of New York" by S. L. Mitchill; but it soon developed into a comic history in which facts and extravagant fancy are inextricably blended.

In 1815 Irving went to England on business, but he was unsuccessful in averting the disaster which threatened the commercial house in which he was a partner, and when he turned to writing again it was as a profession rather than as an amusement. His "Sketch Book" came out in 1819-1820, and was followed by "Bracebridge Hall" in 1822 and

"Tales of a Traveller" in 1824. These works met with gratifying success, and the author was now able to indulge in farther travel. During a prolonged residence at Madrid, he wrote his "Life and Voyages of Columbus," and, after a sojourn in the south of Spain, his "Conquest of Granada" (1829) and "The Alhambra" (1832). Meantime he was appointed secretary to the American Embassy at London, a post which he held for three years.

When he returned to America in 1832 after an absence of seventeen years, he was welcomed with great enthusiasm by his countrymen, who appreciated what he had done for the prestige of American literature in Europe. He settled for the next ten years in Sunnyside, the home he built for himself at Tarrytown on the Hudson; and later, from 1842 to 1846, was Minister to Spain. His work after he came back was chiefly biographical, and includes his "Life of Goldsmith" and the "Lives of Mahomet and his Successors." His "Life of George Washington" was just finished when he died of heart disease on November 28, 1859.

Irving achieved distinction in the four fields of the essay, the short story, biography, and history. In the two latter he produced a number of works written in his characteristic polished and graceful style, with much vividness in the presentation of both persons and events; but he lacked the scholarly training necessary to give books of this type permanent standing as records of fact. In the essay he followed the traditions of the school of Addison, and the best of his work is worthy to rank with his models.

It was in fiction that he was most original. Though in England the full length novel was already highly developed, little had been done with the short story; and it is Irving's distinction to have begun the cultivation in America of what is perhaps the one form of literature in which this country has led England. The two tales here published from "The Sketch Book" are the best known of his writings in this field, and they exhibit his characteristic humor, with its blending of fantasy and romance, as well as his exquisite style. Irving was a careful and conscientious literary artist, and, however inferior in genius to some of the great figures who were his contemporaries in England, he was the equal of any of them

in his mastery of a fine and delicate English prose. We have had writers more distinctively national, but America could hardly have been more fortunate than she was in the chance that made Washington Irving her first candidate for a place among the writers of English classics.

W. A. N.



# CRITICISMS AND INTERPRETATIONS

I

#### By George E. Woodberry

UT a broad difference is marked by the contrast of "The Scarlet Letter" and "The Legend of Sleepy Hollow"; the absence of the moral element is felt in the latter; and a grosser habit of life, creature comfort, a harmless but unspiritual superstition, a human warmth, a social comradery, are prominent in Irving's lucubrations. and these are traits of the community ripened and sweetened in him. Irving must have been a charming boy, and in his young days he laid the bases of his life in good cheer, happy cordiality, the amiableness of a sensitive and pleasurable temperament, which he developed in the kindly and hospitable homes of the city. He was all his days a social creature, and loved society, masculine and feminine; and going from New York to a long European experience of social life he returned to be one of the finest types of a man so bred, fit to be one of the historic literary figures of a commercial and cosmopolitan city.

Irving, however, thorough American of his day though he was, bore but little relation to the life of the nation. He was indebted to his country for some impulses of his genius and much material which he reworked into books; but he gave more than he received. Our early literary poverty is illustrated by the gifts he brought. He was a pioneer of letters, but our literary pioneers instead of penetrating further into the virgin wilderness had to hark back to the old lands and come again with piratical treasures; and in this he was only the first of a long line of continental adventurers. Much of American literary experience, which comes to us in our few classics, was gained on foreign soil; and, in fact, it must be acknowledged that, like some young wines, American

genius has been much improved by crossing the seas. Irving was the first example. Commerce naturally leads to travel, and he went out as a man in trade to stay a few months. He remained seventeen years. It was not merely that he received there an aristocratic social training and opportunity peculiarly adapted to ripen his graces—and the graces of his style and nature are essentially social graces—but subjects were given to him and his sympathies drawn out and loosed by both his English and his Spanish residences.

Sentiment and romance were more to him than humor. and grew to be more with years; and in the old lands his mind found that to cling to and clamber over which otherwise might not have come to support his wandering and sympathetic mood. Genius he had, the nature and the faculty of an imaginative writer; what he needed was not power but opportunity; and at every new chance of life he answered to the time and place and succeeded. He alone of men not English-born has added fascination to English shrines, and given them that new light that the poet brings; and he has linked his name indissolubly for all English-reading people with the Alhambra and Granada. It was because of his American birth that he wrote of Columbus, and perhaps some subtle imaginative sympathy always underlies the attraction of Spain, which is so marked, for American writers; but it was not unfitting that in his volumes of travel sketches the romantic after-glow of Spain should bloom in our western sky. By such works, more than by English sketches, which will always seem an undivided part of English literature, he gave to our early literature a romantic horizon, though found in the history and legend of a far country, which it had hitherto lacked; and it is a striking phenomenon to find our writers, on whom the skies shut down round the shores of the New World, lifting up and opening out these prospects into the picturesque distance of earth's space and the romantic remoteness of history, as if our literary genius were gone on a voyage of discovery. It shows the expansion of the national mind, the cessation of the exiguous exile of the colonial days, the beginning of our reunion with the nations of the world, which still goes on; and in this reunion, necessarv for our oneness with man, literature led the way in

these romantic affections of our first travelled man of letters, Irving, in whose wake the others followed.—From "America in Literature" (1903).

#### II

### By LEON H. VINCENT

RVING'S prose is distinguished for grace and sweetness. It is unostentatious, natural, easy. At its best it comes near to being a model of good prose. The most striking effects are produced by the simplest means. Never does the writer appear to be searching for an out-of-the-way term. He accepts what lies at hand. The word in question is almost obvious and often conventional, but invariably apt.

For a writer who produced so much the style is remarkably homogeneous. It is an exaggeration to speak of it as overcharged with color. There are passages of much splendor, but Irving's taste was too refined to admit of his indulging in rhetorical excesses. Nor is the style quite so mellifluous as it seemed to J. W. Croker, who said: "I can no more go on all day with one of his [Irving's] books than I could go on all day sucking a sugar-plum." The truth is that Irving is one of the most human and companionable of writers, and his English is just the sort to prompt one to go on all day with him.

Yet there is a want of ruggedness, the style is almost too perfectly controlled. It lacks the strength and energy born of deep thought and passionate conviction, and it must be praised (as it may be without reserve) for urbanity and masculine grace.—From "American Literary Masters"

(1906).



# RIP VAN WINKLE

#### A Posthumous Writing of Diedrich Knickerbocker

By Woden, God of Saxons, From whence comes Wensday, that is Wodensday, Truth is a thing that ever I will keep Unto thylke day in which I creep into My sepulchre——

CARTWRIGHT.

[The following Tale was found among the papers of the late Diedrich Knickerbocker, an old gentleman of New York, who was very curious in the Dutch history of the province, and the manners of the descendants from its primitive settlers. His historical researches, however, did not lie so much among books as among men; for the former are lamentably scanty on his favorite topics: whereas he found the old burghers, and still more their wives, rich in that legendary lore, so invaluable to true history. Whenever, therefore, he happened upon a genuine Dutch family, snugly shut up in its low-roofed farmhouse, under a spreading sycamore, he looked upon it as a little clasped volume of black-letter, and studied it with the zeal of a book-worm.

The result of all these researches was a history of the province during the reign of the Dutch governors, which he published some years since. There have been various opinions as to the literary character of his work, and, to tell the truth, it is not a whit better than it should be. Its chief merit is its scrupulous accuracy, which indeed was a little questioned on its first appearance, but has since been completely established; and it is now admitted into all historical

collections, as a book of unquestionable authority.

The old gentleman died shortly after the publication of his work, and now that he is dead and gone, it cannot do much harm to his memory to say that his time might have been better employed in weightier labors. He, however, was apt to ride his hobby his own way; and though it did now and then kick up the dust a little in the eyes of his neighbors, and grieve the spirit of some friends, for whom he felt the truest deference and affection; yet his errors and follies are remembered "more in sorrow than in anger," and it begins to be suspected, that he never intended to injure or offend. But however his memory may be appreciated by critics, it is still held dear by many folks, whose good opinion is well worth having;

particularly by certain biscuit-bakers, who have gone so far as to imprint his likeness on their new-year cakes; and have thus given him a chance for immortality, almost equal to the being stamped on a Waterloo Medal, or a Queen Anne's Farthing.]

HOEVER has made a voyage up the Hudson must remember the Kaatskill mountains. They are a dismembered branch of the great Appalachian family, and are seen away to the west of the river, swelling up to a noble height, and lording it over the surrounding country. Every change of season, every change of weather, indeed, every hour of the day, produces some change in the magical hues and shapes of these mountains, and they are regarded by all the good wives, far and near, as perfect barometers. When the weather is fair and settled, they are clothed in blue and purple, and print their bold outlines on the clear evening sky, but, sometimes, when the rest of the landscape is cloudless, they will gather a hood of gray vapors about their summits, which, in the last rays of the setting sun, will glow and light up like a crown of glory.

At the foot of these fairy mountains, the voyager may have descried the light smoke curling up from a village, whose shingle-roofs gleam among the trees, just where the blue tints of the upland melt away into the fresh green of the nearer landscape. It is a little village of great antiquity, having been founded by some of the Dutch colonists, in the early times of the province, just about the beginning of the government of the good Peter Stuyvesant, (may he rest in peace!) and there were some of the houses of the original settlers standing within a few years, built of small yellow bricks brought from Holland, having latticed windows and

gable fronts, surmounted with weather-cocks.

In that same village, and in one of these very houses (which, to tell the precise truth, was sadly time-worn and weather-beaten), there lived many years since, while the country was yet a province of Great Britain, a simple goodnatured fellow of the name of Rip Van Winkle. He was a descendant of the Van Winkles who figured so gallantly in the chivalrous days of Peter Stuyvesant, and accompanied him to the siege of Fort Christina. He inherited, however,

but little of the martial character of his ancestors. I have observed that he was a simple good-natured man; he was, moreover, a kind neighbor, and an obedient hen-pecked husband. Indeed, to the latter circumstance might be owing that meekness of spirit which gained him such universal popularity; for those men are most apt to be obsequious and conciliating abroad, who are under the discipline of shrews at home. Their tempers, doubtless, are rendered pliant and malleable in the fiery furnace of domestic tribulation; and a curtain lecture is worth all the sermons in the world for teaching the virtues of patience and long-suffering. A termagant wife may, therefore, in some respects, be considered a tolerable blessing; and if so, Rip Van Winkle was thrice blessed.

Certain it is, that he was a great favorite among all the good wives of the village, who, as usual, with the amiable sex, took his part in all family squabbles; and never failed, whenever they talked those matters over in their evening gossipings, to lay all the blame on Dame Van Winkle. The children of the village, too, would shout with joy whenever he approached. He assisted at their sports, made their playthings, taught them to fly kites and shoot marbles, and told them long stories of ghosts, witches, and Indians. Whenever he went dodging about the village, he was surrounded by a troop of them, hanging on his skirts, clambering on his back, and playing a thousand tricks on him with impunity; and not a dog would bark at him throughout the neighborhood.

The great error in Rip's composition was an insuperable aversion to all kinds of profitable labor. It could not be from the want of assiduity or perseverance; for he would sit on a wet rock, with a rod as long and heavy as a Tartar's lance, and fish all day without a murmur, even though he should not be encouraged by a single nibble. He would carry a fowling-piece on his shoulder for hours together, trudging through woods and swamps, and up hill and down dale, to shoot a few squirrels or wild pigeons. He would never refuse to assist a neighbor even in the roughest toil, and was a foremost man at all country frolics for husking Indian corn, or building stone-fences; the women of the village, too, used to employ him to run their errands, and to do

such little odd jobs as their less obliging husbands would not do for them. In a word Rip was ready to attend to anybody's business but his own; but as to doing family duty, and keeping his farm in order, he found it impossible.

In fact, he declared it was of no use to work on his farm; it was the most pestilent little piece of ground in the whole country; every thing about it went wrong, and would go wrong, in spite of him. His fences were continually falling to pieces; his cow would either go astray, or get among the cabbages; weeds were sure to grow quicker in his fields than anywhere else; the rain always made a point of setting in just as he had some out-door work to do; so that though his patrimonial estate had dwindled away under his management, acre by acre, until there was little more left than a mere patch of Indian corn and potatoes, yet it was the worst conditioned farm in the neighborhood.

His children, too, were as ragged and wild as if they belonged to nobody. His son Rip, an urchin begotten in his own likeness, promised to inherit the habits, with the old clothes of his father. He was generally seen trooping like a colt at his mother's heels, equipped in a pair of his father's cast-off galligaskins, which he had much ado to hold up with one hand, as a fine lady does her train in bad weather.

Rip Van Winkle, however, was one of those happy mortals. of foolish, well-oiled dispositions, who take the world easy. eat white bread or brown, whichever can be got with least thought or trouble, and would rather starve on a penny than work for a pound. If left to himself, he would have whistled life away in perfect contentment; but his wife kept continually dinning in his ears about his idleness, his carelessness, and the ruin he was bringing on his family. Morning, noon, and night, her tongue was incessantly going, and everything he said or did was sure to produce a torrent of household eloquence. Rip had but one way of replying to all lectures of the kind, and that, by frequent use, had grown into a habit. He shrugged his shoulders, shook his head, cast up his eyes, but said nothing. This, however, always provoked a fresh volley from his wife; so that he was fain to draw off his forces, and take to the outside of the housethe only side which, in truth, belongs to a hen-pecked husband.

Rip's sole domestic adherent was his dog Wolf, who was as much hen-pecked as his master; for Dame Van Winkle regarded them as companions in idleness, and even looked upon Wolf with an evil eye, as the cause of his master's going so often astray. True it is, in all points of spirit befitting an honorable dog, he was as courageous an animal as ever scoured the woods—but what courage can withstand the ever-during and all-besetting terrors of a woman's tongue? The moment Wolf entered the house his crest fell, his tail drooped to the ground, or curled between his legs, he sneaked about with a gallows air, casting many a sidelong glance at Dame Van Winkle, and at the least flourish of a broom-stick or ladle, he would fly to the door with

velping precipitation.

Times grew worse and worse with Rip Van Winkle as years of matrimony rolled on; a tart temper never mellows with age, and a sharp tongue is the only edged tool that grows keener with constant use. For a long while he used to console himself, when driven from home, by frequenting a kind of perpetual club of the sages, philosophers, and other idle personages of the village; which held its sessions on a bench before a small inn, designated by a rubicund portrait of His Majesty George the Third. Here they used to sit in the shade through a long lazy summer's day, talking listlessly over village gossip, or telling endless sleepy stories about nothing. But it would have been worth any statesman's money to have heard the profound discussions that sometimes took place, when by chance an old newspaper fell into their hands from some passing traveller. How solemnly they would listen to the contents, as drawled out by Derrick Van Bummel, the schoolmaster, a dapper learned little man, who was not to be daunted by the most gigantic word in the dictionary; and how sagely they would deliberate upon public events some months after they had taken place.

The opinions of this junto were completely controlled by Nicholas Vedder, a patriarch of the village, and landlord of the inn, at the door of which he took his seat from morning till night, just moving sufficiently to avoid the sun and keep

in the shade of a large tree; so that the neighbors could tell the hour by his movements as accurately as by a sundial. It is true he was rarely heard to speak, but smoked his pipe incessantly. His adherents, however (for every great man has his adherents), perfectly understood him, and knew how to gather his opinions. When anything that was read or related displeased him, he was observed to smoke his pipe vehemently, and to send forth short, frequent and angry puffs; but when pleased, he would inhale the smoke slowly and tranquilly, and emit it in light and placid clouds; and sometimes, taking the pipe from his mouth, and letting the fragrant vapor curl about his nose, would gravely nod his head in token of perfect approbation.

From even this stronghold the unlucky Rip was at length routed by his termagant wife, who would suddenly break in upon the tranquillity of the assemblage and call the members all to naught; nor was that august personage, Nicholas Vedder himself, sacred from the daring tongue of this terrible virago, who charged him outright with encouraging her husband in habits of idleness.

Poor Rip was at last reduced almost to despair; and his only alternative, to escape from the labor of the farm and clamor of his wife, was to take gun in hand and stroll away into the woods. Here he would sometimes seat himself at the foot of a tree, and share the contents of his wallet with Wolf, with whom he sympathized as a fellow-sufferer in persecution. "Poor Wolf," he would say, "thy mistress leads thee a dog's life of it; but never mind, my lad, whilst I live thou shalt never want a friend to stand by thee!" Wolf would wag his tail, look wistfuly in his master's face, and if dogs can feel pity I verily believe he reciprocated the sentiment with all his heart.

In a long ramble of the kind on a fine autumnal day, Rip had unconsciously scrambled to one of the highest parts of the Kaatskill mountains. He was after his favorite sport of squirrel shooting, and the still solitudes had echoed and re-echoed with the reports of his gun. Panting and fatigued, he threw himself, late in the afternoon, on a green knoll, covered with mountain herbage, that crowned the brow of a precipice. From an opening between the trees he could

overlook all the lower country for many a mile of rich woodland. He saw at a distance the lordly Hudson, far, far below him, moving on its silent but majestic course, with the reflection of a purple cloud, or the sail of a lagging bark, here and there sleeping on its glassy bosom, and at last losing itself in the blue highlands.

On the other side he looked down into a deep mountain glen, wild, lonely, and shagged, the bottom filled with fragments from the impending cliffs, and scarcely lighted by the reflected rays of the setting sun. For some time Rip lay musing on this scene; evening was gradually advancing; the mountains began to throw their long blue shadows over the valleys; he saw that it would be dark long before he could reach the village, and he heaved a heavy sigh when he thought of encountering the terrors of Dame Van Winkle.

As he was about to descend, he heard a voice from a distance, hallooing, "Rip Van Winkle! Rip Van Winkle!" He looked round, but could see nothing but a crow winging its solitary flight across the mountain. He thought his fancy must have deceived him, and turned again to descend, when he heard the same cry ring through the still evening air: "Rip Van Winkle! Rip Van Winkle!"-at the same time Wolf bristled up his back, and giving a low growl, skulked to his master's side, looking fearfully down into the glen. Rip now felt a vague apprehension stealing over him: he looked anxiously in the same direction, and perceived a strange figure slowly toiling up the rocks, and bending under the weight of something he carried on his back. He was surprised to see any human being in this lonely and unfrequented place, but supposing it to be some one of the neighborhood in need of his assistance, he hastened down to yield it.

On nearer approach he was still more surprised at the singularity of the stranger's appearance. He was a short square-built old fellow, with thick bushy hair, and a grizzled beard. His dress was of the antique Dutch fashion—a cloth jerkin strapped round the waist—several pair of breeches, the outer one of ample volume, decorated with rows of buttons down the sides, and bunches at the knees. He bore on his shoulder a stout keg, that seemed full of liquor, and

made signs for Rip to approach and assist him with the load. Though rather shy and distrustful of this new acquaintance. Rip complied with his usual alacrity; and mutually relieving one another, they clambered up a narrow gully, apparently the dry bed of a mountain torrent. As they ascended, Rip every now and then heard long rolling peals, like distant thunder, that seemed to issue out of a deep ravine. or rather cleft, between lofty rocks, toward which their rugged path conducted. He paused for an instant, but supposing it to be the muttering of one of those transient thunder-showers which often take place in mountain heights. he proceeded. Passing through the ravine, they came to a hollow, like a small amphitheatre, surrounded by perpendicular precipices, over the brinks of which impending trees shot their branches, so that you only caught glimpses of the azure sky and the bright evening cloud. During the whole time Rip and his companion had labored on in silence: for though the former marvelled greatly what could be the object of carrying a keg of liquor up this wild mountain. yet there was something strange and incomprehensible about the unknown, that inspired awe and checked familiarity.

On entering the amphitheatre, new objects of wonder presented themselves. On a level spot in the centre was a company of odd-looking personages playing at nine-pins. They were dressed in a quaint outlandish fashion; some wore short doublets, others jerkins, with long knives in their belts, and most of them had enormous breeches, of similar style with that of the guide's. Their visages, too, were peculiar: one had a large beard, broad face, and small piggish eyes: the face of another seemed to consist entirely of nose, and was surmounted by a white sugar-loaf hat set off with a little red cock's tail. They all had beards, of various shapes and colors. There was one who seemed to be the commander. He was a stout old gentleman, with a weather-beaten countenance; he wore a laced doublet, broad belt and hanger, high-crowned hat and feather, red stockings, and high-heeled shoes, with roses in them. The whole group reminded Rip of the figures in an old Flemish painting, in the parlor of Dominie Van Shaick, the village parson, and which had been brought over from Holland at the time of the settlement.

What seemed particularly odd to Rip was, that though these folks were evidently amusing themselves, yet they maintained the gravest faces, the most mysterious silence, and were, withal, the most melancholy party of pleasure he had ever witnessed. Nothing interrupted the stillness of the scene but the noise of the balls, which, whenever they were rolled, echoed along the mountains like rumbling peals of thunder.

As Rip and his companion approached them, they suddenly desisted from their play, and stared at him with such fixed statue-like gaze, and such strange, uncouth, lack-lustre countenances, that his heart turned within him, and his knees smote together. His companion now emptied the contents of the keg into large flagons, and make signs to him to wait upon the company. He obeyed with fear and trembling; they quaffed the liquor in profound silence, and then returned to their game.

By degrees Rip's awe and apprehension subsided. He even ventured, when no eye was fixed upon him, to taste the beverage, which he found had much of the flavor of excellent Hollands. He was naturally a thirsty soul, and was soon tempted to repeat the draught. One taste provoked another; and he reiterated his visits to the flagon so often that at length his senses were overpowered, his eyes swam in his head, his head gradually declined, and he fell into a deep sleep.

On waking, he found himself on the green knoll whence he had first seen the old man of the glen. He rubbed his eyes—it was a bright sunny morning. The birds were hopping and twittering among the bushes, and the eagle was wheeling aloft, and breasting the pure mountain breeze. "Surely," thought Rip, "I have not slept here all night." He recalled the occurrences before he fell asleep. The strange man with a keg of liquor—the mountain ravine—the wild retreat among the rocks—the woe-begone party at nincpins—the flagon—"Oh! that flagon! that wicked flagon!" thought Rip—"what excuse shall I make to Dame Van Winkle!"

He looked round for his gun, but in place of the clean well-oiled fowling-piece, he found an old firelock lying by

him, the barrel incrusted with rust, the lock falling off, and the stock worm-eaten. He now suspected that the grave roysterers of the mountain had put a trick upon him, and having dosed him with liquor, had robbed him of his gun. Wolf, too, had disappeared, but he might have strayed away after a squirrel or partridge. He whistled after him and shouted his name, but all in vain; the echoes repeated his whistle and shout, but no dog was to be seen.

He determined to revisit the scene of the last evening's gambol, and if he met with any of the party, to demand his dog and gun. As he rose to walk, he found himself stiff in the joints, and wanting in his usual activity. "These mountain beds do not agree with me," thought Rip; "and if this frolic should lay me up with a fit of the rheumatism, I shall have a blessed time with Dame Van Winkle." With some difficulty he got down into the glen; he found the gully up which he and his companion had ascended the preceding evening; but to his astonishment a mountain stream was now foaming down it, leaping from rock to rock, and filling the glen with babbling murmurs. He, however, made shift to scramble up its sides, working his toilsome way through thickets of birch, sassafras, and witch-hazel, and sometimes tripped up or entangled by the wild grapevines that twisted their coils or tendrils from tree to tree, and spread a kind of network in his path.

At length he reached to where the ravine had opened through the cliffs to the amphitheatre; but no traces of such opening remained. The rocks presented a high impenetrable wall over which the torrent came tumbling in a sheet of feathery foam, and fell into a broad deep basin, black from the shadows of the surrounding forest. Here, then, poor Rip was brought to a stand. He again called and whistled after his dog; he was only answered by the cawing of a flock of idle crows, sporting high in air about a dry tree that overhung a sunny precipice; and who, secure in their elevation, seemed to look down and scoff at the poor man's perplexities. What was to be done? the morning was passing away, and Rip felt famished for want of his breakfast. He grieved to give up his dog and gun; he dreaded to meet his wife; but it would not do to starve among the mountains. He shook

his head, shouldered the rusty firelock, and, with a heart full of trouble and anxiety, turned his steps homeward.

As he approached the village he met a number of people, but none whom he knew, which somewhat surprised him, for he had thought himself acquainted with every one in the country round. Their dress, too, was of a different fashion from that to which he was accustomed. They all stared at him with equal marks of surprise, and whenever they cast their eyes upon him, invariably stroked their chins. The constant recurrence of this gesture induced Rip, involuntarily, to do the same, when to his astonishment, he found his beard had grown a foot long!

He had now entered the skirts of the village. A troop of strange children ran at his heels, hooting after him, and pointing at his gray beard. The dogs, too, not one of which he recognized for an old acquaintance, barked at him as he passed. The very village was altered; it was larger and more populous. There were rows of houses which he had never seen before, and those which had been his familiar haunts had disappeared. Strange names were over the doors-strange faces at the windows-every thing was strange. His mind now misgave him; he began to doubt whether both he and the world around him were not bewitched. Surely this was his native village, which he had left but the day before. There stood the Kaatskill mountains-there ran the silver Hudson at a distance-there was every hill and dale precisely as it had always been-Rip was sorely perplexed-"That flagon last night," thought he, "has addled my poor head sadly!"

It was with some difficulty that he found the way to his own house, which he approached with silent awe, expecting every moment to hear the shrill voice of Dame Van Winkle. He found the house gone to decay—the roof fallen in, the windows shattered, and the doors off the hinges. A half-starved dog that looked like Wolf was skulking about it. Rip called him by name, but the cur snarled, showed his teeth, and passed on. This was an unkind cut indeed—"My very dog," sighed poor Rip, "has forgotten me!"

He entered the house, which, to tell the truth. Dame Van Winkle had always kept in neat order. It was empty, forlorn,

and apparently abandoned. This desolateness overcame all his connubial fears—he called loudly for his wife and children—the lonely chambers rang for a moment with his voice, and then all again was silence.

He now hurried forth, and hastened to his old resort, the village inn-but it too was gone. A large rickety wooden building stood in its place, with great gaping windows, some of them broken and mended with old hats and petticoats, and over the door was painted, "the Union Hotel, by Jonathan Doolittle." Instead of the great tree that used to shelter the quiet little Dutch inn of yore, there now was reared a tall naked pole, with something on the top that looked like a red night-cap, and from it was fluttering a flag, on which was a singular assemblage of stars and stripesall this was strange and incomprehensible. He recognized on the sign, however, the ruby face of King George, under which he had smoked so many a peaceful pipe; but even this was singularly metamorphosed. The red coat was changed for one of blue and buff, a sword was held in the hand instead of a sceptre, the head was decorated with a cocked hat, and underneath was painted in large characters, Gen-ERAL WASHINGTON.

There was, as usual, a crowd of folk about the door, but none that Rip recollected. The very character of the people seemed changed. There was a busy, bustling, disputatious tone about it, instead of the accustomed phlegm and drowsy tranquillity. He looked in vain for the sage Nicholas Vedder, with his broad face, double chin, and fair long pipe, uttering clouds of tobacco-smoke instead of idle speeches; or Van Bummel, the schoolmaster, doling forth the contents of an ancient newspaper. In place of these, a lean, biliouslooking fellow, with his pockets full of handbills, was haranguing vehemently about rights of citizens—elections—members of congress—liberty—Bunker's Hill—heroes of seventy-six—and other words, which were a perfect Babylonish jargon to the bewildered Van Winkle.

The appearance of Rip, with his long grizzled beard, his rusty fowling-piece, his uncouth dress, and an army of women and children at his heels, soon attracted the attention of the tavern politicians. They crowded round him, eyeing

him from head to foot with great curiosity. The orator bustled up to him, and, drawing him partly aside, inquired "on which side he voted?" Rip stared in vacant stupidity Another short but busy little fellow pulled him by the arm. and, rising on tiptoe, inquired in his ear, "Whether he was Federal or Democrat?" Rip was equally at a loss to comprehend the question: when a knowing, self-important old gentleman, in a sharp cocked hat, made his way through the crowd, putting them to the right and left with his elbows as he passed, and planting himself before Van Winkle, with one arm akimbo, the other resting on his cane, his keen eyes and sharp hat penetrating, as it were, into his very soul, demanded in an austere tone, "what brought him to the election with a gun on his shoulder, and a mob at his heels, and whether he meant to breed a riot in the village?"—"Alas! gentlemen," cried Rip, somewhat dismayed, "I am a poor quiet man, a native of the place, and a loyal subject of the king. God bless him!"

Here a general shout burst from the by-standers—"A tory! a tory! a spy! a refugee! hustle him! away with him!" It was with great difficulty that the self-important man in the cocked hat restored order; and, having assumed a tenfold austerity of brow, demanded again of the unknown culprit, what he came there for, and whom he was seeking? The poor man humbly assured him that he meant no harm, but merely came there in search of some of his neighbors, who used to keep about the tayern.

"Well-who are they?-name them."

Rip bethought himself a moment, and inquired, "Where's Nicholas Vedder?"

There was a silence for a little while, when an old man replied, in a thin piping voice, "Nicholas Vedder! why, he is dead and gone these eighteen years! There was a wooden tombstone in the church-yard that used to tell all about him, but that's rotten and gone too."

"Where's Brom Dutcher?"

"Oh, he went off to the army in the beginning of the war; some say he was killed at the storming of Stony Point—others say he was drowned in a squall at the foot of Antony's Nose. I don't know—he never came back again."

"Where's Van Bummel, the schoolmaster?"

"He went off to the wars too, was a great militia general, and is now in congress."

Rip's heart died away at hearing of these sad changes in his home and friends, and finding himself thus alone in the world. Every answer puzzled him too, by treating of such enormous lapses of time, and of matters which he could not understand: war—congress—Stony Point;—he had no courage to ask after any more friends, but cried out in despair, "Does nobody here know Rip Van Winkle?"

"Oh, Rip Van Winkle!" exclaimed two or three, "Oh, to be sure! that's Rip Van Winkle yonder, leaning against the tree."

Rip looked, and beheld a precise counterpart of himself, as he went up the mountain: apparently as lazy, and certainly as ragged. The poor fellow was now completely confounded. He doubted his own identity, and whether he was himself or another man. In the midst of his bewilderment, the man in the cocked hat demanded who he was, and what was his name?

"God knows," exclaimed he, at his wit's end; "I'm not myself—I'm somebody else—that's me yonder—no—that's somebody else got into my shoes—I was myself last night, but I fell asleep on the mountain, and they've changed my gun, and every thing's changed, and I'm changed, and I can't tell what's my name, or who I am!"

The by-standers began now to look at each other, nod, wink significantly, and tap their fingers against their foreheads. There was a whisper also, about securing the gun, and keeping the old fellow from doing mischief, at the very suggestion of which the self-important man in the cocked hat retired with some precipitation. At this critical moment a fresh comely woman pressed through the throng to get a peep at the gray-bearded man. She had a chubby child in her arms, which, frightened at his looks, began to cry. "Hush, Rip," cried she, "hush, you little fool; the old man won't hurt you." The name of the child, the air of the mother, the tone of her voice, all awakened a train of recollections in his mind. "What is your name, my good woman?" asked he.

"Judith Gardenier."

"And your father's name?"

"Ah, poor man, Rip Van Winkle was his name, but it's twenty years since he went away from home with his gun, and never has been heard of since—his dog came home without him; but whether he shot himself, or was carried away by the Indians, nobody can tell. I was then but a little girl."

Rip had but one question more to ask; but he put it with a faltering voice:

"Where's your mother?"

"Oh, she too had died but a short time since; she broke a blood-vessel in a fit of passion at a New-England peddler."

There was a drop of comfort, at least, in this intelligence. The honest man could contain himself no longer. He caught his daughter and her child in his arms. "I am your father!" cried he—"Young Rip Van Winkle once—old Rip Van Winkle now!—Does nobody know poor Rip Van Winkle?"

All stood amazed, until an old woman, tottering out from among the crowd, put her hand to her brow, and peering under it in his face for a moment, exclaimed, "Sure enough! it is Rip Van Winkle—it is himself! Welcome home again, old neighbor—Why, where have you been these twenty long years?"

Rip's story was soon told, for the whole twenty years had been to him but as one night. The neighbors stared when they heard it; some were seen to wink at each other, and put their tongues in their cheeks: and the self-important man in the cocked hat, who, when the alarm was over, had returned to the field, screwed down the corners of his mouth, and shook his head—upon which there was a general shaking of the head throughout the assemblage.

It was determined, however, to take the opinion of old Peter Vanderdonk, who was seen slowly advancing up the road. He was a descendant of the historian of that name, who wrote one of the earliest accounts of the province. Peter was the most ancient inhabitant of the village, and well versed in all the wonderful events and traditions of the neighborhood. He recollected Rip at once, and corroborated his story in the most satisfactory manner. He assured

the company that it was a fact, handed down from his ancestor the historian, that the Kaatskill mountains had always been haunted by strange beings. That it was affirmed that the great Hendrick Hudson, the first discoverer of the river and country, kept a kind of vigil there every twenty years, with his crew of the Half-moon; being permitted in this way to revisit the scenes of his enterprise, and keep a guardian eye upon the river, and the great city called by his name. That his father had once seen them in their old Dutch dresses playing at nine-pins in a hollow of the mountain; and that he himself had heard, one summer afternoon, the sound of their balls, like distant peals of thunder.

To make a long story short, the company broke up, and returned to the more important concerns of the election. Rip's daughter took him home to live with her; she had a snug, well-furnished house, and a stout cheery farmer for a husband, whom Rip recollected for one of the urchins that used to climb upon his back. As to Rip's son and heir, who was the ditto of himself, seen leaning against the tree, he was employed to work on the farm; but evinced an hereditary disposition to attend to anything else but his business.

Rip now resumed his old walks and habits; he soon found many of his former cronies, though all rather the worse for the wear and tear of time; and preferred making friends among the rising generation, with whom he soon grew into great favor.

Having nothing to do at home, and being arrived at that happy age when a man can be idle with impunity, he took his place once more on the bench at the inn door, and was reverenced as one of the patriarchs of the village, and a chronicle of the old times "before the war." It was some time before he could get into the regular track of gossip, or could be made to comprehend the strange events that had taken place during his torpor. How that there had been a revolutionary war—that the country had thrown off the yoke of old England—and that, instead of being a subject of his Majesty George the Third, he was now a free citizen of the United States. Rip, in fact, was no politician; the

changes of states and empires made but little impression on him; but there was one species of despotism under which he had long groaned, and that was—petticoat government. Happily that was at an end; he had got his neck out of the yoke of matrimony, and could go in and out whenever he pleased, without dreading the tyranny of Dame Van Winkle. Whenever her name was mentioned, however, he shook his head, shrugged his shoulders, and cast up his eyes; which might pass either for an expression of resignation to his fate, or joy at his deliverance.

He used to tell his story to every stranger that arrived at Mr. Doolittle's hotel. He was observed, at first, to vary on some points every time he told it, which was, doubtless, owing to his having so recently awaked. It at last settled down precisely to the tale I have related, and not a man, woman, or child in the neighborhood, but knew it by heart. Some always pretended to doubt the reality of it, and insisted that Rip had been out of his head, and that this was one point on which he always remained flighty. The old Dutch inhabitants, however, almost universally gave it full credit. Even to this day they never hear a thunderstorm of a summer afternoon about the Kaatskill, but they say Hendrick Hudson and his crew are at their game of nine-pins; and it is a common wish of all hen-pecked husbands in the neighborhood, when life hangs heavy on their hands, that they might have a quieting draught out of Rip Van Winkle's flagon.

#### NOTE.

The foregoing Tale, one would suspect, had been suggested to Mr. Knickerbocker by a little German superstition about the Emperor Frederick der Rothbart, and the Kyffhäuser mountain: the subjoined note, however, which he had appended to the tale, shows that it is

an absolute fact, narrated with his usual fidelity:

"The story of Rip Van Winkle may seem incredible to many, but nevertheless I give it my full belief, for I know the vicinity of our old Dutch settlements to have been very subject to marvellous events and appearances. Indeed, I have heard many stranger stories than this, in the villages along the Hudson; all of which were too well authenticated to admit of a doubt. I have even talked with Rip Van Winkle myself who, when last I saw him, was a very venerable old man, and so perfectly rational and consistent on every other point, that I think no conscientious person could refuse to take this into

the bargain; nay, I have seen a certificate on the subject taken before a country justice and signed with a cross, in the justice's own handwriting. The story, therefore, is beyond the possibility of doubt.

D. K."

## POSTSCRIPT.

The following are travelling notes from a memorandum-book of Mr. Knickerbocker:

The Kaatsberg, or Catskill mountains, have always been a region full of fable. The Indians considered them the abode of spirits, who influenced the weather, spreading sunshine or clouds over the landscape, and sending good or bad hunting seasons. They were ruled by an old squaw spirit, said to be their mother. She dwelt on the highest peak of the Catskills, and had charge of the doors of day and night to open and shut them at the proper hour. She hung up the new moons in the skies, and cut up the old ones into stars. times of drought, if properly propitiated, she would spin light summer clouds out of cobwebs and morning dew, and send them off from the crest of the mountain, flake after flake, like flakes of carded cotton, to float in the air; until, dissolved by the heat of the sun, they would fall in gentle showers, causing the grass to spring, the fruits to ripen, and the corn to grow an inch an hour. If displeased, however, she would brew up clouds black as ink, sitting in the midst of them like a bottle-bellied spider in the midst of its web; and when these clouds broke, woe betide the valleys!

In old times, say the Indian traditions, there was a kind of Manitou or Spirit, who kept about the wildest recesses of the Catskill Mountains, and took a mischievous pleasure in wreaking all kinds of evils and vexations upon the red men. Sometimes he would assume the form of a bear, a panther, or a deer, lead the bewildered hunter a weary chase through tangled forests and among ragged rocks; and then spring off with a loud ho! ho! leaving him aghast

on the brink of a beetling precipice or raging torrent.

The favorite abode of this Manitou is still shown. It is a great rock or cliff on the loneliest part of the mountains, and, from the flowering vines which clamber about it, and the wild flowers which abound in its neighborhood, is known by the name of the Garden Rock. Near the foot of it is a small lake, the haunt of the solitary bittern, with water-snakes basking in the sun on the leaves of the pond-lilies which lie on the surface. This place was held in great awe by the Indians, insomuch that the boldest hunter would not pursue his game within its precincts. Once upon a time, however. a hunter who had lost his way, penetrated to the garden rock, where he beheld a number of gourds placed in the crotches of trees. One of these he seized and made off with it, but in the hurry of his retreat he let it fall among the rocks, when a great stream gushed forth, which washed him away and swept him down precipices, where he was dashed to pieces, and the stream made its way to the Hudson, and continues to flow to the present day; being the identical stream known by the name of the Kaaters-kill.

# THE LEGEND OF SLEEPY HOLLOW

FOUND AMONG THE PAPERS OF THE LATE DIEDRICH KNICKERBOCKER

A pleasing land of drowsy head it was,
Of dreams that wave before the half-shut eye;
And of gay castles in the clouds that pass,
For ever flushing round a summer sky.

CASTLE OF INDOLENCE.

N the bosom of one of those spacious coves which indent the eastern shore of the Hudson, at that broad - expansion of the river denominated by the ancient Dutch navigators the Tappan Zee, and where they always prudently shortened sail, and implored the protection of St. Nicholas when they crossed, there lies a small market-town or rural port, which by some is called Greensburgh, but which is more generally and properly known by the name of Tarry Town. This name was given, we are told, in former days, by the good housewives of the adjacent country, from the inveterate propensity of their husbands to linger about the village tavern on market days. Be that as it may, I do not vouch for the fact, but merely advert to it, for the sake of being precise and authentic. Not far from this village, perhaps about two miles, there is a little valley, or rather lap of land, among high hills, which is one of the quietest places in the whole world. A small brook glides through it, with just murmur enough to lull one to repose; and the occasional whistle of a quail, or tapping of a woodpecker, is almost the only sound that ever breaks in upon the uniform tranquillity.

I recollect that, when a stripling, my first exploit in squirrel-shooting was in a grove of tall walnut-trees that shades one side of the valley. I had wandered into it at noon time, when all nature is peculiarly quiet, and was

startled by the roar of my own gun, as it broke the Sabbath stillness around, and was prolonged and reverberated by the angry echoes. If ever I should wish for a retreat, whither I might steal from the world and its distractions, and dream quietly away the remnant of a troubled life, I know of none more promising than this little valley.

From the listless repose of the place, and the peculiar character of its inhabitants, who are descendants from the original Dutch settlers, this sequestered glen has long been known by the name of SLEEPY HOLLOW, and its rustic lads are called the Sleepy Hollow Boys throughout all the neighboring country. A drowsy, dreamy influence seems to hang over the land, and to pervade the very atmosphere. Some say that the place was bewitched by a high German doctor. during the early days of the settlement; others, that an old Indian chief, the prophet or wizard of his tribe, held his pow-wows there before the country was discovered by Master Hendrick Hudson. Certain it is, the place still continues under the sway of some witching power, that holds a spell over the minds of the good people, causing them to walk in a continual reverie. They are given to all kinds of marvellous beliefs; are subject to trances and visions; and frequently see strange sights, and hear music and voices in the air. The whole neighborhood abounds with local tales, haunted spots, and twilight superstitions; stars shoot and meteors glare oftener across the valley than in any other part of the country, and the nightmare, with her whole nine fold, seems to make it the favorite scene of her gambols.

The dominant spirit, however, that haunts this enchanted region, and seems to be commander-in-chief of all the powers of the air, is the apparition of a figure on horseback without a head. It is said by some to be the ghost of a Hessian trooper, whose head had been carried away by a cannon-ball, in some nameless battle during the revolutionary war; and who is ever and anon seen by the country folk hurrying along in the gloom of night, as if on the wings of the wind. His haunts are not confined to the valley, but extend at times to the adjacent roads, and especially to the vicinity of a church at no great distance. Indeed, certain of

the most authentic historians of those parts, who have been careful in collecting and collating the floating facts concerning this spectre, allege that the body of the trooper, having been buried in the church-yard, the ghost rides forth to the scene of battle in nightly quest of his head; and that the rushing speed with which he sometimes passes along the Hollow, like a midnight blast, is owing to his being belated, and in a hurry to get back to the church-yard before day-break.

Such is the general purport of this legendary superstition, which has furnished materials for many a wild story in that region of shadows; and the spectre is known, at all the country firesides, by the name of the Headless Horseman of Sleepy Hollow.

It is remarkable that the visionary propensity I have mentioned is not confined to the native inhabitants of the valley, but is unconsciously imbibed by every one who resides there for a time. However wide awake they may have been before they entered that sleepy region, they are sure, in a little time, to inhale the witching influence of the air, and begin to grow imaginative—to dream dreams, and see apparitions.

I mention this peaceful spot with all possible laud; for it is in such little retired Dutch valleys, found here and there embosomed in the great State of New-York, that population, manners, and customs, remain fixed; while the great torrent of migration and improvement, which is making such incessant changes in other parts of this restless country, sweeps by them unobserved. They are like those little nooks of still water which border a rapid stream; where we may see the straw and bubble riding quietly at anchor, or slowly revolving in their mimic harbor, undisturbed by the rush of the passing current. Though many years have elapsed since I trod the drowsy shades of Sleepy Hollow, yet I question whether I should not still find the same trees and the same families vegetating in its sheltered bosom.

In this by-place of nature, there abode, in a remote period of American history, that is to say, some thirty years since, a worthy wight of the name of Ichabod Crane; who so-I-11

journed, or, as he expressed it, "tarried," in Sleepy Hollow, for the purpose of instructing the children of the vicinity. He was a native of Connecticut; a State which supplies the Union with pioneers for the mind as well as for the forest, and sends forth yearly its legions of frontier woodsmen and country schoolmasters. The cognomen of Crane was not inapplicable to his person. He was tall, but exceedingly lank, with narrow shoulders, long arms and legs, hands that dangled a mile out of his sleeves, feet that might have served for shovels, and his whole frame most loosely hung together. His head was small, and flat at top, with huge ears, large green glassy eyes, and a long snipe nose, so that it looked like a weather-cock, perched upon his spindle neck, to tell which way the wind blew. To see him striding along the profile of a hill on a windy day, with his clothes bagging and fluttering about him one might have mistaken him for the genius of famine descending upon the earth, or some scarecrow eloped from a cornfield.

His school-house was a low building of one large room, rudely constructed of logs; the windows partly glazed, and partly patched with leaves of old copy-books. It was most ingeniously secured at vacant hours, by a withe twisted in the handle of the door, and stakes set against the window shutters; so that, though a thief might get in with perfect ease, he would find some embarrassment in getting out; an idea most probably borrowed by the architect, Yost Van Houton, from the mystery of an eel-pot. The school-house stood in a rather lonely but pleasant situation just at the foot of a woody hill, with a brook running close by, and a formidable birch tree growing at one end of it. From hence the low murmur of his pupils' voices, conning over their lessons, might be heard in a drowsy summer's day, like the hum of a bee-hive; interrupted now and then by the authoritative voice of the master, in the tone of menace or command; or, peradventure, by the appalling sound of the birch, as he urged some tardy loiterer along the flowery path of knowledge. Truth to say, he was a conscientious man, and ever bore in mind the golden maxim, "Spare the rod and spoil the child."-Ichabod Crane's scholars certainly were not spoiled.

I would not have it imagined, however, that he was one of those cruel potentates of the school, who joy in the smart of their subjects; on the contrary, he administered justice with discrimination rather than severity; taking the burthen off the backs of the weak, and laying it on those of the strong. Your mere puny stripling, that winced at the least flourish of the rod, was passed by with indulgence; but the claims of justice were satisfied by inflicting a double portion on some little, tough, wrong-headed, broad-skirted Dutch urchin, who sulked and swelled and grew dogged and sullen beneath the birch. All this he called "doing his duty by their parents;" and he never inflicted a chastisement without following it by the assurance, so consolatory to the smarting urchin, that "he would remember it, and thank him for it the longest day he had to live."

When school hours were over, he was even the companion and playmate of the larger boys; and on holiday afternoons would convoy some of the smaller ones home, who happened to have pretty sisters, or good housewives for mothers, noted for the comforts of the cupboard. Indeed it behooved him to keep on good terms with his pupils. The revenue arising from his school was small, and would have been scarcely sufficient to furnish him with daily bread, for he was a huge feeder, and though lank, had the dilating powers of an anaconda; but to help out his maintenance, he was, according to country custom in those parts, boarded and lodged at the houses of the farmers, whose children he instructed. With these he lived successively a week at a time; thus going the rounds of the neighborhood, with all his worldly effects tied up in a cotton handkerchief.

That all this might not be too onerous on the purses of his rustic patrons, who are apt to consider the costs of schooling a grievous burden, and schoolmasters as mere drones, he had various ways of rendering himself both useful and agreeable. He assisted the farmers occasionally in the lighter labors of their farms; helped to make hay; mended the fences; took the horses to water; drove the cows from pasture; and cut wood for the winter fire. He laid aside, too, all the dominant dignity and absolute sway with which he lorded it in his little empire, the school, and

became wonderfully gentle and ingratiating. He found favor in the eyes of the mothers, by petting the children, particularly the youngest; and like the lion bold, which whilom so magnanimously the lamb did hold, he would sit with a child on one knee, and rock a cradle with his foot for whole hours together.

In addition to his other vocations, he was the singing-master of the neighborhood, and picked up many bright shillings by instructing the young folks in psalmody. It was a matter of no little vanity to him, on Sundays, to take his station in front of the church gallery, with a band of chosen singers; where, in his own mind, he completely carried away the palm from the parson. Certain it is, his voice resounded far above all the rest of the congregation; and there are peculiar quavers still to be heard in that church, and which may even be heard half a mile off, quite to the opposite side of the mill-pond, on a still Sunday morning, which are said to be legitimately descended from the nose of Ichabod Crane. Thus, by divers little make-shifts in that ingenious way which is commonly denominated "by hook and by crook," the worthy pedagogue got on tolerably enough, and was thought, by all who understood nothing of the labor of headwork, to have a wonderfully easy life of it.

The schoolmaster is generally a man of some importance in the female circle of a rural neighborhood; being considered a kind of idle gentlemanlike personage, of vastly superior taste and accomplishments to the rough country swains, and, indeed, inferior in learning only to the parson. His appearance, therefore, is apt to occasion some little stir at the tea-table of a farmhouse, and the addition of a supernumerary dish of cakes or sweetmeats, or, peradventure, the parade of a silver tea-pot. Our man of letters, therefore, was peculiarly happy in the smiles of all the country damsels. How he would figure among them in the churchyard, between services on Sundays! gathering grapes for them from the wild vines that overrun the surrounding trees; reciting for their amusement all the epitaphs on the tombstones; or sauntering, with a whole bevy of them, along the banks of the adjacent mill-pond; while the more bashful

country bumpkins hung sheepishly back, envying his superior elegance and address.

From his half itinerant life, also, he was a kind of travelling gazette, carrying the whole budget of local gossip from house to house; so that his appearance was always greeted with satisfaction. He was, moreover, esteemed by the women as a man of great erudition, for he had read several books quite through, and was a perfect master of Cotton Mather's history of New England Witchcraft, in which, by the way, he most firmly and potently believed.

He was, in fact, an odd mixture of small shrewdness and simple credulity. His appetite for the marvellous, and his powers of digesting it, were equally extraordinary; and both had been increased by his residence in this spellbound region. No tale was too gross or monstrous for his capacious swallow. It was often his delight, after his school was dismissed in the afternoon, to stretch himself on the rich bed of clover. hordering the little brook that whimpered by his schoolhouse, and there con over old Mather's direful tales, until the gathering dusk of the evening made the printed page a mere mist before his eyes. Then, as he wended his way, by swamp and stream and awful woodland, to the farmhouse where he happened to be quartered, every sound of nature, at that witching hour, fluttered his excited imagination: the moan of the whip-poor-will from the hill-side; the boding cry of the tree-toad, that harbinger of storm; the dreary hooting of the screech-owl, or the sudden rustling in the thicket of birds frightened from their roost. The fire-flies, too, which sparkled most vividly in the darkest places, now and then startled him, as one of uncommon brightness would stream across his path; and if, by chance, a huge blockhead of a beetle came winging his blundering flight against him, the poor varlet was ready to give up the ghost, with the idea that he was struck with a witch's token. His only resource on such occasions, either to drown thought, or drive away evil spirits, was to sing psalm tunes;—and the good people of Sleepy Hollow, as they sat by their doors of an evening, were often filled with awe, at hearing his

 $<sup>^{1}</sup>$  The whip-poor-will is a bird which is only heard at night. It receives its name from its note, which is thought to resemble those words. .

nasal melody, "in linked sweetness long drawn out," floating from the distant hill, or along the dusky road.

Another of his sources of fearful pleasure was, to pass long winter evenings with the old Dutch wives, as they sat spinning by the fire, with a row of apples roasting and spluttering along the hearth, and listen to their marvellous tales of ghosts and goblins, and haunted fields, and haunted brooks, and haunted bridges, and haunted houses, and particularly of the headless horseman, or galloping Hessian of the Hollow, as they sometimes called him. He would delight them equally by his anecdotes of witchcraft, and of the direful omens and portentous sights and sounds in the air, which prevailed in the earlier times of Connecticut; and would frighten them wofully with speculations upon comets and shooting stars; and with the alarming fact that the world did absolutely turn round, and that they were half the time topsy-turvy!

But if there was a pleasure in all this, while snugly cuddling in the chimney corner of a chamber that was all of a ruddy glow from the crackling wood fire, and where, of course, no spectre dared to show his face, it was dearly purchased by the terrors of his subsequent walk homewards. What fearful shapes and shadows beset his path amidst the dim and ghastly glare of a snowy night!-With what wistful look did he eye every trembling ray of light streaming across the waste fields from some distant window!--How often was he appalled by some shrub covered with snow. which, like a sheeted spectre, beset his very path!-How often did he shrink with curdling awe at the sound of his own steps on the frosty crust beneath his feet; and dread to look over his shoulder, lest he should behold some uncouth being tramping close behind him!-and how often was he thrown into complete dismay by some rushing blast, howling among the trees, in the idea that it was the Galloping Hessian on one of his nightly scourings!

All these, however, were mere terrors of the night, phantoms of the mind that walk in darkness; and though he had seen many spectres in his time, and been more than once beset by Satan in divers shapes, in his lonely perambulations, yet daylight put an end to all these evils; and he would

have passed a pleasant life of it, in despite of the devil and all his works, if his path had not been crossed by a being that causes more perplexity to mortal man than ghosts, goblins, and the whole race of witches put together, and that was—a woman.

Among the musical disciples who assembled, one evening in each week, to receive his instructions in psalmody, was Katrina Van Tassel, the daughter and only child of a substantial Dutch farmer. She was a blooming lass of fresh eighteen; plump as a partridge; ripe and melting and rosy cheeked as one of her father's peaches, and universally famed, not merely for her beauty, but her vast expectations. She was withal a little of a coquette, as might be perceived even in her dress, which was a mixture of ancient and modern fashions, as most suited to set off her charms. She wore the ornaments of pure yellow gold, which her great-great-grandmother had brought over from Saardam, the tempting stomacher of the olden time; and withal a provokingly short petticoat, to display the prettiest foot and ankle in the country round.

Ichabod Crane had a soft and foolish heart towards the sex; and it is not to be wondered at, that so tempting a morsel soon found favor in his eyes; more especially after he had visited her in her paternal mansion. Old Baltus Van Tassel was a perfect picture of a thriving, contented, liberalhearted farmer. He seldom, it is true, sent either his eves or his thoughts beyond the boundaries of his own farm; but within those every thing was snug, happy, and wellconditioned. He was satisfied with his wealth, but not proud of it; and piqued himself upon the hearty abundance. rather than the style in which he lived. His stronghold was situated on the banks of the Hudson, in one of those green. sheltered, fertile nooks, in which the Dutch farmers are so fond of nestling. A great elm-tree spread its broad branches over it; at the foot of which bubbled up a spring of the softest and sweetest water, in a little well, formed of a barrel; and then stole sparkling away through the grass, to a neighboring brook, that bubbled along among alders and dwarf willows. Hard by the farmhouse was a vast barn. that might have served for a church; every window and

crevice of which seemed bursting forth with the treasures of the farm; the flail was busily resounding within it from morning to night; swallows and martins skimmed twittering about the eaves: and rows of pigeons, some with one eye turned up, as if watching the weather, some with their heads under their wings, or buried in their bosoms, and others swelling, and cooing, and bowing about their dames, were enjoying the sunshine on the roof. Sleek unwieldy porkers were grunting in the repose and abundance of their pens; whence sallied forth, now and then, troops of sucking pigs, as if to snuff the air. A stately squadron of snowy geese were riding in an adjoining pond, convoying whole fleets of ducks; regiments of turkeys were gobbling through the farmyard, and guinea fowls fretting about it, like illtempered housewives, with their peevish discontented cry. Before the barn door strutted the gallant cock, that pattern of a husband, a warrior, and a fine gentleman, clapping his burnished wings, and crowing in the pride and gladness of his heart-sometimes tearing up the earth with his feet, and then generously calling his ever-hungry family of wives and children to enjoy the rich morsel which he had discovered.

The pedagogue's mouth watered, as he looked upon this sumptuous promise of luxurious winter fare. In his devouring mind's eye, he pictured to himself every roasting-pig running about with a pudding in his belly, and an apple in his mouth; the pigeons were snugly put to bed in a comfortable pie, and tucked in with a coverlet of crust; the geese were swimming in their own gravy; and the ducks pairing cosily in dishes, like snug married couples, with a decent competency of onion sauce. In the porkers he saw carved out the future sleek side of bacon, and juicy relishing ham; not a turkey but he beheld daintily trussed up, with its gizzard under its wing, and, peradventure, a necklace of savory sausages; and even bright chanticleer himself lay sprawling on his back, in a side-dish, with uplifted claws, as if craving that quarter which his chivalrous spirit disdained to ask while living.

As the enraptured Ichabod fancied all this, and as he rolled his great green eyes over the fat meadow-lands, the

rich fields of wheat, of rye, of buckwheat, and Indian corn, and the orchards burthened with ruddy fruit, which surrounded the warm tenement of Van Tassel, his heart yearned after the damsel who was to inherit these domains, and his imagination expanded with the idea, how they might be readily turned into cash, and the money invested in immense tracts of wild land, and shingle palaces in the wilderness. Nay, his busy fancy already realized his hopes, and presented to him the blooming Katrina, with a whole family of children, mounted on the top of a wagon loaded with household trumpery, with pots and kettles dangling beneath; and he beheld himself bestriding a pacing mare, with a colt at her heels, setting out for Kentucky, Tennessee, or the Lord knows where.

When he entered the house the conquest of his heart was complete. It was one of those spacious farmhouses, with high-ridged, but lowly-sloping roofs, built in the style handed down from the first Dutch settlers: the low projecting eaves forming a piazza along the front, capable of being closed up in bad weather. Under this were hung flails, harness, various utensils of husbandry, and nets for fishing in the neighboring river. Benches were built along the sides for summer use: and a great spinning-wheel at one end, and a churn at the other, showed the various uses to which this important porch might be devoted. From this piazza the wondering Ichabod entered the hall, which formed the centre of the mansion and the place of usual residence. Here, rows of resplendent pewter, ranged on a long dresser, dazzled his eyes. In one corner stood a huge bag of wool ready to be spun; in another a quantity of linsey-woolsey just from the loom; ears of Indian corn, and strings of dried apples and peaches, hung in gay festoons along the walls, mingled with the gaud of red peppers; and a door left ajar gave him a peep into the best parlor, where the clawfooted chairs, and dark mahogany tables, shone like mirrors; and irons, with their accompanying shovel and tongs, glistened from their covert of asparagus tops; mock-oranges and conch-shells decorated the mantelpiece; strings of various colored birds' eggs were suspended above it: a great ostrich egg was hung from the centre of the room, and a corner cupboard, knowingly left open, displayed immense treasures of old silver and well-mended china.

From the moment Ichabod laid his eyes upon these regions of delight, the peace of his mind was at an end, and his only study was how to gain the affections of the peerless daughter of Van Tassel. In this enterprise, however, he had more real difficulties than generally fell to the lot of a knighterrant of vore, who seldom had any thing but giants, enchanters, fiery dragons, and such like easily-conquered adversaries, to contend with: and had to make his way merely through gates of iron and brass, and walls of adamant, to the castle keep, where the lady of his heart was confined; all which he achieved as easily as a man would carve his way to the centre of a Christmas pie; and then the lady gave him her hand as a matter of course. Ichabod, on the contrary, had to win his way to the heart of a country coquette, beset with a labyrinth of whims and caprices, which were for ever presenting new difficulties and impediments; and he had to encounter a host of fearful adversaries of real flesh and blood, the numerous rustic admirers, who beset every portal to her heart; keeping a watchful and angry eye upon each other, but ready to fly out in the common cause against any new competitor.

Among these the most formidable was a burly, roaring, roystering blade, of the name of Abraham, or, according to the Dutch abbreviation, Brom Van Brunt, the hero of the country round, which rang with his feats of strength and hardihood. He was broad-shouldered and double-jointed, with short curly black hair, and a bluff, but not unpleasant countenance, having a mingled air of fun and arrogance. From his Herculean frame and great powers of limb, he had received the nickname of Brom Bones, by which he was universally known. He was famed for great knowledge and skill in horsemanship, being as dexterous on horseback as a Tartar,

He was foremost at all races and cock-fights; and, with the ascendency which bodily strength acquires in rustic life, was the umpire in all disputes, setting his hat on one side, and giving his decisions with an air and tone admitting of no gainsay or appeal. He was always ready for either a

fight or a frolic; but had more mischief than ill-will in his composition; and, with all his overbearing roughness, there was a strong dash of waggish good humor at bottom. He had three or four boon companions, who regarded him as their model, and at the head of whom he scoured the country, attending every scene of feud or merriment for miles round. In cold weather he was distinguished by a fur cap, surmounted with a flaunting fox's tail: and when the folks at a country gathering descried this well-known crest at a distance, whisking about among a squad of hard riders, they always stood by for a squall. Sometimes his crew would be heard dashing along past the farmhouses at midnight, with whoop and halloo, like a troop of Don Cossacks; and the old dames, startled out of their sleep, would listen for a moment till the hurry-scurry had clattered by, and then exclaim, "Ay, there goes Brom Bones and his gang!" The neighbors looked upon him with a mixture of awe, admiration, and good will; and when any madcap prank, or rustic brawl, occurred in the vicinity, always shook their heads, and warranted Brom Bones was at the bottom of it.

This rantipole hero had for some time singled out the blooming Katrina for the object of his uncouth gallantries, and though his amorous toyings were something like the gentle caresses and endearments of a bear, yet it was whispered that she did not altogether discourage his hopes. Certain it is, his advances were signals for rival candidates to retire, who felt no inclination to cross a lion in his amours; insomuch, that when his horse was seen tied to Van Tassel's paling, on a Sunday night, a sure sign that his master was courting, or, as it is termed "sparking," within, all other suitors passed by in despair, and carried the war into other quarters.

Such was the formidable rival with whom Ichabod Crane had to contend, and, considering all things, a stouter man than he would have shrunk from the competition, and a wiser man would have despaired. He had, however, a happy mixture of pliability and perseverance in his nature; he was in form and spirit like a supple-jack—yielding, but tough; though he bent, he never broke; and though he bowed beneath the slightest pressure, yet, the moment it was

away—jerk! he was as erect, and carried his head as high as ever.

To have taken the field openly against his rival would have been madness; for he was not a man to be thwarted in his amours, any more than that stormy lover. Achilles. Ichabod, therefore, made his advances in a quiet and gentlyinsinuating manner. Under cover of his character of singing-master, he made frequent visits at the farmhouse: not that he had any thing to apprehend from the meddlesome interference of parents, which is so often a stumbling-block in the path of lovers. Balt Van Tassel was an easy indulgent soul; he loved his daughter better even than his pipe. and, like a reasonable man and an excellent father, let her have her way in every thing. His notable little wife, too, had enough to do to attend to her housekeeping and manage her poultry; for, as she sagely observed, ducks and geese are foolish things, and must be looked after, but girls can take care of themselves. Thus while the busy dame bustled about the house, or plied her spinning-wheel at one end of the piazza, honest Balt would sit smoking his evening pipe at the other, watching the achievements of a little wooden warrior, who, armed with a sword in each hand, was most valiantly fighting the wind on the pinnacle of the barn. In the mean time, Ichabod would carry on his suit with the daughter by the side of the spring under the great elm, or sauntering along in the twilight, that hour so favorable to the lover's eloquence.

I profess not to know how women's hearts are wooed and won. To me they have always been matters of riddle and admiration. Some seem to have but one vulnerable point, or door of access; while others have a thousand avenues, and may be captured in a thousand different ways. It is a great triumph of skill to gain the former, but a still greater proof of generalship to maintain possession of the latter, for the man must battle for his fortress at every door and window. He who wins a thousand common hearts is therefore entitled to some renown; but he who keeps undisputed sway over the heart of a coquette, is indeed a hero. Certain it is, this was not the case with the redoubtable Brom Bones; and from the moment Ichabod Crane made his ad-

vances, the interests of the former evidently declined; his horse was no longer seen tied at the palings on Sunday nights, and a deadly feud gradually arose between him and the preceptor of Sleepy Hollow.

Brom, who had a degree of rough chivalry in his nature. would fain have carried matters to open warfare, and have settled their pretensions to the lady, according to the mode of those most concise and simple reasoners, the knightserrant of yore-by single combat; but Ichabod was too conscious of the superior might of his adversary to enter the lists against him: he had overheard a boast of Bones, that he would "double the schoolmaster up, and lay him on a shelf of his own school-house;" and he was to wary to give him an opportunity. There was something extremely provoking in this obstinately pacific system; it left Brom no alternative but to draw upon the funds of rustic waggery in his disposition, and to play off boorish practical jokes upon his rival. Ichabod became the object of whimsical persecution to Bones, and his gang of rough riders. They harried his hitherto peaceful domains; smoked out his singing school, by stopping up the chimney; broke into the school-house at night, in spite of its formidable fastenings of withe and window stakes, and turned every thing topsyturvy; so that the poor schoolmaster began to think all the witches in the country held their meetings there. But what was still more annoying, Brom took all opportunities of turning him into ridicule in presence of his mistress, and had a scoundrel dog whom he taught to whine in the most ludicrous manner, and introduced as a rival of Ichabod's to instruct her in psalmody.

In this way matters went on for some time, without producing any material effect on the relative situation of the contending powers. On a fine autumnal afternoon, Ichabod, in pensive mood, sat enthroned on the lofty stool whence he usually watched all the concerns of his little literary realm. In his hand he swayed a ferule, that sceptre of despotic power; the birch of justice reposed on three nails, behind the throne, a constant terror to evil doers; while on the desk before him might be seen sundry contraband articles and prohibited weapons, detected upon the persons of idle

urchins; such as half-munched apples, popular, whirligies, fly-cages, and whole legions of rampant little paper gamecocks. Apparently there had been some appalling act of justice recently inflicted, for his scholars were all busily intent upon their books, or slyly whispering behind them with one eye kept upon the master; and a kind of buzzing stillness reigned throughout the school-room. It was suddenly interrupted by the appearance of a negro, in towcloth jacket and trowsers, a round-crowned fragment of a hat, like the cap of Mercury, and mounted on the back of a ragged, wild, half-broken colt, which he managed with a rope by way of halter. He came clattering up to the school door with an invitation to Ichabod to attend a merry-making or "quilting frolic," to be held that evening at Mynheer Van Tassel's; and having delivered his message with that air of importance, and effort at fine language, which a negro is apt to display on petty embassies of that kind, he dashed over the brook, and was seen scampering away up the hollow, full of the importance and hurry of his mission.

All was now bustle and hubbub in the late quiet school-room. The scholars were hurried through their lessons, without stopping at trifles; those who were nimble skipped over half with impunity, and those who were tardy, had a smart application now and then in the rear, to quicken their speed, or help them over a tall word. Books were flung aside without being put away on the shelves, inkstands were overturned, benches thrown down, and the whole school was turned loose an hour before the usual time, bursting forth like a legion of young imps, yelping and racketing about the green, in joy at their early emancipation.

The gallant Ichabod now spent at least an extra half hour at his toilet, brushing and furbishing up his best, and indeed only suit of rusty black, and arranging his looks by a bit of broken looking-glass, that hung up in the school-house. That he might make his appearance before his mistress in the true style of a cavalier, he borrowed a horse from the farmer with whom he was domiciliated, a choleric old Dutchman, of the name of Hans Van Ripper, and, thus gallantly mounted, issued forth, like a knight-errant in quest

of adventures. But it is meet I should, in the true spirit of romantic story, give some account of the looks and equipments of my hero and his steed. The animal he bestrode was a broken-down plough-horse, that had outlived almost every thing but his viciousness. He was gaunt and shagged, with a ewe neck and a head like a hammer; his rusty mane and tail were tangled and knotted with burrs; one eye had lost its pupil, and was glaring and spectral; but the other had the gleam of a genuine devil in it. Still he must have had fire and mettle in his day, if we may judge from the name he bore of Gunpowder. He had, in fact, been a favorite steed of his master's, the choleric Van Ripper, who was a furious rider, and had infused, very probably, some of his own spirit into the animal; for, old and broken-down as he looked, there was more of the lurking devil in him than in any young filly in the country.

Ichabod was a suitable figure for such a steed. He rode with short stirrups, which brought his knees nearly up to the pommel of the saddle; his sharp elbows stuck out like grasshoppers'; he carried his whip perpendicularly in his hand, like a sceptre, and, as his horse jogged on, the motion of his arms was not unlike the flapping of a pair of wings. A small wool hat rested on the top of his nose, for so his scanty strip of forehead might be called; and the skirts of his black coat fluttered out almost to the horse's tail. Such was the appearance of Ichabod and his steed, as they shambled out of the gate of Hans Van Ripper, and it was altogether such an apparition as is seldom to be met with in broad daylight.

It was, as I have said, a fine autumnal day, the sky was clear and serene, and nature wore that rich and golden livery which we always associate with the idea of abundance. The forests had put on their sober brown and yellow, while some trees of the tenderer kind had been nipped by the frosts into brilliant dyes of orange, purple, and scarlet. Streaming files of wild ducks began to make their appearance high in the air; the bark of the squirrel might be heard from the groves of beech and hickory nuts, and the pensive whistle of the quail at intervals from the neighboring stubble-field.

The small birds were taking their farewell banquets. In the fulness of their revelry, they fluttered, chirping and frolicking, from bush to bush, and tree to tree, capricious from the very profusion and variety around them. There was the honest cock-robin, the favorite game of stripling sportsmen, with its loud querulous note; and the twittering blackbirds flying in sable clouds; and the golden-winged woodpecker, with his crimson crest, his broad black gorget, and splendid plumage; and the cedar bird, with its red-tipt wings and yellow-tipt tail, and its little monteiro cap of feathers; and the blue-jay, that noisy coxcomb, in his gay light-blue coat and white under-clothes; screaming and chattering, nodding and bobbing and bowing, and pretending to be on good terms with every songster of the grove.

As Ichabod jogged slowly on his way, his eye, ever open to every symptom of culinary abundance, ranged with delight over the treasures of jolly autumn. On all sides he beheld vast store of apples; some hanging in oppressive opulence on the trees; some gathered into baskets and barrels for the market; others heaped up in rich piles for the cider-press. Farther on he beheld great fields of Indian corn, with its golden ears peeping from their leafy coverts, and holding out the promise of cakes and hasty pudding; and the yellow pumpkins lying beneath them, turning up their fair round bellies to the sun, and giving ample prospects of the most luxurious of pies; and anon he passed the fragrant buckwheat fields, breathing the odor of the beehive, and as he beheld them, soft anticipations stole over his mind of dainty slapjacks, well buttered, and garnished with honey or treacle, by the delicate little dimpled hand of Katrina Van Tassel.

Thus feeding his mind with many sweet thoughts and "sugared suppositions," he journeyed along the sides of a range of hills which look out upon some of the goodliest scenes of the mighty Hudson. The sun gradually wheeled his broad disk down into the west. The wide bosom of the Tappan Zee lay motionless and glassy, excepting that here and there a gentle undulation waved and prolonged the blue shadow of the distant mountain. A few amber clouds floated in the sky, without a breath of air to move them. The horizon

was of a fine golden tint, changing gradually into a pure apple green, and from that into the deep blue of the midheaven. A slanting ray lingered on the woody crests of the precipices that overhung some parts of the river, giving greater depth to the dark-gray and purple of their rocky sides. A sloop was loitering in the distance, dropping slowly down with the tide, her sail hanging uselessly against the mast; and as the reflection of the sky gleamed along the still water, it seemed as if the vessel was suspended in the air.

It was toward evening that Ichabod arrived at the castle of the Heer Van Tassel, which he found thronged with the pride and flower of the adjacent country. Old farmers, a spare leathern-faced race, in homespun coats and breeches, blue stockings, huge shoes, and magnificent pewter buckles. Their brisk withered little dames, in close crimped caps, long-waisted short-gowns, home-spun petticoats, with scissors and pincushions, and gay calico pockets hanging on the outside. Buxom lasses, almost as antiquated as their mothers, excepting where a straw hat, a fine ribbon, or perhaps a white frock, gave symptoms of city innovation. The sons, in short square-skirted coats with rows of stupendous brass buttons, and their hair generally queued in the fashion of the times, especially if they could procure an eel-skin for the purpose, it being esteemed, throughout the country, as a potent nourisher and strengthener of the hair.

Brom Bones, however, was the hero of the scene, having come to the gathering on his favorite steed Daredevil, a creature, like himself, full of mettle and mischief, and which no one but himself could manage. He was, in fact, noted for preferring vicious animals, given to all kinds of tricks, which kept the rider in constant risk of his neck, for he held a tractable well-broken horse as unworthy of a lad of spirit.

Fain would I pause to dwell upon the world of charms that burst upon the enraptured gaze of my hero, as he entered the state parlor of Van Tassel's mansion. Not those of the bevy of buxom lasses, with their luxurious display of red and white; but the ample charms of a genuine Dutch country tea-table, in the sumptuous time of autumn. Such heaped-up platters of cakes of various and almost indescrib-

able kinds, known only to experienced Dutch housewives! There was the doughty dough-nut, the tenderer oly koek, and the crisp and crumbling cruller: sweet cakes and short cakes, ginger cakes and honey cakes, and the whole family of cakes. And then there were apple pies and peach pies and pumpkin pies; besides slices of ham and smoked beef; and moreover delectable dishes of preserved plums, and peaches, and pears, and quinces; not to mention broiled shad and roasted chickens; together with bowls of milk and cream, all mingled higgledy-piggledly, pretty much as I have enumerated them, with the motherly tea-pot sending up its clouds of vapor from the midst-Heaven bless the mark! I want breath and time to discuss this banquet as it deserves, and am too eager to get on with my story. Happily, Ichabod Crane was not in so great a hurry as his historian, but did ample justice to every dainty.

He was a kind and thankful creature, whose heart dilated in proportion as his skin was filled with good cheer; and whose spirits rose with eating as some men's do with drink. He could not help, too, rolling his large eyes round him as he ate, and chuckling with the possibility that he might one day be lord of all this scene of almost unimaginable luxury and splendor. Then, he thought, how soon he'd turn his back upon the old school-house; snap his fingers in the face of Hans Van Ripper, and every other niggardly patron, and kick any itinerant pedagogue out of doors that should dare to call him comrade!

Old Baltus Van Tassel moved about among his guests with a face dilated with content and good humor, round and jolly as the harvest moon. His hospitable attentions were brief, but expressive, being confined to a shake of the hand, a slap on the shoulder, a loud laugh, and a pressing invitation to "fall to, and help themselves."

And now the sound of the music from the common room, or hall, summoned to the dance. The musician was an old grayheaded negro, who had been the itinerant orchestra of the neighborhood for more than half a century. His instrument was as old and battered as himself. The greater part of the time he scraped on two or three strings, accompanying every movement of the bow with a motion of the head;

bowing almost to the ground, and stamping with his foot whenever a fresh couple were to start.

Ichabod prided himself upon his dancing as much as upon his vocal powers. Not a limb, not a fibre about him was idle; and to have seen his loosely hung frame in full motion, and clattering about the room, you would have thought Saint Vitus himself, that blessed patron of the dance, was figuring before you in person. He was the admiration of all the negroes; who, having gathered, of all ages and sizes, from the farm and the neighborhood, stood forming a pyramid of shining black faces at every door and window, gazing with delight at the scene, rolling their white eye-balls, and showing grinning rows of ivory from ear to ear. How could the flogger of urchins be otherwise than animated and joyous? the lady of his heart was his partner in the dance, and smiling graciously in reply to all his amorous oglings; while Brom Bones, sorely smitten with love and jealousy, sat brooding by himself in one corner.

When the dance was at an end, Ichabod was attracted to a knot of the sager folks, who, with old Van Tassel, sat smoking at one end of the piazza, gossiping over former times, and drawing out long stories about the war.

This neighborhood, at the time of which I am speaking, was one of those highly-favored places which abound with chronicle and great men. The British and American line had run near it during the war; it had, therefore, been the scene of marauding, and infested with refugees, cow-boys, and all kinds of border chivalry. Just sufficient time had elapsed to enable each story-teller to dress up his tale with a little becoming fiction, and, in the indistinctness of his recollection, to make himself the hero of every exploit.

There was the story of Doffue Martling, a large blue-bearded Dutchman, who had nearly taken a British frigate with an old iron nine-pounder from a mud breastwork, only that his gun burst at the sixth discharge. And there was an old gentleman who shall be nameless, being too rich a mynheer to be lightly mentioned, who, in the battle of White-plains, being an excellent master of defence, parried a musket ball with a small sword, insomuch that he absolutely felt it whiz round the blade, and glance off at the hilt: in proof of

which, he was ready at any time to show the sword, with the hilt a little bent. There were several more that had been equally great in the field, not one of whom but was persuaded that he had a considerable hand in bringing the war to a happy termination.

But all these were nothing to the tales of ghosts and apparitions that succeeded. The neighborhood is rich in legendary treasures of the kind. Local tales and superstitions thrive best in these sheltered long-settled retreats; but are trampled under foot by the shifting throng that forms the populations of most of our country places. Besides, there is no encouragement for ghosts in most of our villages, for, they have scarcely had time to finish their first nap, and turn themselves in their graves, before their surviving friends have travelled away from the neighborhood; so that when they turn out at night to walk their rounds, they have no acquaintance left to call upon. This is perhaps the reason why we so seldom hear of ghosts except in our long-established Dutch communities.

The immediate cause, however, of the prevalence of supernatural stories in these parts, was doubtless owing to the vicinity of Sleepy Hollow. There was a contagion in the very air that blew from that haunted region; it breathed forth an atmosphere of dreams and fancies infecting all the land. Several of the Sleepy Hollow people were present at Van Tassel's, and, as usual, were doling out their wild and wonderful legends. Many dismal tales were told about funeral trains, and mourning cries and wailing heard and seen about the great tree where the unfortunate Major André was taken, and which stood in the neighborhood. Some mention was made also of the woman in white, that haunted the dark glen at Raven Rock, and was often heard to shriek on winter nights before a storm, having perished there in the snow. The chief part of the stories, however, turned upon the favorite spectre of Sleepy Hollow, the headless horseman, who had been heard several times of late, patrolling the country; and, it was said, tethered his horse nightly among the graves in the church-yard.

The sequestered situation of this church seems always to have made it a favorite haunt of troubled spirits. It stands

on a knoll, surrounded by locust-trees and lofty elms, from among which its decent whitewashed walls shine modestly forth, like Christian purity beaming through the shades of retirement. A gentle slope descends from it to a silver sheet of water, bordered by high trees, between which, peeps may be caught at the blue hills of the Hudson. To look upon its grass-grown vard, where the sunbeams seem to sleep so quietly, one would think that there at least the dead might rest in peace. On one side of the church extends a wide woody dell, along which raves a large brook among broken rocks and trunks of fallen trees. Over a deep black part of the stream, not far from the church, was formerly thrown a wooden bridge; the road that led to it, and the bridge itself, were thickly shaded by overhanging trees, which cast a gloom about it, even in the daytime; but occasioned a fearful darkness at night. This was one of the favorite haunts of the headless horseman; and the place where he was most frequently encountered. The tale was told of old Brouwer. a most heretical disbeliever in ghosts, how he met the horseman returning from his foray into Sleepy Hollow, and was obliged to get up behind him; how they galloped over bush and brake, over hill and swamp, until they reached the bridge; when the horseman suddenly turned into a skeleton, threw old Brouwer into the brook, and sprang away over the tree-tops with a clap of thunder.

This story was immediately matched by a thrice marvellous adventure of Brom Bones, who made light of the galloping Hessian as an arrant jockey. He affirmed that, on returning one night from the neighboring village of Sing Sing, he had been overtaken by this midnight trooper; that he had offered to race with him for a bowl of punch, and should have won it too, for Dare-devil beat the goblin horse all hollow, but, just as they came to the church bridge, the Hessian bolted, and vanished in a flash of fire.

All these tales, told in that drowsy undertone with which men talk in the dark, the countenances of the listeners only now and then receiving a casual gleam from the glare of a pipe, sank deep in the mind of Ichabod. He repaid them in kind with large extracts from his invaluable author, Cotton Mather, and added many marvellous events that had taken place in his native State of Connecticut, and fearful sights which he had seen in his nightly walks about Sleepy Hollow.

The revel now gradually broke up. The old farmers gathered together their families in their wagons, and were heard for some time rattling along the hollow roads, and over the distant hills. Some of the damsels mounted on pillions behind their favorite swains, and their light-hearted laughter, mingling with the clatter of hoofs, echoed along the silent woodlands, sounding fainter and fainter until they gradually died away-and the late scene of noise and frolic was all silent and deserted. Ichabod only lingered behind. according to the custom of country lovers, to have a tête-àtête with the heiress, fully convinced that he was now on the high road to success. What passed at this interview I will not pretend to say, for in fact I do not know. Something, however, I fear me, must have gone wrong, for he certainly sallied forth, after no very great interval, with an air quite desolate and chop-fallen.—Oh these women! these women! Could that girl have been playing off any of her coquettish tricks?-Was her encouragement of the poor pedagogue all a mere sham to secure her conquest of his rival?—Heaven only knows, not I!-Let it suffice to say, Ichabod stole forth with the air of one who had been sacking a hen-roost, rather than a fair lady's heart. Without looking to the right or left to notice the scene of rural wealth, on which he had so often gloated, he went straight to the stable, and with several hearty cuffs and kicks, roused his steed most uncourteously from the comfortable quarters in which he was soundly sleeping, dreaming of mountains of corn and oats, and whole valleys of timothy and clover.

It was the very witching time of night that Ichabod, heavy-hearted and crest-fallen, pursued his travel homewards, along the sides of the lofty hills which rise above Tarry Town, and which he had traversed so cheerily in the afternoon. The hour was dismal as himself. Far below him, the Tappan Zee spread its dusky and indistinct waste of waters, with here and there the tall mast of a sloop, riding quietly at anchor under the land. In the dead hush of midnight, he could even hear the barking of the watch dog from the op-

posite shore of the Hudson; but it was so vague and faint as only to give an idea of his distance from this faithful companion of man. Now and then, too, the long-drawn crowing of a cock, accidentally awakened, would sound far, far off from some farmhouse away among the hills—but it was like a dreaming sound in his ear. No signs of life occurred near him, but occasionally the melancholy chirp of a cricket, or perhaps the guttural twang of a bull-frog, from a neighboring marsh, as if sleeping uncomfortably, and turning suddenly in his bed.

All the stories of ghosts and goblins that he had heard in the afternoon, now came crowding upon his recollection. The night grew darker and darker; the stars seemed to sink deeper in the sky, and driving clouds occasionally hid them from his sight. He had never felt so lonely and dismal. He was, moreover, approaching the very place where many of the scenes of the ghost stories had been laid. In the centre of the road stood an enormous tulip-tree, which towered like a giant above all the other trees of the neighborhood, and formed a kind of landmark. Its limbs were gnarled, and fantastic, large enough to form trunks for ordinary trees, twisting down almost to the earth, and rising again into the air.

It was connected with the tragical story of the unfortunate André, who had been taken prisoner hard by; and was universally known by the name of Major André's tree. The common people regarded it with a mixture of respect and superstition, partly out of sympathy for the fate of its ill-starred namesake, and partly from the tales of strange sights and doleful lamentations told concerning it.

As Ichabod approached this fearful tree, he began to whistle: he thought his whistle was answered—it was but a blast sweeping sharply through the dry branches. As he approached a little nearer, he thought he saw something white, hanging in the midst of the tree—he paused and ceased whistling; but on looking more narrowly, perceived that it was a place where the tree had been scathed by lightning, and the white wood laid bare. Suddenly he heard a groan—his teeth chattered and his knees smote against the saddle: it was but the rubbing of one huge bough upon another, as they

were swayed about by the breeze. He passed the tree in safety, but new perils lay before him.

About two hundred yards from the tree a small brook crossed the road, and ran into a marshy and thickly-wooded glen, known by the name of Wiley's swamp. A few rough logs, laid side by side, served for a bridge over this stream. On that side of the road where the brook entered the wood, a group of oaks and chestnuts, matted thick with wild grapevines, threw a cavernous gloom over it. To pass this bridge was the severest trial. It was at this identical spot that the unfortunate André was captured, and under the covert of those chestnuts and vines were the sturdy yeomen concealed who surprised him. This has ever since been considered a haunted stream, and fearful are the feelings of the schoolboy who has to pass it alone after dark.

As he approached the stream his heart began to thump: he summoned up, however, all his resolution, gave his horse half a score of kicks in the ribs, and attempted to dash briskly across the bridge; but instead of starting forward, the perverse old animal made a lateral movement, and ran broadside against the fence. Ichabod, whose fears increased with the delay, jerked the reins on the other side, and kicked lustily with the contrary foot: it was all in vain; his steed started, it is true, but it was only to plunge to the opposite side of the road into a thicket of brambles and alder bushes. The schoolmaster now bestowed both whip and heel upon the starveling ribs of old Gunpowder, who dashed forward, snuffling and snorting, but came to a stand just by the bridge. with a suddenness that had nearly sent his rider sprawling over his head. Just at this moment a plashy tramp by the side of the bridge caught the sensitive ear of Ichabod. In the dark shadow of the grove, on the margin of the brook, he beheld something huge, misshapen, black and towering. It stirred not, but seemed gathered up in the gloom, like some gigantic monster ready to spring upon the traveller.

The hair of the affrighted pedagogue rose upon his head with terror. What was to be done? To turn and fly was now too late; and besides, what chance was there of escaping ghost or goblin, if such it was, which could ride upon the

wings of the wind? Summoning up, therefore, a show of courage, he demanded in stammering accents-"Who are you?" He received no reply. He repeated his demand in a still more agitated voice. Still there was no answer. Once more he cudgelled the sides of the inflexible Gunpowder, and, shutting his eyes, broke forth with involuntary fervor into a psalm tune. Just then the shadowy object of alarm put itself in motion, and, with a scramble and a bound, stood at once in the middle of the road. Though the night was dark and dismal, yet the form of the unknown might now in some degree be ascertained. He appeared to be a horseman of large dimensions, and mounted on a black horse of powerful frame. He made no offer of molestation or sociability. but kept aloof on one side of the road, jogging along on the blind side of old Gunpowder, who had now got over his

fright and waywardness.

Ichabod, who had no relish for this strange midnight companion, and bethought himself of the adventure of Brom Bones with the Galloping Hessian, now quickened his steed, in hopes of leaving him behind. The stranger, however, quickened his horse to an equal pace. Ichabod pulled up, and fell into a walk, thinking to lag behind—the other did the same. His heart began to sink within him; he endeavored to resume his psalm tune, but his parched tongue clove to the roof of his mouth, and he could not utter a stave. There was something in the moody and dogged silence of this pertinacious companion, that was mysterious and appalling. It was soon fearfully accounted for. On mounting a rising ground, which brought the figure of his fellow-traveller in relief against the sky, gigantic in height, and muffled in a cloak, Ichabod was horror-struck, on perceiving that he was headless!-but his horror was still more increased, on observing that the head, which should have rested on his shoulders, was carried before him on the pommel of the saddle; his terror rose to desperation; he rained a shower of kicks and blows upon Gunpowder; hoping, by a sudden movement, to give his companion the slip—but the spectre started full jump with him. Away then they dashed, through thick and thin; stones flying, and sparks flashing at every bound. Ichabod's flimsy garments fluttered in the air, as he stretched his long lanky body away over his horse's head, in the eagerness of his flight.

They had now reached the road which turns off to Sleepy Hollow; but Gunpowder, who seemed possessed with a demon, instead of keeping up it, made an opposite turn, and plunged headlong down hill to the left. This road leads through a sandy hollow, shaded by trees for about a quarter of a mile, where it crosses the bridge famous in goblin story, and just beyond swells the green knoll on which stands the whitewashed church.

As yet the panic of the steed had given his unskilful rider an apparent advantage in the chase; but just as he had got half way through the hollow, the girths of the saddle gave way, and he felt it slipping from under him. He seized it by the pommel, and endeavored to hold it firm, but in vain; and had just time to save himself by clasping old Gunpowder round the neck, when the saddle fell to the earth, and he heard it trampled under foot by his pursuer. For a moment the terror of Hans Van Ripper's wrath passed across his mind-for it was his Sunday saddle; but this was no time for petty fears; the goblin was hard on his haunches; and (unskilful rider that he was!) he had much ado to maintain his seat: sometimes slipping on one side, sometimes on another, and sometimes jolted on the high ridge of his horse's backbone, with a violence that he verily feared would cleave him asunder.

An opening in the trees now cheered him with the hopes that the church bridge was at hand. The wavering reflection of a silver star in the bosom of the brook told him that he was not mistaken. He saw the walls of the church dimly glaring under the trees beyond. He recollected the place where Brom Bones's ghostly competitor had disappeared. "If I can but reach that bridge," thought Ichabod, "I am safe." Just then he heard the black steed panting and blowing close behind him; he even fancied that he felt his hot breath. Another convulsive kick in the ribs, and old Gunpowder sprang upon the bridge; he thundered over the resounding planks; he gained the opposite side; and now Ichabod cast a look behind to see if his pursuer should vanish, according to rule, in a flash of fire and brimstone. Just then

he saw the goblin rising in his stirrups, and in the very act of hurling his head at him. Ichabod endeavored to dodge the horrible missile, but too late. It encountered his cranium with a tremendous crash—he was tumbled headlong into the dust, and Gunpowder, the black steed, and the goblin rider, passed by like a whirlwind.

The next morning the old horse was found without his saddle, and with the bridle under his feet, soberly cropping the grass at his master's gate. Ichabod did not make his appearance at breakfast—dinner-hour came, but no Ichabod. The boys assembled at the schoolhouse, and strolled idly about the banks of the brook; but no school-master. Hans Van Ripper now began to feel some uneasiness about the fate of poor Ichabod, and his saddle. An inquiry was set on foot, and after diligent investigation they came upon his traces. In one part of the road leading to the church was found the saddle trampled in the dirt; the tracks of horses' hoofs deeply dented in the road, and evidently at furious speed, were traced to the bridge, beyond which, on the bank of a broad part of the brook, where the water ran deep and black, was found the hat of the unfortunate Ichabod, and close beside it a shattered pumpkin.

The brook was searched, but the body of the school-master was not to be discovered. Hans Van Ripper, as executor of his estate, examined the bundle which contained all his worldly effects. They consisted of two shirts and a half; two stocks for the neck; a pair or two of worsted stockings; an old pair of corduroy small-clothes; a rusty razor; a book of psalm tunes, full of dogs' ears; and a broken pitchpipe. As to the books and furniture of the school-house, they belonged to the community, excepting Cotton Mather's History of Witchcraft, a New England Almanac, and a book of dreams and fortune-telling; in which last was a sheet of foolscap much scribbled and blotted in several fruitless attempts to make a copy of verses in honor of the heiress of Van Tassel. These magic books and the poetic scrawls were forthwith consigned to the flames by Hans Van Ripper; who from that time forward determined to send his children no more to school; observing, that he never knew any good come of this same reading and writing. Whatever money the schoolmaster possessed, and he had received his quarter's pay but a day or two before, he must have had about his person at the time of his disappearance.

The mysterious event caused much speculation at the church on the following Sunday. Knots of gazers and gossips were collected in the churchyard, at the bridge, and at the spot where the hat and pumpkin had been found. The stories of Brouwer, of Bones, and a whole budget of others, were called to mind; and when they had diligently considered them all, and compared them with the symptoms of the present case, they shook their heads, and came to the conclusion that Ichabod had been carried off by the galloping Hessian. As he was a bachelor, and in nobody's debt, nobody troubled his head any more about him. The school was removed to a different quarter of the hollow, and another pedagogue reigned in his stead.

It is true, an old farmer, who had been down to New York on a visit several years after, and from whom this account of the ghostly adventure was received, brought home the intelligence that Ichabod Crane was still alive; that he had left the neighborhood, partly through fear of the goblin and Hans Van Ripper, and partly in mortification at having been suddenly dismissed by the heiress; that he had changed his quarters to a distant part of the country; had kept school and studied law at the same time, had been admitted to the bar, turned politician, electioneered, written for the newspapers, and finally had been made a justice of the Ten Pound Court. Brom Bones too, who shortly after his rival's disappearance conducted the blooming Katrina in triumph to the altar, was observed to look exceedingly knowing whenever the story of Ichabod was related, and always burst into a hearty laugh at the mention of the pumpkin; which led some to suspect that he knew more about the matter than he chose to tell.

The old country wives, however, who are the best judges of these matters, maintain to this day that Ichabod was spirited away by supernatural means; and it is a favorite story often told about the neighborhood round the winter evening fire. The bridge became more than ever an object of superstitious awe, and that may be the reason why the road has been altered of late years, so as to approach the

church by the border of the mill-pond. The school-house being deserted, soon fell to decay, and was reported to be haunted by the ghost of the unfortunate pedagogue; and the ploughboy, loitering homeward of a still summer evening, has often fancied his voice at a distance, chanting a melancholy psalm tune among the tranquil solitudes of Sleepy Hollow.

# **POSTSCRIPT**

### FOUND IN THE HANDWRITING OF MR. KNICKERBOCKER

HE preceding Tale is given, almost in the precise words in which I heard it related at a Corporation meeting of the ancient city of Manhattoes, at which were present many of its sagest and most illustrious burghers. The narrator was a pleasant, shabby, gentlemanly old fellow, in pepper-and-salt clothes, with a sadly humorous face; and one whom I strongly suspected of being poor,-he made such efforts to be entertaining. When his story was concluded, there was much laughter and approbation, particularly from two or three deputy aldermen, who had been asleep a greater part of the time. There was, however, one tall, dry-looking old gentleman, with beetling eyebrows, who maintained a grave and rather severe face throughout: now and then folding his arms, inclining his head, and looking down upon the floor, as if turning a doubt over in his mind. He was one of your wary men, who never laugh, but upon good grounds-when they have reason and the law on their side. When the mirth of the rest of the company had subsided, and silence was restored, he leaned one arm on the elbow of his chair, and, sticking the other akimbo, demanded, with a slight but exceedingly sage motion of the head, and contraction of the brow, what was the moral of the story, and what it went to prove?

The story-teller, who was just putting a glass of wine to his lips, as a refreshment after his toils, paused for a moment, looked at his inquirer with an air of infinite deference, and, lowering the glass slowly to the table, observed, that the story was intended most logically to prove:—

"That there is no situation in life but has its advantages and

pleasures-provided we will but take a joke as we find it:

"That, therefore, he that runs races with goblin troopers is likely to have rough riding of it.

"Ergo, for a country schoolmaster to be refused the hand of a

Dutch heiress, is a certain step to high preferment in the state."

The cautious old gentleman knit his brows tenfold closer after this explanation, being sorely puzzled by the ratiocination of the syllogism; while, methought, the one in pepper-and-salt eyed him with something of a triumphant leer. At length, he observed, that all this was very well, but still he thought the story a little on the extravagant—there were one or two points on which he had his doubts.

"Faith, sir," replied the story-teller, "as to that matter, I don't believe one-half of it myself."

D. K.

# ELEONORA THE FALL OF THE HOUSE OF USHER THE PURLOINED LETTER

 $\begin{array}{cc} \cdot & \text{BY} \\ \textbf{EDGAR} & \textbf{ALLAN} & \textbf{POE} \end{array}$ 



## BIOGRAPHICAL NOTE

HERE is probably no American man of letters over whose life and character controversy has raged more violently than it has over the life and character of Edgar Allan Poe. The biography prefixed to the first collected edition of his works was, to put it mildly, unsympathetic; and later writers, in seeking to dress the balance, have perhaps gone farther than the facts warranted in the other direction.

Poe's father, the descendant of an English family that had settled in Maryland, was educated for the law, but became an actor and married an actress. Edgar was born in Boston on January 19, 1809. His parents died when he was only two years old, and their three children were left destitute. The elder brother died young; the sister lost her mind; and Edgar was adopted by a Mr. Allan. It seems that Mr. Allan and his wife indulged the boy unwisely, and later Mr. Allan resented in Poe the absence of the qualities of restraint and discipline which he had done nothing to instil.

While Mr. Allan was in England between 1815 and 1820, Poe attended school there; and on the return of the family to Virginia, he continued his education first in Richmond and then at the University of Virginia. There he developed a fondness for gambling and drink; and, Mr. Allan having refused to pay his debts, he left college and enlisted in the United States army. After two years of good conduct, his adoptive father obtained his discharge and had him entered at West Point; but the next year he was expelled for neglect of duty and was henceforth thrown on his own resources.

Meantime he had printed a volume of poetry, and the success of his tale, "MS. Found in a Bottle," introduced him to the publishing world. From this time on (1833) his life was that of a literary hack. He was employed successively on the staff of the "Southern Literary Messenger," of the

New York "Quarterly Review," and of "Graham's Magazine;" and for a short time he edited a journal of his own, the "Stylus."

When free from the influence of liquor he seems to have been a diligent and capable worker, and personally attractive and well-bred; but his addiction to alcohol led to the breaking of all his engagements. In 1835 he married his cousin, Virginia Clemm, a very young and beautiful girl, who died after painful hardships in 1847. Her mother had been Poe's chief protector after he was cast off by Mr. Allan. After Virginia's death, Poe was engaged to a Mrs. Whitman, and later to a Mrs. Shelton. He died miserably in a hospital in Baltimore on October 7, 1849.

Such was the career of the man who, in the eyes of many European critics, was the greatest literary genius which America has produced. He gained distinction in the three fields of criticism, poetry, and the short story. In the first of these much of his writing has sunk into obscurity because of the unimportance of the writers criticized; vet there survive several notable contributions to literary theory. poetry is marked by an extraordinary and highly individual quality of melody, and by a power of rendering with great effectiveness moods of strange and mysterious subtlety. Of his tales, the three which are here printed are representative. In "The Fall of the House of Usher" we have an example of his creation of an unreal but vividly imagined situation, wrought out with almost unparalleled richness of suggestive detail, and making its appeal not so much to our senses as to our nerves. "Eleanora" is more akin to his poetry, and is one of those pieces in which he may be supposed to have started with personal experience and to have idealized and heightened it till it produces almost the effect of pure fantasy. Finally, in "The Purloined Letter" we have his remarkable logical capacity exhibited in the production of one of the first of modern detective stories. Whether or no America has produced a greater genius than Poe, it would be hard to prove that it has produced one more original.

## CRITICISMS AND INTERPRETATIONS

I

## BY EDMUND C. STEDMAN

CCEPT him, then, whether as poet or romancer, as a pioneer of the art feeling in American literature. far as he was devoted to art for art's sake, it was for her sake as the exponent of beauty. No man ever lived in whom the passion for loveliness so governed the emotions and convictions. His service of the beautiful was idolatry, and he would have kneeled with Heine at the feet of Our Lady of Milo, and believed that she yearned to help him. This consecration to absolute beauty made him abhor the mixture of sentimentalism, metaphysics, and morals, in its presentation. It was a foregone conclusion that neither Longfellow, Emerson, Lowell, nor Hawthorne should wholly satisfy him. The question of "moral" tendency concerned him not in the least. He did not feel with Keats that "beauty is truth, truth beauty," and that a divine perfection may be reached by either road. This deficiency narrowed his range both as a poet and as a critic. His sense of justice was a sense of the fitness of things, and—strange to say—when he put it aside he forgot that he was doing an unseemly thing. Otherwise, he represents, or was one of the first to lead, a rebellion against formalism, commonplace, the spirit of the bourgeois. In this movement Whitman is his counter-type at the pole opposite from that of art; and hence they justly are picked out from the rest of us and associated in foreign minds. Taste was Poe's supreme faculty. Beauty, to him, was a definite and logical reality, and he would have scouted Véron's claim that it has no fixed objective laws, and exists only in the nature of the observer. Although the brakes of art were on his imagination, his taste was wholly pure; he vacillated between the classic forms and those allied with color, splendor, Oriental decoration; between his love for the antique and his impressions of the mystical and grotesque. But he was almost without confraternity. An artist in an unartistic period, he had to grope his way, to contend with stupidity and coarseness.—From "Edgar Allan Poe" (1881).

#### TT

## BY GEORGE E. WOODBERRY

S in "Ligeia" the idea of change is elaborated, so in "The Fall of the House of Usher" the intellectual theme is fear. For the purposes of this story Poe used again the plot of "Berenice," but so purified and developed in its accidents as to be hardly recognizable. Not a few would rank this tale more high than "Ligeia;" for, if that be more distinguished by ideality, this is more excellent in the second virtue in Poe's scale, unity of design. In artistic construction it does not come short of absolute perfection. adaptation of the related parts and their union in the total effect are a triumph of literary craft; the intricate details. as it were mellowing and reflecting one ground tone, have the definiteness and precision of inlaid mosaic, or, like premonitions and echoes of the theme in music, they are so exactly calculated as to secure their end with the certainty of harmonic law itself. The sombre landscape whose hues Poe alone knew the secret of; the subtle vet not overwrought sympathy between the mansion and the race that had reared it; the looks, traits, and pursuits of Usher, its representative; and the at first scarce-felt presence of Madeline, his worn sister,—all is like a narrowing and ever-intensifying force drawing in to some unknown point; and when this is reached, in the bright copper-sheeted vault in which Madeline is entombed, and the mind, after that midnight scene, expands and breathes freer air, a hundred obscure intimations, each slight in itself, startle and enchain it, until, slowly as obscurity takes shape in a glimmer of light. Usher's dread discloses itself in its concrete and fearful fulfillment, and at once, by the brief and sudden stroke of death, house, race,

and all sink into the black tarn where its glassy image had so long built a shadowy reality.—From "The Life of Edgar Allan Poe" (1909).

#### TTT

## By John Mackinnon Robertson

As Dr. Landa remarks, he has been the first story-writer to exploit the field of science in the department of the marvellous; and he has further been the first to exploit the marvellous in morbid psychology with scientific art: These are achievements as commanding, as significant of genius, as the most distinguished success in any of the commoner walks of fiction.—From "Edgar Allan Poe," in "New Essays towards Critical Method."



## **ELEONORA**

Sub conservatione formæ specificæ salva anima.
—Raymond Lully

AM come of a race noted for vigour of fancy and ardour of passion. Men have called me mad, but the question is not yet settled whether madness is or is not the loftiest intelligence, whether much that is glorious, whether all that is profound, does not spring from disease of thought, from moods of mind exalted at the expense of the general intellect. They who dream by day are cognisant of many things which escape those who dream only by night. In their grey visions they obtain glimpses of eternity, and thrill, in waking, to find that they have been upon the verge of the great secret. In snatches they learn something of the wisdom which is of good, and more of the mere knowledge which is of evil. They penetrate, however rudderless or compassless into the vast ocean of the "night ineffable," and again, like the adventures of the Nubian geographer, "agressi sunt mare tenebrarum, quid in eo esset exploraturi."

We will say, then, that I am mad. I grant, at least, that there are two distinct conditions of my mental existence, the condition of a lucid reason not to be disputed, and belonging to the memory of events forming the first epoch of my life, and a condition of shadow and doubt, appertaining to the present, and to the recollection of what constitutes the second great era of my being. Therefore, what I shall tell of the earlier period, believe; and to what I may relate of the later time, give only such credit as may seem due; or doubt it altogether; or, if doubt it ye cannot, then play unto its riddle the Œdipus.

She whom I loved in youth, and of whom I now pen calmly and distinctly these remembrances, was the sole daughter of the only sister of my mother long departed.

Eleonora was the name of my cousin. We had always dwelt together, beneath a tropical sun, in the Valley of the Many-Coloured Grass. No unguided footstep ever came upon that vale, for it lay far away up among a range of giant hills that hung beetling around about it, shutting out the sunlight from its sweetest recesses. No path was trodden in its vicinity; and to reach our happy home there was need of putting back with force the foliage of many thousands of forest trees, and of crushing to death the glories of many millions of fragrant flowers. Thus it was that we lived all alone, knowing nothing of the world without the valley—I, and my cousin, and her mother.

From the dim regions beyond the mountains at the upper end of our encircled domain, there crept out a narrow and deep river, brighter than all save the eyes of Eleonora; and winding stealthily about in mazy courses, it passed away at length through a shadowy gorge, among hills still dimmer than those whence it had issued. We called it the "River of Silence," for there seemed to be a hushing influence in its flow. No murmur arose from its bed, and so gently it wandered along that the pearly pebbles upon which we loved to gaze, far down within its bosom, stirred not at all, but lay in a motionless content, each in its own old station, shining on gloriously for ever.

The margin of the river, and of the many dazzling rivulets that glided through devious ways into its channel, as well as the spaces that extended from the margins away down into the depths of the streams until they reached the bed of pebbles at the bottom, these spots, not less than the whole surface of the valley, from the river to the mountains that girdled it in, were carpeted all by a soft green grass, thick, short, perfectly even, and vanilla-perfumed, but so besprinkled throughout with the yellow buttercup, the white daisy, the purple violet, and the ruby-red asphodel, that its exceeding beauty spoke to our hearts in loud tones of the love and of the glory of God.

And here and there, in groves about this grass, like wildernesses of dreams, sprang up fantastic trees, whose tall slender stems stood not upright, but slanted gracefully towards the light that peered at noon-day into the centre of

the valley. Their bark was speckled with the vivid alternate splendour of ebony and silver, and was smoother than all save the cheeks of Eleonora; so that but for the brilliant green of the huge leaves that spread from their summits in long tremulous lines, dallying with the zephyrs, one might have fancied them giant serpents of Syria doing homage to their sovereign the sun.

Hand in hand about this valley, for fifteen years, roamed I with Eleonora before love entered within our hearts. It was one evening at the close of the third lustrum of her life. and of the fourth of my own, that we sat locked in each other's embrace, beneath the serpent-like trees, and looked down within the waters of the River of Silence at our images therein. We spoke no words during the rest of that sweet day, and our words even upon the morrow were tremulous and few. We had drawn the god Eros from that wave, and now we felt that he had enkindled within us the fiery souls of our forefathers. The passions which had for centuries distinguished our race came thronging with the fancies for which they had been equally noted, and together breathed a delirious bliss over the Valley of the Many-Coloured Grass. A change fell upon all things. Strange, brilliant flowers, star-shaped, burst out upon the trees where no flowers had been known before. The tints of the green carpet deepened, and when, one by one, the white daisies shrank away, there sprang up in place of them, ten by ten of the ruby-red asphodel. And life arose in our paths, for the tall flamingo, hitherto unseen, with all gay glowing birds, flaunted his scarlet plumage before us. The golden and silver fish haunted the river, out of the bosom of which issued, little by little, a murmur that swelled at length into a lulling melody more divine than that of the harp of Æolus, sweeter than all save the voice of Eleonora. And now, too, a voluminous cloud, which we had long watched in the regions of Hesper, floated out thence, all gorgeous in crimson and gold, and settling in peace above us, sank day by day lower and lower until its edges rested upon the tops of the mountains, turning all their dimness into magnificence, and shutting us up as if for ever within a magic prison-house of grandeur and of glory.

The loveliness of Eleonora was that of the Seraphim; but she was a maiden artless and innocent as the brief life she had led among the flowers. No guile disguised the fervour of love which animated her heart, and she examined with me its inmost recesses as we walked together in the Valley of the Many-Coloured Grass, and discoursed of the mighty changes which had lately taken place therein.

At length, having spoken one day, in tears, of the last sad change which must befall humanity, she thenceforward dwelt only upon this one sorrowful theme, interweaving it into all our converse, as, in the songs of the bard of Schiraz, the same images are found occurring again and again in every

impressive variation of phrase.

She had seen that the finger of Death was upon her bosom—that, like the ephemeron, she had been made perfect in loveliness only to die; but the terrors of the grave to her lay solely in a consideration which she revealed to me one evening at twilight by the banks of the River of Silence. She grieved to think that, having entombed her in the Valley of the Many-Coloured Grass, I would quit for ever its happy recesses, transferring the love which now was so passionately her own to some maiden of the outer and every-day world.

And then and there I threw myself hurriedly at the feet of Eleonora, and offered up a vow to herself and to Heaven, that I would never bind myself in marriage to any daughter of Earth-that I would in no manner prove recreant to her dear memory, or to the memory of the devout affection with which she had blessed me. And I called the Mighty Ruler of the Universe to witness the pious solemnity of my vow. And the curse which I invoked of Him and of her, a saint in Elusion, should I prove traitorous to that promise, involved a penalty the exceeding great horror of which will not permit me to make record of it here. And the bright eyes of Eleonora grew brighter at my words; and she sighed as if a deadly burthen had been taken from her breast; and she trembled and very bitterly wept; but she made acceptance of the vow (for what was she but a child?), and it made easy to her the bed of her death. And she said to me, not many days afterwards, tranquilly dying, that, because of what I had done for the comfort of her spirit, she would watch over me in that spirit when departed, and, if so it were permitted her, return to me visibly in the watches of the night; but, if this thing were indeed beyond the power of the souls in Paradise, that she would at least give me frequent indications of her presence; sighing upon me in the evening winds, or filling the air which I breathed with perfume from the censers of the angels. And, with these words upon her lips, she yielded up her innocent life, putting an end to the first epoch of my own.

Thus far I have faithfully said. But as I pass the barrier in Time's path, formed by the death of my beloved, and proceed with the second era of my existence, I feel that a shadow gathers over my brain, and I mistrust the perfect sanity of the record. But let me on.—Years dragged themselves along heavily, and still I dwelled within the Valley of the Many-Coloured Grass; but a second change had come upon all things. The star-shaped flowers shrank into the stems of the trees, and appeared no more. The tints of the green carpet faded; and, one by one, the ruby-red asphodels withered away; and there sprang up, in place of them, ten by ten. dark, eye-like violets, that writhed uneasily and were ever encumbered with dew. And Life departed from our paths; for the tall flamingo flaunted no longer his scarlet plumage before us, but flew sadly from the vale into the hills, with all the gay glowing birds that had arrived in his company. And the golden and silver fish swam down through the gorge at the lower end of our domain, and bedecked the sweet river never again. And the lulling melody that had been softer than the wind-harp of Æolus, and more divine than all save the voice of Eleonora, it died little by little away, in murmurs growing lower and lower, until the stream returned, at length, utterly into the solemnity of its original silence; and then, lastly, the voluminous cloud uprose, and, abandoning the tops of the mountains to the dimness of old, fell back into the regions of Hesper, and took away all its manifold golden and gorgeous glories from the Valley of the Many-Coloured Grass.

Yet the promises of Eleonora were not forgotten; for I heard the sounds of the swinging of the censers of the angels;

and streams of a holy perfume floated ever and ever about the valley; and at lone hours, when my heart beat heavily, the winds that bathed my brow came unto me laden with soft sighs; and indistinct murmurs filled often the night air; and once—oh, but once only! I was awakened from a slumber, like the slumber of death, by the pressing of spiritual lips upon my own.

But the void within my heart refused, even thus, to be filled. I longed for the love which had before filled it to overflowing. At length the valley *pained* me through its memories of Eleonora, and I left it for ever for the vanities and the turbulent triumphs of the world.

I found myself within a strange city, where all things might have served to blot from recollection the sweet dreams I had dreamed so long in the Valley of the Many-Coloured Grass. The pomps and pageantries of a stately court, and the mad clangour of arms, and the radiant loveliness of woman, bewildered and intoxicated my brain. But as yet my soul had proved true to its vows, and the indications of the presence of Eleonora were still given me in the silent hours of the night. Suddenly, these manifestations ceased; and the world grew dark before mine eyes; and I stood aghast at the burning thoughts which possessed-at the terrible temptations which beset me: for there came from some far. far distant and unknown land, into the gay court of the king I served, a maiden to whose beauty my whole recreant heart yielded at once-at whose footstool I bowed down without a struggle in the most ardent, in the most abject worship of love. What indeed was my passion for the young girl of the valley in comparison with the fervour and the delirium, and the spirit-lifting ecstasy of adoration with which I poured out my whole soul in tears at the feet of the ethereal Ermengarde?-Oh, bright was the seraph Ermengarde! and in that knowledge I had room for none other.-Oh. divine was the angel Ermengarde! and as I looked down into the depths of her memorial eyes, I thought only of them-and of her.

I wedded —nor dreaded the curse I had invoked; and its bitterness was not visited upon me. And once—but once

again in the silence of the night, there came through my lattice the soft sighs which had forsaken me; and they modelled themselves into familiar and sweet voice, saying—

"Sleep in peace!—for the Spirit of Love reigneth and ruleth, and, in taking to thy passionate heart her who is Ermengarde, thou art absolved, for reason which shall be made known to thee in Heaven, of thy vows unto Eleonora."



# THE FALL OF THE HOUSE OF USHER

Son cœur est un luth suspendu; Sitôt qu'on le touche il résonne.

-De Béranger

URING the whole of a dull, dark, and soundless day in the autumn of the year, when the clouds hung oppressively low in the heavens, I had been passing alone, on horseback, through a singularly dreary tract of country, and at length found myself, as the shades of evening drew on, within view of the melancholy House of Usher. I know not how it was-but, with the first glimpse of the building, a sense of insufferable gloom pervaded my spirit. I say insufferable; for the feeling was unrelieved by any of that half-pleasurable, because poetic, sentiment, with which the mind usually receives even the sternest natural images of the desolate or terrible. I looked upon the scene before me upon the mere house, and the simple landscape features of the domain-upon the bleak walls-upon the vacant eye-like windows-upon a few rank sedges-and upon a few white trunks of decayed trees-with an utter depression of soul which I can compare to no earthly sensation more properly than to the after-dream of the reveller upon opium—the bitter lapse into every-day life-the hideous dropping of the veil. There was an iciness, a sinking, a sickening of the heart-an unredeemed dreariness of thought which no goading of the imagination could torture into aught of the sublime. What was it—I paused to think—what was it that so unnerved me in the contemplation of the House of Usher? It was a mystery all insoluble; nor could I grapple with the shadowy fancies that crowded upon me as I pondered. I was forced to fall back upon the unsatisfactory conclusion, that while, beyond doubt, there are combinations of very simple natural

objects which have the power of thus affecting us, still the analysis of this power lies among considerations beyond our depth. It was possible, I reflected, that a mere different arrangement of the particulars of the scene, of the details of the picture, would be sufficient to modify, or perhaps to annihilate its capacity for sorrowful impression; and, acting upon this idea, I reined my horse to the precipitous brink of a black and lurid tarn that lay in unruffled lustre by the dwelling, and gazed down—but with a shudder more thrilling than before—upon the remodelled and inverted images of the grey sedge, and the ghastly tree-stems, and the vacant and eyelike windows.

Nevertheless, in this mansion of gloom I now proposed to myself a sojourn of some weeks. Its proprietor, Roderick Usher, had been one of my boon companions in boyhood; but many years had elapsed since our last meeting. A letter, however, had lately reached me in a distant part of the country—a letter from him—which, in its wildly importunate nature, had admitted of no other than a personal reply. The MS. gave evidence of nervous agitation. The writer spoke of acute bodily illness—of a mental disorder which oppressed him—and of an earnest desire to see me, as his best, and indeed his only personal friend, with a view of attempting, by the cheerfulness of my society, some alleviation of his malady. It was the manner in which all this, and much more, was said—it was the apparent heart that went with his request—which allowed me no room for hesitation, and I accordingly obeyed forthwith what I still considered a very singular summons.

Although, as boys, we had been even intimate associates, yet I really knew little of my friend. His reserve had been always excessive and habitual. I was aware, however, that his very ancient family had been noted, time out of mind, for a peculiar sensibility of temperament, displaying itself through long ages in many works of exalted art, and manifested of late in repeated deeds of munificent yet unobtrusive charity, as well as in a passionate devotion to the intricacies, perhaps even more than to the orthodox and easily-recognisable beauties of musical science. I had learned, too, the very remarkable fact that the stem of the Usher race, all time-

honoured as it was, had put forth at no period any enduring branch; in other words, that the entire family lay in the direct line of descent, and had always, with very trifling and very temporary variation, so lain. It was this deficiency, I considered, while running over in thought the perfect keeping of the character of the premises with the accredited character of the people, and while speculating upon the possible influence which the one, in the long lapse of centuries, might have exercised upon the other—it was this deficiency perhaps of collateral issue, and the consequent undeviating transmission from sire to son of the patrimony with the name, which had at length so identified the two as to merge the original title of the estate in the quaint and equivocal appellation of the "House of Usher"—an appellation which seemed to include, in the minds of the peasantry who used it, both the family and the family mansion.

I have said that the sole effect of my somewhat childish experiment—that of looking down within the tarn—had been to deepen the first singular impression. There can be no doubt that the consciousness of the rapid increase of my superstition — for why should I not so term it? — served mainly to accelerate the increase itself. Such, I have long known, is the paradoxical law of all sentiments having terror as a basis; and it might have been for this reason only that, when I again uplifted my eyes to the house itself from its image in the pool, there grew in my mind a strange fancya fancy so ridiculous indeed that I but mention it to show the vivid force of the sensations which oppressed me. I had so worked upon my imagination as really to believe that about the whole mansion and domain there hung an atmosphere peculiar to themselves and their immediate vicinity—an atmosphere which had no affinity with the air of heaven, but which had reeked up from the decayed trees, and the grey wall, and the silent tarn—a pestilent and mystic vapour, dull. sluggish, faintly discernible, and leaden-hued.

Shaking off from my spirit what must have been a dream I scanned more narrowly the real aspect of the building. Its principal feature seemed to be that of an excessive antiquity. The discolouration of ages had been great. Minute fungi overspread the whole exterior, hanging in a fine tangled web-

work from the eaves. Yet all this was apart from any extraordinary dilapidation. No portion of the masonry had fallen, and there appeared to be a wild inconsistency between its still perfect adaption of parts and the crumbling condition of the individual stones. In this there was much that reminded me of the spacious totality of old woodwork which has rotted for long years in some neglected vault with no disturbance from the breath of the external air. Beyond this indication of extensive decay, however, the fabric gave little token of instability. Perhaps the eye of a scrutinising observer might have discovered a barely perceptible fissure, which, extending from the roof of the building in front, made its way down the wall in a zigzag direction, until it became lost in the sullen waters of the tarn.

Noticing these things, I rode over a short causeway to the house. A servant in waiting took my horse, and I entered the Gothic archway of the hall. A valet, of stealthy step, thence conducted me in silence through many dark and intricate passages in my progress to the studio of his master. Much that I encountered on the way contributed, I know not how, to heighten the vague sentiments of which I have already spoken. While the objects around me-while the carvings of the ceilings, the sombre tapestries of the walls, the ebon blackness of the floors, and the phantasmagoric armorial trophies which rattled as I strode, were but matters to which, or to such as which, I had been accustomed from my infancy-while I hesitated not to acknowledge how familiar was all this-I still wondered to find how unfamiliar were the fancies which ordinary images were stirring up. On one of the staircases I met the physician of the family. His countenance, I thought, wore a mingled expression of low cunning and perplexity. He accosted me with trepidation and passed on. The valet now threw open a door, and ushered me into the presence of his master.

The room in which I found myself was very large and lofty. The windows were long, narrow, and pointed, and at so vast a distance from the black oaken floor as to be altogether inaccessible from within. Feeble gleams of encrimsoned light made their way through the trellised panes, and served to render sufficiently distinct the more prominent

objects around; the eye, however, struggled in vain to reach the remoter angles of the chamber, or the recesses of the vaulted and fretted ceiling. Dark draperies hung upon the walls. The general furniture was profuse, comfortless, antique, and tattered. Many books and musical instruments lay scattered about, but failed to give any vitality to the scene. I felt that I breathed an atmosphere of sorrow. An air of stern, deep, and irredeemable gloom hung over and pervaded all.

Upon my entrance, Usher arose from a sofa on which he had been lying at full length, and greeted me with a vivacious warmth which had much in it, I at first thought, of an overdone cordiality-of the constrained effort of the ennuvé man of the world. A glance, however, at his countenance convinced me of his perfect sincerity. We sat down; and for some moments, while he spoke not, I gazed upon him with a feeling half of pity, half of awe. Surely, man had never before so terribly altered, in so brief a period, as had Roderick Usher! It was with difficulty that I could bring myself to admit the identity of the wan being before me with the companion of my early boyhood. Yet the character of his face had been at all times remarkable. A cadaverousness of complexion; an eye large, liquid, and luminous beyond comparison; lips somewhat thin and very pallid, but of a surpassingly beautiful curve; a nose of a delicate Hebrew model, but with a breadth of nostril unusual in similar formations; a finely-moulded chin, speaking, in its want of prominence, of a want of moral energy; hair of a more than weblike softness and tenuity; these features, with an inordinate expansion above the regions of the temple, made up altogether a countenance not easily to be forgotten. And now in the mere exaggeration of the prevailing character of these features, and of the expression they were wont to convey, lay so much of change that I doubted to whom I spoke. The now ghastly pallor of the skin, and the now miraculous lustre of the eye, above all things startled and even awed me. The silken hair, too, had been suffered to grow all unheeded, and as, in its wild gossamer texture, it floated rather than fell about the face, I could not, even with effort, connect its Arabesque expression with any idea of simple humanity.

In the manner of my friend I was at once struck with an incoherence-an inconsistency; and I soon found this to arise from a series of feeble and futile struggles to overcome an habitual trepidancy—an excessive nervous agitation. For something of this nature I had indeed been prepared, no less by his letter than by reminiscences of certain boyish traits. and by conclusions deduced from his peculiar physical conformation and temperament. His action was alternately vivacious and sullen. His voice varied rapidly from a tremulous indecision (when the animal spirits seemed utterly in abevance) to that species of energetic concision—that abrupt. weighty, unhurried, and hollow-sounding enunciation—that leaden, self-balanced, and perfectly modulated guttural utterance which may be observed in the lost drunkard, or the irreclaimable eater of opium, during the periods of his most intense excitement.

It was thus that he spoke of the object of my visit, of his earnest desire to see me, and of the solace he expected me to afford him. He entered at some length into what he conceived to be the nature of his malady. It was, he said, a constitutional and a family evil, and one for which he despaired to find a remedy-a mere nervous affection, he immediately added, which would undoubtedly soon pass off. It displayed itself in a host of unnatural sensations. Some of these, as he detailed them, interested and bewildered me; although perhaps the terms and the general manner of the narration had their weight. He suffered much from a morbid acuteness of the senses: the most insipid food was alone endurable; he could wear only garments of certain texture; the odours of all flowers were oppressive; his eyes were tortured by even a faint light; and there were but peculiar sounds, and these from stringed instruments, which did not inspire him with horror.

To an anomalous species of terror I found him a bounden slave. "I shall perish," said he, "I must perish in this deplorable folly. Thus, thus, and not otherwise, shall I be lost. I dread the events of the future, not in themselves, but in their results. I shudder at the thought of any, even the most trivial incident, which may operate upon this intolerable agitation of soul. I have indeed no abhorrence of danger, except

in its absolute effect—in terror. In this unnerved—in this pitiable condition—I feel that the period will sooner or later arrive when I must abandon life and reason together in some struggle with the grim phantasm, Fear."

I learned, moreover, at intervals, and through broken and equivocal hints, another singular feature of his mental condition. He was enchained by certain superstitious impressions in regard to the dwelling which he tenanted, and whence, for many years, he had never ventured forth—in regard to an influence whose supposititious force was conveyed in terms too shadowy here to be re-stated—an influence which some peculiarities in the mere form and substance of his family mansion had, by dint of long sufferance, he said, obtained over his spirit—an effect which the *physique* of the grey walls and turrets, and of the dim tarn into which they all looked down, had at length brought about upon the *morale* of his existence.

He admitted, however, although with hesitation, that much of the peculiar gloom which thus afflicted him could be traced to a more natural and far more palpable origin—to the severe and long-continued illness—indeed to the evidently approaching dissolution—of a tenderly-beloved sister—his sole companion for long years—his last and only relative on earth. "Her decease," he said, with a bitterness which I can never forget, "would leave him (him the hopeless and the frail) the last of the ancient race of the Ushers." While he spoke, the lady Madeline (for so was she called) passed slowly through a remote portion of the apartment, and, without having noticed my presence disappeared. I regarded her with an utter astonishment not unmingled with dread-and yet I found it impossible to account for such feelings. A sensation of stupor oppressed me as my eyes followed her retreating steps. When a door at length closed upon her, my glance sought instinctively and eagerly the countenance of the brother—but he had buried his face in his hands, and I could only perceive that a far more than ordinary wanness had overspread the emaciated fingers through which trickled many passionate tears.

The disease of the lady Madeline had long baffled the skill of her physicians. A settled apathy, a gradual wasting away

of the person, and frequent although transient affections of a partially cataleptical character, were the unusual diagnosis. Hitherto she had steadily borne up against the pressure of her malady, and had not betaken herself finally to bed; but, on the closing in of the evening of my arrival at the house, she succumbed (as her brother told me at night with inexpressible agitation) to the prostrating power of the destroyer; and I learned that the glimpse I had obtained of her person would thus probably be the last I should obtain—that the lady, at least while living, would be seen by me no more.

For several days ensuing her name was unmentioned by either Usher or myself; and during this period I was busied in earnest endeavours to alleviate the melancholy of my friend.

We painted and read together, or I listened, as if in a dream, to the wild improvisations of his speaking guitar. And thus, as a closer and still closer intimacy admitted me more unreservedly into the recesses of his spirit, the more bitterly did I perceive the futility of all attempts at cheering a mind from which darkness, as if an inherent positive quality, poured forth upon all objects of the moral and physical universe in one unceasing radiation of gloom.

I shall ever bear about me a memory of the many solemn hours I thus spent alone with the master of the House of Usher. Yet I should fail in any attempt to convey an idea of the exact character of the studies, or of the occupations in which he involved me or led me the way. An excited and highly-distempered ideality threw a sulphureous lustre over all. His long improvised dirges will ring forever in my ears. Among other things, I hold painfully in mind a certain singular perversion and amplification of the wild air of the last waltz of Von Weber. From the paintings over which his elaborate fancy brooded, and which grew, touch by touch, into vagueness at which I shuddered the more thrillingly, because I shuddered knowing not why:-from these paintings (vivid as their images now are before me) I would in vain endeavour to educe more than a small portion which should lie within the compass of merely written words. the utter simplicity, by the nakedness of his designs, he arrested and overawed attention. If ever mortal painted an

idea, that mortal was Roderick Usher. For me, at least—in the circumstances then surrounding me—there arose out of the pure abstractions which the hypochondriac contrived to throw upon his canvas an intensity of intolerable awe, no shadow of which felt I ever yet in the contemplation of the certainly glowing yet too concrete reveries of Fuseli.

One of the phantasmagoric conceptions of my friend, partaking not so rigidly of the spirit of abstraction, may be shadowed forth, although feebly, in words. A small picture presented the interior of an immensely long and rectangular vault or tunnel, with low walls, smooth, white, and without interruption or device. Certain accessory points of the design served well to convey the idea that this excavation lay at an exceeding depth below the surface of the earth. No outlet was observed in any portion of its vast extent, and no torch, or other artificial source of light was discernible, yet a flood of intense rays rolled throughout, and bathed the whole in a ghastly and inappropriate splendour.

I have just spoken of that morbid condition of the auditory nerve which rendered all music intolerable to the sufferer, with the exception of certain effects of stringed instruments. It was perhaps the narrow limits to which he thus confined himself upon the guitar which gave birth, in great measure, to the fantastic character of his performances. But the fervid facility of his impromptus could not be so accounted for

They must have been and were, in the notes, as well as in the words of his wild fantasias (for he not unfrequently accompanied himself with rhymed-verbal improvisations), the result of that intense mental collectedness and concentration to which I have previously alluded as observable only in particular moments of the highest artificial excitement. The words of one of these rhapsodies I have easily remembered. I was perhaps the more forcibly impressed with it as he gave it, because, in the under or mystic current of its meaning, I fancied that I perceived, and for the first time, a full consciousness on the part of Usher, of the tottering of his lofty reason upon her throne. The verses, which were entitled "The Haunted Palace," ran very nearly, if not accurately, thus:—

Ť

In the greenest of our valleys,
By good angels tenanted,
Once a fair and stately palace—
Radiant palace—reared its head.
In the monarch Thought's dominion—
It stood there!
Never seraph spread a pinion
Over fabric half so fair.

11

Banners yellow, glorious, golden,
On its roof did float and flow
(This—all this—was in the olden
Time long ago);
And every gentle air that dallied,
In that sweet day,
Along the ramparts plumed and pallid,
A wingèd odor went away.

117

Wanderers in that happy valley
Through two luminous windows saw
Spirits moving musically
To a lute's well-tuned law:
Round about a throne, where sitting
(Porphyrogene!)
In state his glory well befitting,
The ruler of the realm was seen.

IV

And all with pearl and ruby glowing
Was the fair palace door,
Through which came flowing, flowing, flowing
And sparkling evermore,
A troop of Echoes whose sweet duty
Was but to sing,
In voices of surpassing beauty,
The wit and wisdom of their king.

v

But evil things, in robes of sorrow, Assailed the monarch's high estate; (Ah, let us mourn, for never morrow Shall dawn upon him, desolate!) And, round about his home, the glory That blushed and bloomed Is but a dim-remembered story Of the old time entombed.

#### VI

And travellers now within that valley,
Through the red-litten windows see
Vast forms that move fantastically
To a discordant melody;
While, like a rapid ghastly river,
Through the pale door,
A hideous throng rushed out forever,
And laugh—but smile no more.

I well remember that suggestions arising from this ballad led us into a train of thought wherein there became manifest an opinion of Usher's, which I mention not so much on account of its novelty (for other men have thought thus), as on account of the pertinacity with which he maintained it. This opinion, in its general form, was that of the sentience of all vegetable things. But, in his disordered fancy, the idea had assumed a more daring character, and trespassed, under certain conditions, upon the kingdom of inorganisation. I lack words to express the full extent, or the earnest abandon of his persuasion. The belief, however, was connected (as I have previously hinted) with the grey stones of the home of his forefathers. The conditions of the sentience had been here, he imagined, fulfilled in the method of collocation of these stones—in the order of their arrangement, as well as in that of the many fungi which overspread them, and of the decayed trees which stood around—above all, in the long, undisturbed endurance of this arrangement, and in its reduplication in the still waters of the tarn. Its evidence—the evidence of the sentience—was to be seen, he said (and I here started as he spoke), in the gradual yet certain condensation of an atmosphere of their own about the waters and the walls. The result was discoverable, he added, in that silent yet importunate and terrible influence which for centuries had moulded the destinies of his family, and which made him what I now saw him-what he was. Such opinions need no comment, and I will make none.

Our books—the books which for years had formed no small portion of the mental existence of the invalid—were,

<sup>&</sup>lt;sup>1</sup> Watson, Dr. Percival, Spallanzani, and especially the Bishop of Llandaff. See "Chemical Essays," vol. v.

as might be supposed, in strict keeping with this character of phantasm. We pored together over such works as the Ververt et Chartreuse of Gresset; the Belphegor of Machiavelli; the Heaven and Hell of Swedenborg; the Subterranean Voyage of Nicholas Klimm by Holberg; the Chiromancy of Robert Flud, of Jean D'Indaginé, and of De la Chambre; the Journey into the Blue Distance of Tieck; and the City of the Sun of Campanella. One favourite volume was a small octavo edition of the Directorium Inquisitorium, by the Dominican Eymeric de Gironne; and there were passages in Pomponius Mela about the old African Satyrs and Egipans, over which Usher would sit dreaming for hours. His chief delight, however, was found in the perusal of an exceedingly rare and curious book in quarto Gothic-the manual of a forgotten church—the Vigilae Mortuorum secundum Chorum Ecclesiae Maguntinae.

I could not help thinking of the wild ritual of this work, and of its probable influence upon the hypochondriac, when, one evening, having informed me abruptly that the lady Madeline was no more, he stated his intention of preserving her corpse for a fortnight (previously to its final interment) in one of the numerous vaults within the main walls of the building. The worldly reason, however, assigned for this singular proceeding was one which I did not feel at liberty to dispute. The brother had been led to his resolution (so he told me) by consideration of the unusual character of the malady of the deceased, of certain obtrusive and eager inquiries on the part of her medical man, and of the remote and exposed situation of the burial-ground of the family. will not deny that when I called to mind the sinister countenance of the person whom I met upon the staircase on the day of my arrival at the house, I had no desire to oppose what I regarded as at best but a harmless and by no means an unnatural precaution.

At the request of Usher, I personally aided him in the arrangements for the temporary entombment. The body having been encoffined, we two alone bore it to its rest. The vault in which we placed it (and which had been so long unopened that our torches, half smothered in its oppressive atmosphere, gave us little opportunity for investigation) was

small, damp, and entirely without means of admission for light, lying at great depth immediately beneath that portion of the building in which was my own sleeping apartment. It had been used apparently in remote feudal times for the worst purposes of a donjon-keep, and in later days as a place of deposit for powder or some other highly-combustible substance, as a portion of its floor, and the whole interior of a long archway through which we reached it, were carefully sheathed with copper. The door, of massive iron, had been also similarly protected. Its immense weight caused an unusually sharp grating sound as it moved upon its hinges.

Having deposited our mournful burden upon tressels within this region of horror, we partially turned aside the vet unscrewed lid of the coffin and looked upon the face of the tenant. A striking similitude between the brother and sister now first arrested my attention, and Usher, divining perhaps my thoughts, murmured out some few words from which I learned that the deceased and himself had been twins, and that sympathies of a scarcely intelligible nature had always existed between them. Our glances, however, rested not long upon the dead-for we could not regard her unawed. The disease which had thus entombed the lady in the maturity of youth had left, as usual in all maladies of a strictly cataleptical character, the mockery of a faint blush upon the bosom and the face, and that suspiciously lingering smile upon the lip which is so terrible in death. We replaced and screwed down the lid, and having secured the door of iron, made our way with toil into the scarcely less gloomy apartments of the upper portion of the house.

And now, some days of bitter grief having elapsed, an observable change came over the features of the mental disorder of my friend. His ordinary manner had vanished. His ordinary occupations were neglected or forgotten. He roamed from chamber to chamber with hurried, unequal, and objectless step. The pallor his countenance had assumed, if possible, a more ghastly hue—but the luminousness of his eye had utterly gone out. The once occasional huskiness of his tone was heard no more, and a tremulous quaver, as if of extreme terror, habitually characterised his utterance. There were times indeed when I thought his unceasingly agitated

mind was labouring with some oppressive secret, to divulge which he struggled for the necessary courage. At times again I was obliged to resolve all into the mere inexplicable vagaries of madness, for I beheld him gazing upon vacancy for long hours in an attitude of the profoundest attention, as if listening to some imaginary sound. It was no wonder that his condition terrified—that it infected me. I felt creeping upon me, by slow yet certain degrees, the wild influences of his own

fantastic yet impressive superstitions.

It was especially upon retiring to bed late in the night of the seventh or eight day after the placing of the lady Madeline within the donjon that I experienced the full power of such feelings. Sleep came not near my couch-while the hours waned and waned away. I struggled to reason off the nervousness which had dominion over me. I endeavoured to believe that much, if not all, of what I felt was due to the bewildering influence of the gloomy furniture of the roomof the dark and tattered draperies which, tortured into motion by the breath of a rising tempest, swaved fitfully to and fro upon the walls, and rustled uneasily about the decorations of the bed. But my efforts were fruitless. An irrepressible tremor gradually pervaded my frame, and at length there sat upon my very heart an incubus of utterly causeless alarm. Shaking this off with a gasp and a struggle, I uplifted myself upon the pillows, and peering earnestly within the intense darkness of the chamber, hearkened-I know not why, except that an instinctive spirit prompted me-to certain low and indefinite sounds which came, through the pauses of the storm, at long intervals, I knew not whence. Overpowered by an intense sentiment of horror, unaccountable yet unendurable, I threw on my clothes with haste (for I felt that I should sleep no more during the night), and endeavoured to arouse myself from the pitiable condition into which I had fallen, by pacing rapidly to and fro through the apartment.

I had taken but few turns in this manner, when a light step on an adjoining staircase arrested my attention. I presently recognised it as that of Usher. In an instant afterward he rapped with a gentle touch at my door, and entered, bearing a lamp. His countenance was as usual cadaverously wan—but, moreover, there was a species of mad hilarity in his

eyes—an evidently restrained *hysteria* in his whole demeanour. His air appalled me—but anything was preferable to the solitude which I had so long endured, and I even welcomed his presence as a relief.

"And you have not seen it?" he said abruptly, after having stared about him for some moments in silence—"you have not then seen it?—but, stay! you shall." Thus speaking, and having carefully shaded his lamp, he hurried to one of the casements, and threw it freely open to the storm.

The impetuous fury of the entering gust nearly lifted us from our feet. It was indeed a tempestuous yet sternly beautiful night, and one wildly singular in its terror and its beauty. A whirlwind had apparently collected its force in our vicinity, for there were frequent and violent alterations in the direction of the wind, and the exceeding density of the clouds (which hung so low as to press upon the turrets of the house) did not prevent our perceiving the lifelike velocity with which they flew careering from all points against each other without passing away into the distance.

I say that even their exceeding density did not prevent our perceiving this—yet we had no glimpse of the moon or stars—nor was there any flashing forth of the lightning. But the under surfaces of the huge masses of agitated vapour, as well as all terrestrial objects immediately around us, were glowing in the unnatural light of a faintly luminous and distinctly visible gaseous exhalation which hung about and enshrouded the mansion.

"You must not—you shall not behold this!" said I, shudderingly, to Usher, as I led him with a gentle violence from the window to a seat. "These appearances which bewilder you are merely electrical phenomena not uncommon, or it may be that they have their ghastly origin in the rank miasma of the tarn. Let us close this casement; the air is chilling and dangerous to your frame. Here is one of your favourite romances. I will read, and you shall listen; and so we will pass away this terrible night together."

The antique volume which I had taken up was the Mad

The antique volume which I had taken up was the Mad Trist of Sir Launcelot Canning, but I had called it a favourite of Usher's more in sad jest than in earnest; for, in

truth, there is little in its uncouth and unimaginative prolixity which could have interest for the lofty and spiritual ideality of my friend. It was, however, the only book immediately at hand, and I indulged a vague hope that the excitement which now agitated the hypochondriac might find relief (for the history of mental disorder is full of similar anomalies) even in the extremeness of the folly which I should read. Could I have judged, indeed, by the wild overstrained air of vivacity with which he hearkened, or apparently hearkened, to the words of the tale, I might well have congratulated myself upon the success of my design.

I had arrived at that well-known portion of the story where Ethelred, the hero of the Trist, having sought in vain for peaceable admission into the dwelling of the hermit, proceeds to make good an entrance by force. Here, it will be

remembered, the words of the narrative ran thus:

"And Ethelred, who was by nature of a doughty heart, and who was now mighty withal, on account of the powerfulness of the wine which he had drunken, waited no longer to hold parley with the hermit, who in sooth was of an obstinate and maliceful turn, but feeling the rain upon his shoulders, and fearing the rising of the tempest, uplifted his mace outright, and with blows made quickly room in the plankings of the door for his gauntled hand; and now pulling therewith sturdily, he so cracked and ripped, and tore all asunder, that the noise of the dry and hollow-sounding wood alarummed and reverberated throughout the forest."

At the termination of this sentence I started, and for a moment paused, for it appeared to me (although I at once concluded that my excited fancy had deceived me) that from some very remote portion of the mansion there came indistinctly to my ears what might have been, in its exact similarity of character, the echo (but a stifled and dull one certainly) of the very cracking and ripping sound which Sir Launcelot had so particularly described. It was beyond doubt the coincidence alone which had arrested my attention; for amid the rattling of the sashes of the casements, and the ordinary commingled noises of the still increasing storm, the sound in itself had nothing surely which should have interested or disturbed me. I continued the story:

"But the good champion Ethelred, now entering within the door, was soon enraged and amazed to perceive no signal of the maliceful hermit; but in the stead thereof, a dragon of a scaly and prodigious demeanour, and of a fiery tongue, which sate in guard before a palace of gold, with a floor of silver; and upon the wall there hung a shield of shining brass with this legend enwritten—

Who entereth herein, a conqueror hath bin; Who slayeth the dragon, the shield he shall win.

And Ethelred uplifted his mace, and struck upon the head of the dragon, which fell before him, and gave up his pesty breath, with a shriek so horrid and harsh, and withal so piercing, that Ethelred had fain to close his ears with his hands against the dreadful noise of it, the like whereof was never before heard."

Here again I paused abruptly, and now with a feeling of wild amazement—for there could be no doubt whatever that in this instance I did actually hear (although from what direction it proceeded I found it impossible to say) a low and apparently distant, but harsh, protracted, and most unusual screaming or grating sound—the exact counterpart of what my fancy had already conjured up for the dragon's unnatural shriek as described by the romancer.

Oppressed, as I certainly was upon the occurrence of this second and most extraordinary coincidence, by a thousand conflicting sensations, in which wonder and extreme terror were predominate, I still retained sufficient presence of mind to avoid exciting by any observation the sensitive nervousness of my companion. I was by no means certain that he had noticed the sounds in question, although, assuredly, a strange alteration had during the last few minutes taken place in his demeanour. From a position fronting my own, he had gradually brought round his chair, so as to sit with his face to the door of the chamber; and thus I could but partially perceive his features, although I saw that his lips trembled as if he were murmuring inaudibly. His head had dropped upon his breast, yet I knew that he was not asleep, from the wide and rigid opening of the eye as I caught a glance of it in profile. The motion of his body too was at

variance with this idea—for he rocked from side to side with a gentle yet constant and uniform sway. Having rapidly taken notice of all this, I resumed the narrative of Sir Launcelot, which thus proceeded:

"And now, the champion having escaped from the terrible fury of the dragon, bethinking himself of the brazen shield, and of the breaking up of the enchantment which was upon it, removed the carcase from out of the way before him, and approached valorously over the silver pavement of the castle to where the shield was upon the wall; which in sooth tarried not for his full coming, but fell down at his feet upon the silver floor with a mighty great and terrible ringing sound."

No sooner had these syllables passed my lips, then—as if a shield of brass had indeed at the moment fallen heavily upon a floor of silver—I became aware of a distinct, hollow, metallic, and clangorous, yet apparently muffled, reverberation. Completely unnerved, I leaped to my feet, but the measured rocking movement of Usher was undisturbed. I rushed to the chair in which he sat. His eyes were bent fixedly before him, and throughout his whole countenance there reigned a stony rigidity. But, as I placed my hand upon his shoulder, there came a strong shudder over his whole person; a sickly smile, quivered about his lips, and I saw that he spoke in a low, hurried, and gibbering murmur, as if unconscious of my presence. Bending closely over him, I at length drank in the hideous import of his words.

"Not hear it?—yes, I hear it, and have heard it. Long—long—long—many minutes, many hours, many days, have I heard it—yet I dared not—oh, pity me, miserable wretch that I am!—I dared not— I dared not speak. We have put her living in the tomb! Said I not that my senses were acute? I now tell you that I heard her first feeble movements in the hollow coffin. I heard them—many, many days ago—yet I dared not—I dared not speak! And now—to-night—Ethelred—ha! ha!—the breaking of the hermit's door, and the death-cry of the dragon, and the clangour of the shield!—say, rather, the rending of her coffin, and the grating of the iron hinges of her prison, and her struggles within the coppered archway of the vault. O whither shall I fly? Will she not be here anon? Is she not hurrying to upbraid me for my

haste? Have I not heard her footstep on the stair? Do I not distinguish that heavy and horrible beating of her heart? Madman!" Here he sprang furiously to his feet, and shrieked out his syllables, as if in the effort he were giving up his soul—"Madman! I tell you that she now stands without the door!"

As if in the superhuman energy of his utterance there had been found the potency of a spell—the huge antique panels to which the speaker pointed, threw slowly back, upon the instant, their ponderous and ebony jaws. It was the work of the rushing gust—but then without those doors there did stand the lofty and enshrouded figure of the lady Madeline of Usher. There was blood upon her white robes, and the evidence of some bitter struggle upon every portion of her emaciated frame. For a moment she remained trembling and reeling to and fro upon the threshold—then, with a low moaning cry, fell heavily inward upon the person of her brother, and in her violent and now final death-agonies, bore him to the floor a corpse, and a victim to the terrors he had anticipated.

From that chamber and from that mansion I fled aghast. The storm was still abroad in all its wrath as I found myself crossing the old causeway. Suddenly there shot along the path a wild light, and I turned to see whence a gleam so unusual could have issued, for the vast house and its shadows were alone behind me. The radiance was that of the full. setting, and blood-red moon, which now shone vividly through that once barely-discernible fissure, of which I have before spoken as extending from the roof of the building in a zigzag direction to the base. While I gazed, this fissure rapidly widened; there came a fierce breath of the whirlwind; the entire orb of the satellite burst at once upon my sight: my brain reeled as I saw the mighty walls rushing asunder; there was a long tumultuous shouting sound like the voice of a thousand waters, and the deep and dark tarn at my feet closed sullenly and silent over the fragments of the "House of Usher."



# THE PURLOINED LETTER

Nil sapientiæ odiosius acumine nimio.-Seneca

▲ T Paris, just after dark one gusty evening in the autumn of 18-, I was enjoying the twofold luxury of meditation and a meerschaum, in company with my friend C. Auguste Dupin, in his little back library, or bookcloset, au troisième, No. 33 Rue Donot, Faubourg St. Germain. For one hour at least we had maintained a profound silence; while each, to any casual observer, might have seemed intently and exclusively occupied with the curling eddies of smoke that oppressed the atmosphere of the chamber. For myself, however, I was mentally discussing certain topics which had formed matter for conversation between us at an earlier period of the evening: I mean the affair of the Rue Morgue, and the mystery attending the murder of Marie Rogêt, I looked upon it, therefore, as something of a coincidence, when the door of our apartment was thrown open and admitted our old acquaintance, Monsieur G-, the Prefect of the Parisan police.

We gave him a hearty welcome; for there was nearly half as much of the entertaining as of the contemptible about the man, and we had not seen him for several years. We had been sitting in the dark, and Dupin now arose for the purpose of lighting a lamp, but sat down again, without doing so, upon G.'s saying that he had called to consult us, or rather to ask the opinion of my friend, about some official business which had occasioned a great deal of

trouble.

"If it is any point requiring reflection," observed Dupin, as he forebore to enkindle the wick, "we shall examine it to better purpose in the dark."

"That is another of your odd notions," said the Prefect, who had a fashion of calling everything "odd" that was be-

youd his comprehension, and thus lived amid an absolute legion of "oddities."

"Very true," said Dupin, as he supplied his visitor with a pipe, and rolled towards him a comfortable chair.

"And what is the difficulty now?" I asked. "Nothing more

in the assassination way. I hope?"

"Oh no; nothing of that nature. The fact is, the business is very simple indeed, and I make no doubt that we can manage it sufficiently well ourselves; but then I thought Dupin would like to hear the details of it, because it is so excessively odd."

"Simple and odd," said Dupin.

"Why, yes; and not exactly that either. The fact is, we have all been a good deal puzzled because the affair is so simple, and yet baffles us altogether."

"Perhaps it is the very simplicity of the thing which puts

you at fault," said my friend.

"What nonsense you do talk!" replied the Prefect, laughing heartily.

"Perhaps the mystery is a little too plain," said Dupin. "Oh, good heavens! whoever heard of such an idea?"

"A little too self-evident."

"Ha! ha! ha!—ha! ha! ha!—ho! ho! ho!" roared our visitor, profoundly amused, "Oh, Dupin, you will be the death of me yet!"

"And what, after all, is the matter on hand?" I asked.

"Why, I will tell you," replied the Prefect, as he gave a long, steady, and contemplative puff, and settled himself in his chair. "I will tell you in a few words; but, before I begin, let me caution you that this is an affair demanding the greatest secrecy, and that I should most probably lose the position I now hold were it known that I confided it to anyone."

"Proceed," said I.

"Or not," said Dupin.

"Well, then; I have received personal information, from a very high quarter that a certain document of the last importance has been purloined from the royal apartments. The individual who purloined it is known; this beyond a doubt; he was seen to take it. It is known, also, that it still remains in his possession."

"How is this known?" asked Dupin.

"It is clearly inferred," replied the Prefect, "from the nature of the document, and from the non-appearance of certain results which would at once arise from its passing out of the robber's possession;—that is to say, from his employing it as he must design in the end to employ it."

"Be a little more explicit," I said.

"Well, I may venture so far as to say that the paper gives its holder a certain power in a certain quarter where such power is immensely valuable." The Prefect was fond of the cant of diplomacy.

"Still I do not quite understand," said Dupin.

"No? Well; the disclosure of the document to a third person, who shall be nameless, would bring in question the honour of a personage of most exalted station; and this fact gives the holder of the document an ascendency over the illustrious personage whose honour and peace are so jeopardised."

"But this ascendency," I interposed, "would depend upon the robber's knowledge of the loser's knowledge of the

robber. Who would dare-"

"The thief," said G-, "is the Minister D-, who dares all things, those unbecoming as well as those becoming a man. The method of the theft was not less ingenious than bold. The document in question—a letter, to be frank—had been received by the personage robbed while alone in the royal boudoir. During its perusal she was suddenly interrupted by the entrance of the other exalted personage from whom especially it was her wish to conceal it. After a hurried and vain endeavour to thrust it in a drawer, shewas forced to place it, open as it was, upon a table. address, however, was uppermost, and the contents thus unexposed, the letter escaped notice. At this juncture enters the Minister D—. His lynx eye immediately perceives the paper, recognises the handwriting of the address, observes the confusion of the personage addressed, and fathoms her secret. After some business transactions; hurried through inhis ordinary manner, he produces a letter somewhat similar

to the one in question, opens it, pretends to read it, and then places it in close juxtaposition to the other. Again he converses for some fifteen minutes upon the public affairs. At length, in taking leave, he takes also from the table the letter to which he had no claim. Its rightful owner saw, but of course dared not call attention to the act in the presence of the third personage, who stood at her elbow. The minister decamped, leaving his own letter—one of no importance—upon the table."

"Here, then," said Dupin to me, "you have precisely what you demand to make the ascendency complete—the robber's

knowledge of the loser's knowledge of the robber."

"Yes," replied the Prefect; "and the power thus attained has, for some months past, been wielded for political purposes to a very dangerous extent. The personage robbed is more thoroughly convinced every day of the necessity of reclaiming her letter. But this of course cannot be done openly. In fine, driven to despair, she has committed the matter to me."

"Than whom," said Dupin, amid a perfect whirlwind of smoke, "no more sagacious agent could, I suppose, be desired, or ever imagined."

"You flatter me," replied the Prefect; "but it is possible

that some such opinion may have been entertained."

"It is clear," said I, "as you observe, that the letter is still in possession of the minister; since it is this possession, and not any employment of the letter, which bestows the power.

With the employment the power departs."

"True," said G—; "and upon this conviction I proceeded. My first care was to make thorough search of the minister's hotel; and here my chief embarrassment lay in the necessity of searching without his knowledge. Beyond all things, I have been warned of the danger which would result from giving him reason to suspect our design."

"But," said I, "you are quite au fait in these investigations. The Parisian police have done this thing often before."

"O yes; and for this reason I did not despair. The habits of the minister gave me, too, a great advantage. He is frequently absent from home all night. His servants are by no means numerous. They sleep at a distance from their mas-

ter's apartment, and being chiefly Neapolitans, are readily made drunk. I have keys, as you know, with which I can open any chamber or cabinet in Paris. For three months a night has not passed, during the greater part of which I have not been engaged, personally, in ransacking the D—Hotel. My honour is interested, and, to mention a great secret, the reward is enormous. So I did not abandon the search until I had become fully satisfied that the thief is a more astute man than myself. I fancy that I have investigated every nook and corner of the premises in which it is possible that the paper can be concealed."

"But is it not possible," I suggested, "that although the letter may be in possession of the minister, as it unquestionably is, he may have concealed it elsewhere than upon his

own premises?"

"This is barely possible," said Dupin. "The present peculiar condition of affairs at court, and especially of those intrigues in which D—— is known to be involved, would render the instant availability of the document—its susceptibility of being produced at a moment's notice—a point of nearly equal importance with its possession."

"Its susceptibility of being produced?" said I. "That is to say of being destroyed," said Dupin.

"True," I observed; "the paper is clearly then upon the premises. As for its being upon the person of the minister, we may consider that as out of the question."

"Entirely," said the Prefect. "He has been twice waylaid, as if by footpads, and his person rigorously searched under

my own inspection."

"You might have spared yourself this trouble," said Dupin. "D—, I presume, is not altogether a fool, and, if not, must have anticipated these waylayings as a matter of course."

"Not altogether a fool," said G-; "but then he's a poet,

which I take to be only one remove from a fool."

"True," said Dupin, after a long and thoughtful whiff from his meerschaum, "although I have been guilty of certain doggerel myself."

"Suppose you detail," said I, "the particulars of your

search."

"Why, the fact is, we took our time, and we searched everywhere. I have had long experience in these affairs. I took the entire building, room by room; devoting the nights of a whole week to each. We examined, first, the furniture of each apartment. We opened every possible drawer; and I presume you know that, to a properly trained police-agent, such a thing as a secret drawer is impossible. Any man is a dolt who permits a 'secret' drawer to escape him in a search of this kind. The thing is so plain. There is a certain amount of bulk—of space—to be accounted for in every cabinet. Then we have accurate rules. The fiftieth part of a line could not escape us. After the cabinets we took the chairs. The cushions we probed with the fine long needles you have seen me employ. From the tables we removed the tops."

"Why so?"

"Sometimes the top of a table, or other similarly arranged piece of furniture, is removed by the person wishing to conceal an article; then the leg is excavated, the article deposited within the cavity, and the top replaced. The bottoms and tops of bedposts are employed in the same way."

"But could not the cavity be detected by sounding?" I

asked.

"By no means, if, when the article is deposited, a sufficient wadding of cotton be placed around it. Besides, in our case, we were obliged to proceed without noise."

"But you could not have removed—you could not have taken to pieces all articles of furniture in which it would have been possible to make a deposit in the manner you mention. A letter may be compressed into a thin spiral roll, not differing much in shape or bulk from a large knitting-needle, and in this form it might be inserted into the rung of a chair, for example. You did not take to pieces all the

chairs?"

"Certainly not; but we did better—we examined the rungs of every chair in the hotel, and, indeed, the jointings of every description of furniture, by the aid of a most powerful microscope. Had there been any traces of recent disturbance we should not have failed to detect it instantly. A single grain of gimlet-dust, for example, would have been as ob-

vious as an apple. Any disorder in the glueing—any unusual gaping in the joints—would have sufficed to insure detection."

"I presume you looked to the mirrors, between the boards and the plates, and you probed the beds and the bedclothes, as well as the curtains and carpets."

"That of course; and when we had absolutely completed every particle of the furniture in this way, then we examined the house itself. We divided its entire surface into compartments, which we numbered, so that none might be missed; then we scrutinised each individual square inch throughout the premises, including the two houses immediately adjoining, with the microscope, as before."

"The two houses adjoining?" I exclaimed; "you must have

had a great deal of trouble."

"We had; but the reward offered is prodigious."

"You include the grounds about the houses?"

"All the grounds are paved with brick. They gave us comparatively little trouble. We examined the moss between the bricks, and found it undisturbed."

"You looked among D——'s papers, of course, and into the books of the library?"

"Certainly; we opened every package and parcel; we not only opened every book, but we turned over every leaf in each volume, not contenting ourselves with a mere shake, according to the fashion of some of our police-officers. We also measured the thickness of every book-cover, with the most accurate admeasurement, and applied to each the most jealous scrutiny of the microscope. Had any of the bindings been recently meddled with, it would have been utterly impossible that the fact should have escaped observation. Some five or six volumes, just from the hands of the binder, we carefully probed, longitudinally, with the needles."

"You explored the floors beneath the carpets?"

"Beyond doubt. We removed every carpet, and examined the boards with the microscope."

"And the paper on the walls?"

"Yes."

"You looked into the cellars?"

"We did."

"Then," I said, "you have been making a miscalculation, and the letter is not upon the premises, as you suppose."

"I fear you are right there," said the Prefect. "And

now, Dupin, what would you advise me to do?"

"To make a thorough re-search of the premises."

"That is absolutely needless," replied G——. "I am not more sure that I breathe than I am that the letter is not at the Hotel."

"I have no better advice to give you," said Dupin. "You have, of course, an accurate description of the letter?"

"Oh yes!"—And here the Prefect, producing a memorandum-book, proceeded to read aloud a minute account of the internal, and especially of the external appearance of the missing document. Soon after finishing the perusal of this description, he took his departure, more entirely depressed in spirits than I had ever known the good gentleman before.

In about a month afterwards he paid us another visit, and found us occupied very nearly as before. He took a pipe and a chair and entered into some ordinary conversation.

At length I said,-

"Well, but G—, what of the purloined letter? I presume you have at last made up your mind that there is no such thing as overreaching the Minister?"

"Confound him, say I—yes; I made the re-examination, however, as Dupin suggested—but it was all labour lost, as I knew it would be."

"How much was the reward offered, did you say?" asked

Dupin.

"Why, a very great deal—a very liberal reward—I don't like to say how much, precisely; but one thing I will say, that I wouldn't mind giving my individual cheque for fifty thousand francs to anyone who could obtain me that letter. The fact is, it is becoming of more and more importance every day; and the reward has been lately doubled. If it were trebled, however, I could do no more than I have done."

"Why, yes," said Dupin, drawlingly, between the whiffs of his meerschaum, "I really—think, G——, you have not exerted yourself—to the utmost in this matter. You might

-do a little more, I think, eh?"

<sup>&</sup>quot;How?-in what way?"

"Why—puff, puff—you might—puff, puff—employ counsel in the matter, eh?—puff, puff, puff. Do you remember the story they tell of Abernethy?"

"No; hang Abernethy!"

"To be sure! hang him and welcome. But, once upon a time, a certain rich miser conceived the design of sponging upon this Abernethy for a medical opinion. Getting up, for this purpose, an ordinary conversation in a private company, he insinuated the case to his physician as that of an imaginary individual.

"'We will suppose,' said the miser, 'that his symptoms are such and such; now, doctor, what would you have

directed him to take?"

"'Take!' said Abernethy, 'why, take advice, to be sure.'"
"But," said the Prefect, a little discomposed, "I am perfectly willing to take advice, and to pay for it. I would really give fifty thousand francs to any who would aid me in the matter."

"In that case," replied Dupin, opening a drawer, and producing a cheque-book "you may as well fill me up a cheque for the amount mentioned. When you have signed it, I will

hand you the letter."

I was astounded. The Prefect appeared absolutely thunder-stricken. For some minutes he remained speechless and motionless, looking incredulously at my friend with open mouth, and eves that seemed starting from their sockets; then, apparently recovering himself in some measure, he seized a pen, and after several pauses and vacant stares, finally filled up and signed a cheque for fifty thousand francs, and handed it across the table to Dupin. The latter examined it carefully and deposited it in his pocket-book; then, unlocking an escritoire, took thence a letter and gave it to the Prefect. This functionary grasped it in a perfect agony of joy, opened it with a trembling hand, cast a rapid glance at its contents, and then scrambling and struggling to the door, rushed at length unceremoniously from the room and from the house, without having uttered a syllable since Dupin had requested him to fill up the cheque.

When he had gone my friend entered into some explana-

tions.

"The Parisian police," he said "are exceedingly able in their way. They are persevering, ingenious, cunning, and thoroughly versed in the knowledge which their duties seem chiefly to demand. Thus, when G—— detailed to us his mode of searching the premises at the Hotel D——, I felt entire confidence in his having made a satisfactory investigation—so far as his labours extended."

"So far as his labours extended?" said I.

"Yes," said Dupin. "The measures adopted were not only the best of their kind, but carried out to absolute perfection. Had the letter been deposited within the range of their search, these fellows would, beyond question, have found it.

I merely laughed, but he seemed quite serious in all that he said.

"The measures, then," he continued, "were good in their kind, and well executed; their defect lay in their being inapplicable to the case, and to the man. A certain set of highlyingenious resources are with the Prefect a sort of Procrustean bed, to which he forcibly adapts his designs. But he perpetually errs by being too deep or too shallow for the matter in hand, and many a schoolboy is a better reasoner than he. I knew one about eight years of age, whose success at guessing in the game of 'even and odd' attracted universal admiration. This game is simple, and is played with marbles. One player holds in his hand a number of these toys, and demands of another whether that number is even or odd. If the guess is right the guesser wins one, if wrong, he loses one. The boy to whom I allude won all the marbles of the school. Of course, he had some principle of guessing, and this lay in mere observation and admeasurement of the astuteness of his opponents. For example, an arrant simpleton is his opponent, and holding up his closed hand asks, 'are they even or odd?' Our schoolboy replies 'odd,' and loses, but upon the second trial he wins, for he then says to himself, 'the simpleton had them even upon the first trial, and his amount of cunning is just sufficient to make him have them odd upon the second, I will therefore guess odd;' he guesses odd, and wins. Now, with a simpleton a degree above the first he would have reasoned thus: This fellow finds that in the first instance I guessed odd, and in the second he will propose to himself upon the first impulse, a simple variation from even to odd, as did the first simpleton, but then a second thought will suggest that this is too simple a variation, and finally he will decide upon putting it even as before. I will therefore guess even; he guesses even, and wins. Now, this mode of reasoning in the schoolboy, whom his fellows termed 'lucky,' what in its last analysis is it?"

"It is merely," I said, "an identification of the reasoner's

intellect with that of his opponent."

"It is," said Dupin, "and upon inquiring of the boy by what means he effected the thorough identification in which in which his success consisted, I received answer as follows: 'When I wish to find out how wise, or how stupid, or how good, or how wicked is anyone, or what are his thoughts at the moment, I fashion the expression of my face as accurately as possible in accordance with the expression of his, and then wait to see what thoughts or sentiments arise in my mind or heart, as if to match or correspond with the expression.' This response of the schoolboy lies at the bottom of all the spurious profundity which has been attributed to Rochefoucauld, to La Bruyère, to Machiavelli, and to Campanella."

"And the identification," I said, "of the reasoner's intellect with that of his opponent depends, if I understand you aright, upon the accuracy with which the opponent's intel-

lect is admeasured."

"For its practical value it depends upon this," replied Dupin; "and the Prefect and his cohort fail so frequently, first, by default of this identification, and secondly, by illadmeasurement, or rather through non-admeasurement of the intellect with which they are engaged. They consider only their own ideas of ingenuity; and in searching for anything hidden, advert only to the modes in which they would have hidden it. They are right in this much—that their own ingenuity is a faithful representative of that of the mass; but when the cunning of the individual felon is diverse in character from their own, the felon foils them of course. This always happens when it is above their own,

and very usually when it is below. They have no variation of principle in their investigations; at best, when urged by some unusual emergency, by some extraordinary reward, they extend or exaggerate their old modes of practice, without touching their principles. What, for example, in this case of D- has been done to vary the principle of action? What is all this boring, and probing, and sounding, and scrutinising with the microscope, and dividing the surface of the building into registered square inches—what is it all but an exaggeration of the application of the one principle or set of principles of search, which are based upon the one set of notions regarding human ingenuity, to which the Prefect in the long routine of his duty has been accustomed? Do you not see he has taken it for granted that all men proceed to conceal a letter-not exactly in a gimlet-hole bored in a chair-leg-but, at least, in some outof-the-way hole or corner suggested by the same tenor of thought which would urge a man to secrete a letter in a gimlet-hole bored in a chair-leg? And do you not see also that such recherché nooks for concealment are adapted only for ordinary occasions, and would be adopted only by ordinary intellects, for, in all cases of concealment, a disposal of the article concealed, a disposal of it in this recherché manner, is in the very first instance presumable and presumed, and thus its discovery depends, not at all upon the acumen, but altogether upon the mere care, patience, and determination of the seekers, and where the case is of importance, or what amounts to the same thing in the policial eyes, when the reward is of magnitude, the qualities in question have never been known to fail? You will now understand what I meant in suggesting that had the purloined letter been hidden anywhere within the limits of the Prefect's examination-in other words, had the principle of its concealment been comprehended within the principles of the Prefect-its discovery would have been a matter altogether beyond question. This functionary however, has been thoroughly mystified, and the remote source of his defeat lies in the supposition that the Minister is a fool because he has acquired renown as a poet. All fools are poets, this the Prefect feels, and he is merely guilty of a non distributio medii in thence inferring that all poets are fools."

"But is this really the poet?" I asked. "There are two brothers, I know, and both have attained reputations in letters. The Minister, I believe, has written learnedly on the Differential Calculus. He is a mathematician and no poet."

"You are mistaken; I know him well; he is both. As poet and mathematician he would reason well; as mere mathematician he could not have reasoned at all, and thus would

have been at the mercy of the Prefect."

"You surprise me," I said, "by these opinions, which have been contradicted by the voice of the world. You do not mean to set at naught the well-digested idea of centuries. The mathematical reason has long been regarded as the

reason par excellence."

"'Il ya a à parier,'" replied Dupin, quoting from Chamfort, "'que toute idée publique, toute convention reçue, est une sottise, car elle a convenu au plus grand nombre.' The mathematicians, I grant you, have done their best to promulgate the popular error to which you allude, and which is none the less an error for its promulgation as truth. With an art worthy a better cause, for example, they have insinuated the term 'analysis' into application to algebra. The French are the originators of this particular deception, but if a term is of any importance, if words derive any value from applicability, then 'analysis' conveys 'algebra' about as much as, in Latin, 'ambitus' implies 'ambition,' 'religio' 'religion,' or 'homines honesti,' a set of honourable men."

"You have a quarrel on hand, I see," said I, "with some

of the algebraists of Paris-but proceed."

"I dispute the availability, and thus the value of that reason which is cultivated in any special form other than the abstractly logical. I dispute in particular the reason educed by mathematical study. The mathematics are the science of form and quantity, mathematical reasoning is merely logic applied to observation upon form and quantity. The great error lies in supposing that even the truths of what is called pure algebra are abstract or general truths.

And this error is so egregious that I am confounded at the universality with which it has been received. Mathematical axioms are not axioms of general truth. What is true of relation-of form and quantity-is often grossly false in regard to morals, for example. In this latter science it is very usually untrue that the aggregated parts are equal to the whole. In chemistry also the axiom fails. In the consideration of motive it fails, for two motives, each of a given value, have not necessarily a value when united equal to the sum of their values apart. There are numerous other mathematical truths which are only truths within the limits of relation. But the mathematician argues from his finite truths, through habit, as if they were of an absolutely general applicability—as the world indeed imagines them to be. Bryant, in his very learned Mythology mentions an analogous source of error, when he says that 'although the Pagan fables are not believed, yet we forget ourselves continually, and make inferences from them as existing realities.' With the algebraists, however, who are Pagans themselves, the 'Pagan fables' are believed, and the inferences are made. not so much through lapse of memory as through an unaccountable addling of the brains. In short, I never yet encountered the mere mathematician who could be trusted out of equal roots, or one who did not clandestinely hold it as a point of his faith that  $x^2 + px$  was absolutely and unconditionally equal to q. Say to one of these gentlemen, by way of experiment, if you please, that you believe occasions may occur where  $x^2 + px$  is not altogether equal to q, and having made him understand what you mean, get out of his reach as speedily as convenient, for beyond doubt he will endeavour to knock you down.

"I mean to say," continued Dupin, while I merely laughed at his last observations, "that if the Minister had been no more than a mathematician, the Prefect would have been under no necessity of giving me this check. I knew him, however, as both mathematician and poet, and my measures were adapted to his capacity, with reference to the circumstances by which he was surrounded. I knew him as a courtier, too, and as a bold *intrigant*. Such a man, I considered, could not fail to be aware of the ordinary policial

medes of action. He could not have failed to anticipate and events have proved that he did not fail to anticipate—the waylayings to which he was subjected. He must have foreseen, I reflected, the secret investigations of his premises. His frequent absences from home at night, which were hailed by the Prefect as certain aids to his success, I regarded only as ruses, to afford opportunity for thorough search to the police, and thus the sooner to impress them with the conviction to which G-, in fact, did finally arrive—the conviction that the letter was not upon the premises. I felt. also, that the whole train of thought which I was at some pains in detailing to you just now, concerning the invariable principle of policial action in searches for articles concealed —I felt that this whole train of thought would necessarily pass through the mind of the Minister. It would imperatively lead him to despise all the ordinary nooks of concealment. He could not I reflected, be so weak as not to see that the most intricate and remote recess of his hotel would be as open as his commonest closets to the eyes, to the probes, to the gimlets, and to the microscopes of the Prefect. I saw, in fine, that he would be driven, as a matter of course, to simplicity, if not deliberately induced to it as a matter of choice. You will remember, perhaps, how desperately the Perfect laughed when I suggested. upon our first interview, that it was just possible this mystery troubled him so much on account of its being so very self-evident."

"Yes," said I, "I remember his merriment well. I really thought he would have fallen into convulsions."

"The material world," continued Dupin, "abounds with very strict analogies to the immaterial; and thus some colour of truth has been given to the rhetorical dogma that metaphor or simile may be made to strengthen an argument as well as to embellish a description. The principle of the vis inertiae, for example, seems to be identical in physics and metaphysics. It is not more true in the former that a large body is with more difficulty set in motion than a smaller one, and that its subsequent momentum is commensurate with this difficulty, than it is, in the latter, that intellects of the vaster capacity, while more forcible, more constant, and

more eventful in their movements than those of inferior grade, are yet the less readily moved, and more embarrassed and full of hesitation in the first few steps of their progress. Again; have you ever noticed which of the street signs over the shop-doors are the most attractive of attention?"

"I have never given the matter a thought," I said.

"There is a game of puzzles," he resumed, "which is played upon a map. One party playing requires another to find a given word—the name of town, river, state, or empire—any word, in short, upon the motley and perplexed surface of the chart. A novice in the game generally seeks to embarrass his opponents by giving them the most minutely lettered names, but the adept selects sunch words as stretch, in large characters, from one end of the chart to the other. These, like the over-largely lettered signs and placards of the streets, escape observation by dint of being excessively obvious; and here the physical oversight is precisely analogous with the moral inapprehension by which the intellect suffers to pass unnoticed those considerations which are too obtrusively and too palpably self-evident. But this is a point. it appears, somewhat above or beneath the understanding of He never once thought it probable, or the Prefect. possible, that the Minister had deposited the letter immediately beneath the nose of the whole world, by way of best preventing any portion of that world from perceiving it.

"But the more I reflected upon the daring, dashing, and discriminating ingenuity of D—; upon the fact that the document must always have been at hand if he intended to use it to good purpose; and upon the decisive evidence, obtained by the Prefect, that it was not hidden within the limits of that dignitary's ordinary search—the more satisfied I became that, to conceal this letter, the Minister had resorted to the comprehensive and sagacious expedient of

not attempting to conceal it at all.

"Full of these ideas, I prepared myself with a pair of green spectacles, and called one fine morning, quite by accident, at the Ministerial hotel. I found D—— at home, yawning, lounging, and dawdling, as usual, and pretending to

be in the last extremity of *ennui*. He is, perhaps, the most really energetic human being now alive—but that is only when nobody sees him.

To be even with him, I complained of my weak eyes, and lamented the necessity of the spectacles, under cover of which I cautiously and thoroughly surveyed the whole apartment, while seemingly intent only upon the conversation of my host.

"I paid especial attention to a large writing-table near which he sat, and upon which lay confusedly some miscellaneous letters and other papers, with one or two musical instruments and a few books. Here, however, after a long and very deliberate scrutiny, I saw nothing to excite particu-

lar suspicion.

"At length my eyes, in going the circuit of the room, fell upon a trumpery filigree card-rack of pasteboard that hung dangling by a dirty blue ribbon from a little brass knob just beneath the middle of the mantelpiece. In this rack, which had three or four compartments, were five or six visiting cards and a solitary letter. This last was much soiled and crumpled. It was torn nearly in two, across the middle—as if a design, in the first instance, to tear it entirely up as worthless, had been altered, or stayed, in the second. It had a large black seal, bearing the D—cipher very conspicuously, and was addressed, in a diminutive female hand, to D—, the Minister, himself. It was thrust carelessly, and even, as it seemed, contemptuously, into one of the uppermost divisions of the rack.

"No sooner had I glanced at this letter than I concluded it to be that of which I was in search. To be sure, it was to all appearance radically different from the one of which the Prefect had read us so minute a description. Here the seal was large and black, with the D— cipher; there it was small and red, with the ducal arms of the S— family. Here the address, to the Minister, was diminutive and feminine; there the superscription, to a certain royal personage, was markedly bold and decided; the size alone formed a point of correspondence. But, then, the radicalness of these differences, which was excessive; the dirt; the soiled and torn condition of the paper, so inconsistent with

the *true* methodical habits of D——, and so suggestive of a design to delude the beholder into an idea of the worthlessness of the document; these things, together with the hyper-obtrusive situation of this document, full in the view of every visitor, and thus exactly in accordance with the conclusions to which I had previously arrived: these things, I say, were strongly corroborative of suspicion in one who came with the intention to suspect.

"I protracted my visit as long as possible, and while I maintained a most animated discussion with the Minister upon a topic which I knew well had never failed to interest and excite him, I kept my attention really riveted upon the letter. In this examination I committed to memory its external appearance and arrangement in the rack; and also fell, at length, upon a discovery which set at rest whatever trivial doubt I might have entertained. In scrutinising the edges of the paper I observed them to be more chafed than seemed necessary. They presented the broken appearance which is manifested when a stiff paper, having been once folded and pressed with a folder, is refolded in a reversed direction, in the same creases or edges which had formed the original fold. This discovery was sufficient. It was clear to me that the letter had been turned as a glove, inside out, re-directed and re-sealed. I bade the Minister good morning and took my departure at once, leaving a gold snuff-box upon the table.

"The next morning I called for the snuff-box, when we resumed quite eagerly the conversation of the preceding day. While thus engaged, however, a loud report as if of a pistol, was heard immediately beneath the windows of the hotel, and was succeeded by a series of fearful screams, and the shoutings of a terrified mob. D—— rushed to a casement, threw it open, and looked out. In the meantime I stepped to the card-rack, took the letter, put it in my pocket, and replaced it by a facsimile (so far as regards externals), which I had carefully prepared at my lodgings—imitating the D—— cipher very readily by means of a seal formed of bread.

"The disturbance in the street had been occasioned by the frantic behaviour of a man with a musket. He had fired it

among a crowd of women and children. It proved, however, to have been without ball, and the fellow was suffered to go his way as a lunatic or a drunkard. When he had gone, D—— came from the window, wither I had followed him immediately upon securing the object in view. Soon afterwards I bade him farewell. The pretended lunatic was a man in my own pay."

"But what purpose had you," I asked, "in replacing the letter by a facsimile? Would it not have been better at the

first visit to have seized it openly, and departed?"

"D-," replied Dupin, "is a desperate man and a man of His hotel, too, is not without attendants devoted to his interests. Had I made the wild attempt you suggest I might never have left the Ministerial presence alive. The good people of Paris might have heard of me no more. But I had an object apart from these considerations. You know my political prepossessions. In this matter, I act as a partisan of the lady concerned. For eighteen months the Minister has had her in his power. She has now him in hers-since, being unaware that the letter is not in his possession, he will proceed with his exactions as if it was. Thus will he inevitably commit himself at once to his political destruction. His downfall, too, will not be more precipitate than awkward. It is all very well to talk about the facilis descensus Averni, but in all kinds of climbing, as Catalani said of singing, it is far more easy to get up than to come down. In the present instance I have no sympathy at least no pity-for him who descends. He is that monstrum horrendum, an unprincipled man of genius. I confess, however, that I should like very well to know the precise character of his thoughts, when, being defied by her whom the Prefect terms 'a certain personage,' he is reduced to opening the letter which I left for him in the card-rack."

"How? did you put anything particular in it?"

"Why—it did not seem altogether right to leave the interior blank—that would have been insulting. D——, at Vienna, once did me an evil turn, which I told him, quite good-humouredly, that I should remember. So, as I knew he would feel some curiosity in regard to the identity of the

person who had outwitted him, I thought it a pity not to give him a clue. He is well acquainted with my MS., and I just copied into the middle of the blank sheet the words—

> "'----- Un-dessein si funeste, S' il n' est digne d' Atrée, est digne de Thyeste.'

They are to be found in Crébillon's 'Atrée.'"

# THE LUCK OF ROARING CAMP THE OUTCASTS OF POKER FLAT THE IDYL OF RED GULCH

BY FRANCIS BRET HARTE



## BIOGRAPHICAL NOTE

RANCIS BRET HARTE was born at Albany, N. Y., on August 25, 1839. He was the son of the professor of Greek at Albany College; but, his father dying while the son was still a boy, he left school and went to California at the age of seventeen. His career on the Pacific coast was very varied, and he was in turn school-teacher, miner, printer, express messenger, secretary of the San Francisco mint, and editor. He made his appearance as an author with a group of "Condensed Novels" in which he followed in the steps of Thackeray, burlesquing the styles of popular writers of fiction. These were first published in the paper he edited, "The Californian," and later, in 1867, in book form. The next year he became editor of "The Overland Monthly," and to it he began contributing the stories, sketches, and poems, dealing with mining life in California, which first made him known to the Eastern States and Europe.

For a year he served as professor at the University of California, and then returned to his native State, living in New York City till 1878. From 1878 to 1885 he was in the consular service, representing the United States first at Crefeld in Germany, and later at Glasgow, Scotland. From 1885 till his death in 1902 he lived chiefly in London, where he

devoted himself to literary work.

The tales here printed belong to the early period of Bret Harte's production and were written while he was still living in the West. Though he continued writing in much the same vein for over thirty years, and though he maintained throughout a high level of interest, it is generally agreed that he never surpassed his first group of stories. It is not difficult to understand the enthusiasm which these created on their first appearance. The life which he depicted and the scenery amid which the stories were laid were entirely new in literature. The early years of the gold rush to Cali-

fornia had drawn thither an extraordinary mixture of nationalities and types; and the peculiar conditions under which they lived had produced a civilization (if the word can be used in this connection) which was unique while it lasted. Bret Harte went West in time to see it and mingle with it; and he was endowed with an eve to discern its picturesque features and a breadth of sympathy generous enough to feel the human quality that lay beneath the sordid exterior. The tradition of the short story had already been established in America, and to the various species of it which had been perfected by Irving, Poe, and Hawthorne, Harte added another as distinctive as any. Stories like "The Luck of Roaring Camp," "The Outcasts of Poker Flat" and "The Idyl of Red Gulch" have a serious interest as pictures of a phase of American life which already seems far away; but their attractiveness is still more due to the skill they display in the sketching of types, to the pathos which they reveal in the most unlikely characters, and to the restraint and concentration with which the stories are told.

Bret Harte's fiction has overshadowed his poetry; yet he produced verse of a fine delicacy, and one or two of the most successful humorous poems in our literature.

W. A. N.

### CRITICISMS AND INTERPRETATIONS

Ι

#### By Parke Godwin

UST as we were saying to each other, How much we need a story-writer who shall treat our American life in an artistic form, satisfying to the most exacting sense of the highest literary merit—just as we were deploring that Irving, and Hawthorne, and Poe, men of another generation, who were retrospective, and not on a level with the present hour, were the only men of fine talent among our story-writers-Francis Bret Harte, in the newest and remotest part of our land, gives us an expression of its early, rude, and lawless life, at once unexpected and potent, and which shames our distrust of the genius of our race in its new home. It is an expression so honest, so free from cant, so exactly corresponding with its subject, so unsqueamish and hearty, so manly, that it is to be accepted like a bit of nature. His stories are like so many convincing facts; they need no argument; they lodge themselves in our minds. and germinate like living things.

We are struck by the varied power which he exhibits, and the diverse emotions which he touches, in such narrow dramatic limits. Within the little frame of a sketch he is terse, graphic, vivid; his humor and pathos are irresistible; his sentiment delicate and true; his poetry magical and suggestive; his feeling of out-of-door life constant and delightful. His use of the minor key of nature, as a contrast to the soiled and troubled lives of his men and women, is comparable to the accidental influences which touch and soothe an unhappy man when his attention is caught by sunlight in wood-paths, or by the sound of the wind in trees, or by any of the silencing and flood-like influences that sweep over

us when we are open to the beautiful, the unnamable, and

mysterious. . . .

Bret Harte has deepened and broadened our literary and moral sympathies; he has broken the sway of the artificial and conventional; he has substituted actualities for idealities—but actualities that manifest the grandeur of self-sacrifice, the beauty of love, the power of childhood, and the ascendancy of nature.—From "Editorial Notes," in "Putnam's Magazine" (July, 1780).

TT

#### By HENRY SEIDEL CANBY

THAT gives these characters their lasting power? Why does that highly melodramatic tragedy in the hills above Poker Flat, with its stagy reformations, and contrasts of black sinner and white innocent, hold you spellbound at the thirtieth as at the first reading? Bret Harte believed, apparently, that it was his realism which did it. He had put the Western miner into literature as he was-hence the applause. He had compounded his characters of good and evil as in life, thus approximating the truth, and avoiding the error of the cartoon, in which the dissolute miner was so dissolute that it was said. "They've just put the keerds on that chap from the start." But we do not wait to be told by Californians, who still remember the red-shirt period, that Roaring Camp is not realism. The lack of it is apparent in every paragraph describing that fascinating settlement. The man who would look for Yuba Bill at Sandy Bar, would search for Pickwick in London, and Peggotty on Yarmouth Beach. Not the realism, but the idealization, of this life of the Argonauts was the prize Bret Harte gained. After all, the latter part of the introduction to his first book was more pertinent than the first, which I have just been paraphrasing, for, at the end, he admits a desire to revive the poetry of a heroic era, and to collect the material for an Iliad of the intrepid Argonauts of California.—From "The Short Story in English" (1909).

# THE LUCK OF ROARING CAMP

HERE was commotion in Roaring Camp. It could not have been a fight, for in 1850 that was not novel enough to have called together the entire settlement. The ditches and claims were not only deserted, but "Tuttle's grocery" had contributed its gamblers, who, it will be remembered, calmly continued their game the day that French Pete and Kanaka Joe shot each other to death over the bar in the front room. The whole camp was collected before a rude cabin on the outer edge of the clearing. Conversation was carried on in a low tone, but the name of a woman was frequently repeated. It was a name familiar enough in the camp.—"Cherokee Sal."

Perhaps the less said of her the better. She was a coarse, and, it is to be feared, a very sinful woman. But at that time she was the only woman in Roaring Camp, and was just then lying in sore extremity, when she most needed the ministration of her own sex. Dissolute, abandoned, and irreclaimable, she was yet suffering a martyrdom hard enough to bear even when veiled by sympathizing womanhood, but now terrible in her loneliness. The primal curse had come to her in that original isolation which must have made the punishment of the first transgression so dreadful. It was, perhaps, part of the expiation of her sin, that, at a moment when she most lacked her sex's intuitive tenderness and care, she met only the half-contemptuous faces of her masculine associates. Yet a few of the spectators were, I think, touched by her sufferings. Sandy Tipton thought it was "rough on Sal," and, in the contemplation of her condition, for a moment rose superior to the fact that he had an ace and two bowers in his sleeve.

Published under Special Arrangement with The Houghton, Mifflin Company. Copyright 1892 and 1899 by Bret Harte. All rights reserved.

It will be seen, also, that the situation was novel. Deaths were by no means uncommon in Roaring Camp, but a birth was a new thing. People had been dismissed the camp effectively, finally, and with no possibility of return; but this was the first time that anybody had been introduced ab initio. Hence the excitement.

"You go in there, Stumpy," said a prominent citizen known as "Kentuck," addressing one of the loungers. "Go in there, and see what you kin do. You've had experience

in them things."

Perhaps there was a fitness in the selection. Stumpy, in other climes, had been the putative head of two families; in fact, it was owing to some legal informality in these proceedings that Roaring Camp—a city of refuge—was indebted to his company. The crowd approved the choice, and Stumpy was wise enough to bow to the majority. The door closed on the extempore surgeon and midwife, and Roaring Camp sat down outside, smoked its pipe, and awaited the issue.

The assemblage numbered about a hundred men. One or two of these were actual fugitives from justice, some were criminal, and all were reckless. Physically, they exhibited no indication of their past lives and character. The greatest scamp had a Raphael face, with a profusion of blond hair; Oakhurst, a gambler, had the melancholy air and intellectual abstraction of a Hamlet; the coolest and most courageous man was scarcely over five feet in height, with a soft voice and an embarrassed, timid manner. The term "roughs" applied to them was a distinction rather than a definition. Perhaps in the minor details of fingers, toes, ears, etc., the camp may have been deficient, but these slight omissions did not detract from their aggregate force. The strongest man had but three fingers on his right hand; the best shot had but one eye.

Such was the physical aspect of the men that were dispersed around the cabin. The camp lay in a triangular valley, between two hills and a river. The only outlet was a steep trail over the summit of a hill that faced the cabin, now illuminated by the rising moon. The suffering woman might have seen it from the rude bunk whereon

she lay,—seen it winding like a silver thread until it was lost in the stars above.

A fire of withered pine-boughs added sociability to the gathering. By degrees the natural levity of Roaring Camp returned. Bets were freely offered and taken regarding the result. Three to five that "Sal would get through with it"; even, that the child would survive; side bets as to the sex and complexion of the coming stranger. In the midst of an excited discussion an exclamation came from those nearest the door, and the camp stopped to listen. Above the swaying and moaning of the pines, the swift rush of the river, and the crackling of the fire, rose a sharp, querulous cry,—a cry unlike anything heard before in the camp. The pines stopped moaning, the river ceased to rush, and the fire to crackle. It seemed as if Nature had stopped to listen too.

The camp rose to its feet as one man! It was proposed to explode a barrel of gunpowder, but, in consideration of the situation of the mother, better counsels prevailed, and only a few revolvers were discharged; for, whether owing to the rude surgery of the camp, or some other reason, Cherokee Sal was sinking fast. Within an hour she had climbed, as it were, that rugged road that led to the stars, and so passed out of Roaring Camp, its sin and shame forever. I do not think that the announcement disturbed them much, except in speculation as to the fate of the child. "Can he live now?" was asked of Stumpy. The answer was doubtful. The only other being of Cherokee Sal's sex and maternal condition in the settlement was an ass. was some conjecture as to fitness, but the experiment was tried. It was less problematical than the ancient treatment of Romulus and Remus, and apparently as successful.

When these details were completed, which exhausted another hour, the door was opened, and the anxious crowd of men who had already formed themselves into a queue, entered in single file. Beside the low bunk or shelf, on which the figure of the mother was starkly outlined below the blankets stood a pine table. On this a candle-box was placed, and within it, swathed in staring red flannel, lay the last arrival at Roaring Camp. Beside the candle-box was

placed a hat. Its use was soon indicated. "Gentlemen," said Stumpy, with a singular mixture of authority and ex officio complacency,—"Gentlemen will please pass in at the front door, round the table, and out at the back door. Them as wishes to contribute anything toward the orphan will find a hat handy." The first man entered with his hat on; he uncovered, however, as he looked about him, and so, unconsciously, set an example to the next. In such communities good and bad actions are catching. As the procession filed in, comments were audible,—criticisms addressed, perhaps, rather to Stumpy, in the character of showman,—"Is that him?" "mighty small specimen"; "has n't mor'n got the color"; "ain't bigger nor a derringer." The contributions were as characteristic: A silver tobacco-box: a doubloon; a navy revolver, silver mounted; a gold specimen; a very beautifully embroidered lady's handkerchief (from Oakhurst the gambler); a diamond breastpin; a diamond ring (suggested by the pin, with the remark from the giver that he "saw that pin and went two diamonds better"); a slung shot: a Bible (contributor not detected): a golden spur; a silver teaspoon (the initials, I regret to say, were not the giver's): a pair of surgeon's shears: a lancet: a Bank of England note for £5; and about \$200 in loose gold and silver coin. During these proceedings Stumpy maintained a silence as impassive as the dead on his left, a gravity as inscrutable as that of the newly born on his right. Only one incident occurred to break the monotony of the curious procession. As Kentuck bent over the candle-box half curiously, the child turned, and, in a spasm of pain, caught at his groping finger, and held it fast for a moment. Kentuck looked foolish and embarrassed. Something like a blush tried to assert itself in his weather-beaten cheek. "The d-d little cuss!" he said, as he extricated his finger, with, perhaps, more tenderness and care than he might have been deemed capable of showing. He held that finger a little apart from its fellows as he went out, and examined it curiously. The examination provoked the same original remark in regard to the child. In fact, he seemed to enjoy repeating it. "He rastled with my finger." he remarked to Tipton, holding up the member, "the d-d little cuss!"

It was four o'clock before the camp sought repose. A light burnt in the cabin where the watchers sat, for Stumpy did not go to bed that night. Nor did Kentuck. He drank quite freely, and related with great gusto his experience, invariably ending with his characteristic condemnation of the new-comer. It seemed to relieve him of any unjust implication of sentiment, and Kentuck had the weaknesses of the nobler sex. When everybody else had gone to bed, he walked down to the river, and whistled reflectingly. Then he walked up the gulch, past the cabin, still whistling with demonstrative unconcern. At a large redwood tree he paused and retraced his steps, and again passed the cabin. Half-way down to the river's bank he again paused, and then returned and knocked at the door. It was opened by Stumpy. "How goes it?" said Kentuck, looking past Stumpy toward the candle-box. "All serene," replied Stumpy. "Anything up?" "Nothing." There was a pause-an embarrassing one-Stumpy still holding the door. Then Kentuck had recourse to his finger, which he held up to Stumpy. "Rastled with it.—the d—d little cuss," he said, and retired

The next day Cherokee Sal had such rude sepulture as Roaring Camp afforded. After her body had been committed to the hillside, there was a formal meeting of the camp to discuss what should be done with her infant. A resolution to adopt it was unanimous and enthusiastic. But an animated discussion in regard to the manner and feasibility of providing for its wants at once sprung up. It was remarkable that the argument partook of none of those fierce personalities with which discussions were usually conducted at Roaring Camp. Tipton proposed that they should send the child to Red Dog,-a distance of forty miles,-where female attention could be procured. But the unlucky suggestion met with fierce and unanimous opposition. It was evident that no plan which entailed parting from their new acquisition would for a moment be entertained. "Besides," said Tom Ryder, "them fellows at Red Dog would swap it, and ring in somebody else on us." A disbelief in the honesty of other camps prevailed at Roaring Camp as in other places.

The introduction of a female nurse in the camp also met with objection. It was argued that no decent woman could be prevailed to accept Roaring Camp as her home, and the speaker urged that "they didn't want any more of the other kind." This unkind allusion to the defunct mother, harsh as it may seem, was the first spasm of propriety,—the first symptom of the camp's regeneration. Stumpy advanced nothing. Perhaps he felt a certain delicacy in interfering with the selection of a possible successor in office. But when questioned, he averred stoutly that he and "Jinny"—the mammal before alluded to—could manage to rear the child. There was something original, independent, and heroic about the plan that pleased the camp. Stumpy was retained. Certain articles were sent for to Sacramento. "Mind," said the treasurer, as he pressed a bag of gold-dust into the expressman's hand, "the best that can be got,—lace, you know, and filigree-work and frills,—d—m the cost!"

Strange to say, the child thrived. Perhaps the invigorating climate of the mountain camp was compensation for material deficiencies. Nature took the foundling to her broader breast. In that rare atmosphere of the Sierra foothills,—that air pungent with balsamic odor, that ethereal cordial at once bracing and exhilarating,—he may have found food and nourishment, or a subtle chemistry that transmuted asses' milk to lime and phosphorus. Stumpy inclined to the belief that it was the latter and good nursing. "Me and that ass," he would say, "has been father and mother to him! Don't you," he would add, apostrophizing the helpless bundle before him, "never go back on us."

By the time he was a month old, the necessity of giving

By the time he was a month old, the necessity of giving him a name became apparent. He had generally been known as "the Kid," "Stumpy's boy," "the Cayote" (an allusion to his vocal powers), and even by Kentuck's endearing diminutive of "the d—d little cuss." But these were felt to be vague and unsatisfactory, and were at last dismissed under another influence. Gamblers and adventurers are generally superstitious, and Oakhurst one day declared that the baby had brought "the luck" to Roaring Camp. It was certain that of late they had been successful. "Luck" was the name agreed upon, with the prefix of Tommy for greater

convenience. No allusion was made to the mother, and the father was unknown. "It's better," said the philosophical Oakhurst, "to take a fresh deal all round. Call him Luck, and start him fair." A day was accordingly set apart for the christening. What was meant by this ceremony the reader may imagine, who has already gathered some idea of the reckless irreverence of Roaring Camp. The master of ceremonies was one "Boston," a noted wag, and the occasion seemed to promise the greatest facetiousness. This ingenious satirist had spent two days in preparing a burlesque of the church service, with pointed local allusions. The choir was properly trained, and Sandy Tipton was to stand godfather. But after the procession had marched to the grove with music and banners, and the child had been deposited before a mock altar. Stumpy stepped before the expectant crowd. "It ain't my style to spoil fun, boys," said the little man, stoutly, eying the faces around him, "but it strikes me that this thing ain't exactly on the squar. It's playing it pretty low down on this yer baby to ring in fun on him that he ain't going to understand. And ef there's going to be any godfathers round, I'd like to see who's got any better rights than me." A silence followed Stumpy's speech. To the credit of all humorists be it said, that the first man to acknowledge its justice was the satirist, thus stopped of his fun. "But," said Stumpy, quickly, following up his advantage, "we're here for a christening, and we'll have it. I proclaim you Thomas Luck, according to the laws of the United States and the State of California, so help me God." It was the first time that the name of the Deity had been uttered otherwise than profanely in the camp. The form of christening was perhaps even more ludicrous than the satirist had conceived; but, strangely enough, nobody saw it and nobody laughed. "Tommy" was christened as seriously as he would have been under a Christian roof, and cried and was comforted in as orthodox fashion.

And so the work of regeneration began in Roaring Camp. Almost imperceptibly a change came over the settlement. The cabin assigned to "Tommy Luck"—or "The Luck," as he was more frequently called—first showed signs of

improvement. It was kept scrupulously clean and whitewashed. Then it was boarded, clothed, and papered. The rosewood cradle—packed eighty miles by mule—had, in Stumpy's way of putting it, "sorter killed the rest of the furniture." So the rehabilitation of the cabin became a necessity. The men who were in the habit of lounging in at Stumpy's to see "how The Luck got on" seemed to appreciate the change, and, in self-defence, the rival establishment of "Tuttle's grocery" bestirred itself, and imported a carpet and mirrors. The reflections of the latter on the appearance of Roaring Camp tended to produce stricter habits of personal cleanliness. Again, Stumpy imposed a kind of quarantine upon those who aspired to the honor and privilege of holding "The Luck." It was a cruel mortification to Kentuck—who, in the carelessness of a large nature and the habits of frontier life, had begun to regard all garments as a second cuticle, which, like a snake's, only sloughed off through decay-to be debarred this privilege from certain prudential reasons. Yet such was the subtle influence of innovation that he thereafter appeared regularly every afternoon in a clean shirt, and face still shining from his ablutions. Nor were moral and social sanitary laws neglected. "Tommy," who was supposed to spend his whole existence in a persistent attempt to repose, must not be disturbed by noise. The shouting and yelling which had gained the camp its infelicitous title were not permitted within hearing distance of Stumpy's. The men conversed in whispers, or smoked with Indian gravity. Profanity was tacitly given up in these sacred precincts, and throughout the camp a popular form of expletive, known as "D-n the luck!" and "Curse the luck!" was abandoned, as having a new personal bearing. Vocal music was not interdicted, being supposed to have a soothing, tranquillizing quality, and one song. sung by "Man-o'-War Jack," an English sailor, from her Majesty's Australian colonies, was quite popular as a lullaby. It was a lugubrious recital of the exploits of "the Arethusa, Seventy-four," in a muffled minor, ending with a prolonged dying fall at the burden of each verse, "On b-o-o-o-ard of the Arethusa." It was a fine sight to see Jack holding The Luck, rocking from side to side as if with the motion of a ship, and crooning forth this naval ditty. Either through the peculiar rocking of Jack or the length of his song,—it contained ninety stanzas, and was continued with conscientious deliberation to the bitter end,—the lullaby generally had the desired effect. At such times the men would lie at full length under the trees, in the soft summer twilight, smoking their pipes and drinking in the melodious utterances. An indistinct idea that this was pastoral happiness pervaded the camp. "This 'ere kind o' think," said the Cockney Simmons, meditatively reclining on his elbow, "is 'evingly." It reminded him of Greenwich.

On the long summer days The Luck was usually carried to the gulch, from whence the golden store of Roaring Camp was taken. There, on a blanket spread over pine-boughs, he would lie while the men were working in the ditches below. Latterly, there was a rude attempt to decorate this bower with flowers and sweet-smelling shrubs, and generally some one would bring him a cluster of wild honeysuckles, azaleas, or the painted blossoms of Las Mariposas. The men had suddenly awakened to the fact that there were beauty and significance in these trifles, which they had so long trodden carelessly beneath their feet. A flake of glittering mica, a fragment of variegated quartz, a bright pebble from the bed of the creek, became beautiful to eyes thus cleared and strengthened, and were invariably put aside for "The Luck." It was wonderful how many treasures the woods and hillsides yielded that "would do for Tommy." Surrounded by playthings such as never child out of fairyland had before, it is to be hoped that Tommy was content. He appeared to be securely happy, albeit there was an infantine gravity about him, a contemplative light in his round gray eyes, that sometimes worried Stumpy. He was always tractable and quiet, and it is recorded that once, having crept beyond his "corral."—a hedge of tessellated pine-boughs, which surrounded his bed,—he dropped over the bank on his head in the soft earth, and remained with his mottled legs in the air in that position for at least five minutes with unflinching gravity. He was extricated without a murmur. I hesitate to record the many other instances of his sagacity, which rest, unfortunately, upon the statements of prejudiced friends. Some of them were not without a tinge of superstition. "I crep' up the bank just now," said Kentuck one day, in a breathless state of excitement, "and dern my skin if he was n't a talking to a jay-bird as was a sittin' on his lap. There they was, just as free and sociable as anything you please, a jawin' at each other just like two cherry-bums." Howbeit, whether creeping over the pine-boughs or lying lazily on his back blinking at the leaves above him, to him the birds sang, the squirrels chattered, and the flowers bloomed. Nature was his nurse and playfellow. For him she would let slip between the leaves golden shafts of sunlight that fell just within his grasp; she would send wandering breezes to visit him with the balm of bay and resinous gums; to him the tall red-woods nodded familiarly and sleepily, the bumble-bees buzzed, and the rooks cawed a slumbrous accompaniment.

Such was the golden summer of Roaring Camp. They were "flush times,"—and the Luck was with them. The claims had yielded enormously. The camp was jealous of its privileges and looked suspiciously on strangers. No encouragement was given to immigration, and, to make their seclusion more perfect, the land on either side of the mountain wall that surrounded the camp they duly pre-empted. This, and a reputation for singular proficiency with the revolver, kept the reserve of Roaring Camp inviolate. The expressman—their only connecting link with the surrounding world—sometimes told wonderful stories of the camp. He would say, "They've a street up there in 'Roaring,' that would lay over any street in Red Dog. They've got vines and flowers round their houses, and they wash themselves twice a day. But they're mighty rough on strangers, and they worship an Ingin baby."

With the prosperity of the camp came a desire for further improvement. It was proposed to build a hotel in the following spring, and to invite one or two decent families to reside there for the sake of "The Luck,"—who might perhaps profit by female companionship. The sacrifice that this concession to the sex cost these men, who were fiercely sceptical in regard to its general virtue and usefulness, can only be accounted for by their affection for Tommy. A few

still held out. But the resolve could not be carried into effect for three months, and the minority meekly yielded in the hope that something might turn up to prevent it. And it did.

The winter of 1851 will long be remembered in the foot-hills. The snow lay deep on the Sierras, and every mountain creek became a river, and every river a lake. Each gorge and gulch was transformed into a tumultuous watercourse that descended the hillsides, tearing down giant trees and scattering its drift and débris along the plain. Red Dog had been twice under water, and Roaring Camp had been forewarned. "Water put the gold into them gulches," said Stumpy. "It's been here once and will be here again!" And that night the North Fork suddenly leaped over its banks, and swept up the triangular valley of Roaring Camp.

In the confusion of rushing water, crushing trees, and crackling timber, and the darkness which seemed to flow with the water and blot out the fair valley, but little could be done to collect the scattered camp. When the morning broke, the cabin of Stumpy nearest the river-bank was gone. Higher up the gulch they found the body of its unlucky owner; but the pride, the hope, the joy, the Luck, of Roaring Camp had disappeared. They were returning with sad hearts, when a shout from the bank recalled them.

It was a relief-boat from down the river. They had picked up, they said, a man and an infant, nearly exhausted, about two miles below. Did anybody know them, and did

they belong here?

It needed but a glance to show them Kentuck lying there, cruelly crushed and bruised, but still holding the Luck of Roaring Camp in his arms. As they bent over the strangely assorted pair, they saw that the child was cold and pulseless. "He is dead," said one. Kentuck opened his eyes. "Dead?" he repeated feebly. "Yes, my man, and you are dying too." A smile lit the eyes of the expiring Kentuck. "Dying," he repeated, "he's a taking me with him,—tell the boys I've got the Luck with me now"; and the strong man, clinging to the frail babe as a drowning man is said to cling to a straw, drifted away into the shadowy river that flows forever to the unknown sea.



# THE OUTCASTS OF POKER FLAT

S Mr. John Oakhurst, gambler, stepped into the main street of Poker Flat on the morning of the twenty-third of November, 1850, he was conscious of a change in its moral atmosphere since the preceding night. Two or three men, conversing earnestly together, ceased as he approached, and exchanged significant glances. There was a Sabbath lull in the air, which, in a settlement unused to Sabbath influences, looked ominous.

Mr. Oakhurst's calm, handsome face betrayed small concern in these indications. Whether he was conscious of any predisposing cause, was another question. "I reckon they're after somebody," he reflected; "likely it's me." He returned to his pocket the handkerchief with which he had been whipping away the red dust of Poker Flat from his neat boots, and quietly discharged his mind of any further conjecture.

In point of fact, Poker Flat was "after somebody." It had lately suffered the loss of several thousand dollars, two valuable horses, and a prominent citizen. It was experiencing a spasm of virtuous reaction, quite as lawless and ungovernable as any of the acts that had provoked it. A secret committee had determined to rid the town of all improper persons. This was done permanently in regard of two men who were then hanging from the boughs of a sycamore in the gulch, and temporarily in the banishment of certain other objectionable characters. I regret to say that some of these were ladies. It is but due to the sex, however, to state that their impropriety was professional, and it was only in such easily established standards of evil that Poker Flat ventured to sit in judgment.

Mr. Oakhurst was right in supposing that he was included in this category. A few of the committee had urged hang-

Published under Special Arrangement with The Houghton, Mifflin Company, Copyright 1892 and 1899 by Bret Harte. All rights reserved. ing him as a possible example, and a sure method of reimbursing themselves from his pockets of the sums he had won from them. "It's agin justice," said Jim Wheeler, "to let this yer young man from Roaring Camp—an entire stranger—carry away our money." But a crude sentiment of equity residing in the breasts of those who had been fortunate enough to win from Mr. Oakhurst overruled this narrower local prejudice.

Mr. Oakhurst received his sentence with philosophic calmness, none the less coolly that he was aware of the hesitation of his judges. He was too much of a gambler not to accept Fate. With him life was at best an uncertain game, and he recognized the usual percentage in favor of the dealer.

A body of armed men accompanied the deported wickedness of Poker Flat to the outskirts of the settlement. Besides Mr. Oakhurst, who was known to be a coolly desperate man, and for whose intimidation the armed escort was intended, the expatriated party consisted of a young woman familiarly known as "The Duchess"; another, who had won the title of "Mother Shipton"; and "Uncle Billy," a suspected sluice-robber and confirmed drunkard. The cavalcade provoked no comments from the spectators, nor was any word uttered by he escort. Only, when the gulch which marked the uttermost limit of Poker Flat was reached, the leader spoke briefly and to the point. The exiles were forbidden to return at the peril of their lives.

As the escort disappeared, their pent-up feelings found vent in a few hysterical tears from the Duchess, some bad language from Mother Shipton, and a Parthian volley of expletives from Uncle Billy. The philosophic Oakhurst alone remained silent. He listened calmly to Mother Shipton's desire to cut somebody's heart out, to the repeated statements of the Duchess that she would die in the road, and to the alarming oaths that seemed to be bumped out of Uncle Billy as he rode forward. With the easy goodhumor characteristic of his class, he insisted upon exchanging his own riding-horse, "Five Spot," for the sorry mule which the Duchess rode. But even this act did not draw the party into any closer sympathy. The young woman readjusted her somewhat draggled plumes with a feeble,

faded coquetry; Mother Shipton eyed the possessor of "Five Spot" with malevolence, and Uncle Billy included the whole party in one sweeping anathema.

The road to Sandy Bar—a camp that, not having as yet experienced the regenerating influences of Poker Flat, consequently seemed to offer some invitation to the emigrants lay over a steep mountain range. It was distant a day's severe travel. In that advanced season, the party soon passed out of the moist, temperate regions of the foot-hills into the dry, cold, bracing air of the Sierras. The trail was narrow and difficult. At noon the Duchess, rolling out of her saddle upon the ground, declared her intention of going no farther, and the party halted.

The spot was singularly wild and impressive. A wooded amphitheatre, surrounded on three sides by precipitous cliffs of naked granite, sloped gently toward the crest of another precipice that overlooked the valley. It was, undoubtedly, the most suitable spot for a camp, had camping been advisable. But Mr. Oakhurst knew that scarcely half the journey to Sandy Bar was accomplished, and the party were not equipped or provisioned for delay. This fact he pointed out to his companions curtly, with a philosophic commentary on the folly of "throwing up their hand before the game was played out." But they were furnished with liquor, which in this emergency stood them in place of food, fuel, rest, and prescience. In spite of his remonstrances, it was not long before they were more or less under its influence. Uncle Billy passed rapidly from a bellicose state into one of stupor, the Duchess became maudlin, and Mother Shipton snored. Mr. Oakhurst alone remained erect, leaning against a rock, calmly surveying them.

Mr. Oakhurst did not drink. It interfered with a pro-fession which required coolness, impassiveness, and presence of mind, and, in his own language, he "couldn't afford it." As he gazed at his recumbent fellow-exiles, the loneliness begotten of his pariah-trade, his habits of life, his very vices. for the first time seriously oppressed him. He bestirred himself in dusting his black clothes, washing his hands and face, and other acts characteristic of his studiously neat habits, and for a moment forgot his annovance. The thought of deserting his weaker and more pitiable companions never perhaps occurred to him. Yet he could not help feeling the want of that excitement which, singularly enough, was most conducive to that calm equanimity for which he was notorious. He looked at the gloomy walls that rose a thousand feet sheer above the circling pines around him; at the sky, ominously clouded; at the valley below, already deepening into shadow. And, doing so, suddenly he heard his own name called.

A horseman slowly ascended the trail. In the fresh, open face of the new-comer Mr. Oakhurst recognized Tom Simson, otherwise known as "The Innocent" of Sandy Bar. He had met him some months before over a "little game," and had, with perfect equanimity, won the entire fortune—amounting to some forty dollars—of that guileless youth. After the game was finished, Mr. Oakhurst drew the youthful speculator behind the door and thus addressed him: "Tommy, you're a good little man, but you can't gamble worth a cent. Don't try it over again." He then handed him his moncy back, pushed him gently from the room, and so made a devoted slave of Tom Simson.

There was a remembrance of this in his boyish and enthusiastic greeting of Mr. Oakhurst. He had started, he said, to go to Poker Flat to seek his fortune. "Alone?" No, not exactly alone; in fact (a giggle), he had run away with Piney Woods. Didn't Mr. Oakhurst remember Piney? She that used to wait on the table at the Temperance House? They had been engaged a long time, but old Jake Woods had objected, and so they had run away, and were going to Poker Flat to be married, and here they were. And they were tired out, and how lucky it was they had found a place to camp and company. All this the Innocent delivered rapidly, while Piney, a stout, comely damsel of fifteen, emerged from behind the pine-tree, where she had been blushing unseen, and rode to the side of her lover.

Mr. Oakhurst seldom troubled himself with sentiment, still less with propriety; but he had a vague idea that the situation was not fortunate. He retained, however, his presence of mind sufficiently to kick Uncle Billy, who was about to say something, and Uncle Billy was sober enough to recognize

in Mr. Oakhurst's kick a superior power that would not bear trifling. He then endeavored to dissuade Tom Simson from delaying further, but in vain. He even pointed out the fact that there was no provision, nor means of making a camp. But, unluckily, the Innocent met this objection by assuring the party that he was provided with an extra mule loaded with provisions, and by the discovery of a rude attempt at a log-house near the trail. "Piney can stay with Mrs. Oakhurst," said the Innocent, pointing to the Duchess, "and I can shift for myself."

Nothing but Mr. Oakhurst's admonishing foot saved Uncle Billy from bursting into a roar of laughter. As it was, he felt compelled to retire up the cañon until he could recover his gravity. There he confided the joke to the tall pinetrees, with many slaps of his leg, contortions of his face, and the usual profanity. But when he returned to the party, he found them seated by a fire—for the air had grown strangely chill and the sky overcast—in apparently amicable conversation. Piney was actually talking in an impulsive, girlish fashion to the Duchess, who was listening with an interest and animation she had not shown for many days.

The Innocent was holding forth, apparently with equal effect, to Mr. Oakhurst and Mother Shipton, who was actually relaxing into amiability. "Is this yer a d—d picnic?" said Uncle Billy, with inward scorn, as he surveyed the sylvan group, the glancing firelight, and the tethered animals in the foreground. Suddenly an idea mingled with the alcoholic fumes that disturbed his brain. It was apparently of a jocular nature, for he felt impelled to slap his leg again and cram his fist into his mouth.

As the shadows crept slowly up the mountain, a slight breeze rocked the tops of the pine-trees, and moaned through their long and gloomy aisles. The ruined cabin, patched and covered with pine-boughs, was set apart for the ladies. As the lovers parted, they unaffectedly exchanged a kiss, so honest and sincere that it might have been heard above the swaying pines. The frail Duchess and the malevolent Mother Shipton were probably too stunned to remark upon this last evidence of simplicity, and so turned without a

word to the hut. The fire was replenished, the men lay down before the door, and in a few minutes were asleep.

Mr. Oakhurst was a light sleeper. Toward morning he awoke benumbed and cold. As he stirred the dying fire, the wind, which was now blowing strongly, brought to his cheek that which caused the blood to leave it,—snow!

He started to his feet with the intention of awakening the sleepers, for there was no time to lose. But turning to where Uncle Billy had been lying, he found him gone. A suspicion leaped to his brain and a curse to his lips. He ran to the spot where the mules had been tethered; they were no longer there. The tracks were already rapidly disappearing in the snow.

The momentary excitement brought Mr. Oakhurst back to the fire with his usual calm. He did not waken the sleepers. The Innocent slumbered peacefully, with a smile on his good-humored, freckled face; the virgin Piney slept beside her frailer sisters as sweetly as though attended by celestial guardians, and Mr. Oakhurst, drawing his blanket over his shoulders, stroked his mustaches and waited for the dawn. It came slowly in a whirling mist of snow-flakes, that dazzled and confused the eye. What could be seen of the landscape appeared magically changed. He looked over the valley, and summed up the present and future in two words,—"snowed in!" A careful inventory of the provisions, which, fortunately for the party, had been stored within the hut, and so escaped the felonious fingers of Uncle Billy, disclosed the fact that with care and prudence they might last ten days longer. "That is," said Mr. Oakhurst, sotto voce to the Innocent, "if you're willing to board us. If you ain't-and perhaps you'd better not-you can wait till Uncle Billy gets back with provisions." For some occult reason, Mr. Oakhurst could not bring himself to disclose Uncle Billy's rascality, and so offered the hypothesis that he had wandered from the camp and had accidentally stampeded the animals. He dropped a warning to the Duchess and Mother Shipton, who of course knew the facts of their associate's defection. "They'll find out the truth about us all when they find out anything," he added, significantly, "and there's no good frightening them now."

Tom Simson not only put all his worldly store at the disposal of Mr. Oakhurst, but seemed to enjoy the prospect of their enforced seclusion. "We'll have a good camp for a week, and then the snow'll melt, and we'll all go back together." The cheerful gayety of the young man, and Mr. Oakhurst's calm infected the others. The Innocent, with the aid of pine-boughs, extemporized a thatch for the roofless cabin, and the Duchess directed Piney in the rearrangement of the interior with a taste and tact that opened the blue eyes of that provincial maiden to their fullest extent. "I reckon now you're used to fine things at Poker Flat." said Piney. The Duchess turned away sharply to conceal something that reddened her cheeks through its professional tint, and Mother Shipton requested Piney not to "chatter." But when Mr. Oakhurst returned from a weary search for the trail, he heard the sound of happy laughter echoed from the rocks. He stopped in some alarm, and his thoughts first naturally reverted to the whiskey, which he had prudently cachéd. "And yet it don't somehow sound like whiskey," said the gambler. It was not until he caught sight of the blazing fire through the still-blinding storm and the group around it that he settled to the conviction that it was "square fun."

Whether Mr. Oakhurst had cachéd his cards with the whiskey as something debarred the free access of the community, I cannot say. It was certain that, in Mother Shipton's words, he "didn't say cards once" during that evening. Haply the time was beguiled by an accordion, produced somewhat ostentatiously by Tom Simson from his pack. Notwithstanding some difficulties attending the manipulation of this instrument, Piney Woods managed to pluck several reluctant melodies from its keys, to an accompaniment by the Innocent on a pair of bone castinets. But the crowning festivity of the evening was reached in a rude campmeeting hymn, which the lovers, joining hands, sang with great earnestness and vociferation. I fear that a certain defiant tone and Covenanter's swing to its chorus, rather than any devotional quality, caused it speedily to infect the others, who at last joined in the refrain:-

> "I'm proud to live in the service of the Lord, And I'm bound to die in His army."

The pines rocked, the storm eddied and whirled above the miserable group, and the flames of their altar leaped heavenward, as if in token of the yow.

At midnight the storm abated, the rolling clouds parted, and the stars glittered keenly above the sleeping camp. Mr. Oakhurst, whose professional habits had enabled him to live on the smallest possible amount of sleep, in dividing the watch with Tom Simson, somehow managed to take upon himself the greater part of that duty. He excused himself to the Innocent, by saying that he had "often been a week without sleep." "Doing what?" asked Tom. "Poker!" replied Oakhurst, sententiously; "when a man gets a streak of luck,-nigger-luck,-he don't get tired. The luck gives in Luck," continued the gambler, reflectively, "is a mighty queer thing. All you know about it for certain is that it's bound to change. And it's finding out when it's going to change that makes you. We've had a streak of bad luck since we left Poker Flat,-you come along, and slap you get into it, too. If you can hold your cards right along you're all right. For," added the gambler, with cheerful irrelevance.-

> "'I'm proud to live in the service of the Lord, And I'm bound to die in His army.'"

The third day came, and the sun, looking through the white-curtained valley, saw the outcasts divide their slowly decreasing store of provisions for the morning meal. It was one of the peculiarities of that mountain climate that its rays diffused a kindly warmth over the wintry landscape, as if in regretful commiscration of the past. But it revealed drift on drift of snow piled high around the hut,—a hopeless. uncharted, trackless sea of white lying below the rocky shores to which the castaways still clung. Through the marvellously clear air the smoke of the pastoral village of Poker Flat rose miles away. Mother Shipton saw it, and from a remote pinnacle of her rocky fastness, hurled in that direction a final malediction. It was her last vituperative attempt, and perhaps for that reason was invested with a certain degree of sublimity. It did her good, she privately informed the Duchess. "Just you go out there and cuss,

and see." She then set herself to the task of amusing "the child," as she and the Duchess were pleased to call Piney. Piney was no chicken, but it was a soothing and original theory of the pair thus to account for the fact that she didn't swear and was n't improper.

When night crept up again through the gorges, the reedy notes of the accordion rose and fell in fitful spasms and long-drawn gasps by the flickering camp-fire. But music failed to fill entirely the aching void left by insufficient food, and a new diversion was proposed by Piney,—story-telling. Neither Mr. Oakhurst nor his female companions caring to relate their personal experiences, this plan would have failed, too, but for the Innocent. Some months before he had chanced upon a stray copy of Mr. Pope's ingenius translation of the Iliad. He now proposed to narrate the principal incidents of that poem—having thoroughly mastered the argument and fairly forgotten the words—in the current vernacular of Sandy Bar. And so for the rest of that night the Homeric demigods again walked the earth. Trojan bully and wily Greek wrestled in the winds, and the great pines in the canon seemed to bow to the wrath of the son of Peleus. Mr. Oakhurst listened with quiet satisfaction. Most especially was he interested in the fate of "Ash-heels," as the Innocent persisted in denominating the "swift-footed Achilles."

So with small food and much of Homer and the accordion, a week passed over the heads of the outcasts. The sun again forsook them, and again from leaden skies the snow-flakes were sifted over the land. Day by day closer around them drew the snowy circle, until at last they looked from their prison over drifted walls of dazzing white, that towered twenty feet above their heads. It became more and more difficult to replenish their fires, even from the fallen trees beside them, now half hidden in the drifts. And yet no one complained. The lovers turned from the dreary prospect and looked into each other's eyes, and were happy. Mr. Oakhurst settled himself coolly to the losing game before him. The Duchess, more cheerful than she had been, assumed the care of Piney. Only Mother Shipton—once the strongest of the party—seemed to sicken and fade. At midnight

on the tenth day she called Oakhurst to her side. "I'm going," she said, in a voice of querulous weakness, "but don't say anything about it. Don't waken the kids. Take the bundle from under my head and open it." Mr. Oakhurst did so. It contained Mother Shipton's rations for the last week, untouched. "Give 'em to the child," she said, pointing to the sleeping Piney. "You've starved yourself," said the gambler. "That's what they call it," said the woman, querulously, as she lay down again, and, turning her face to the wall, passed quietly away.

The accordion and the bones were put aside that day, and Homer was forgotten. When the body of Mother Shipton had been committed to the snow, Mr. Oakhurst took the Innocent aside, and showed him a pair of snow-shoes, which he had fashioned from the old pack-saddle. "There 's one chance in a hundred to save her yet," he said, pointing to Piney; "but it's there," he added, pointing toward Poker Flat. "If you can reach there in two days she's safe." "And you?" asked Tom Simson. "I'll stay here," was the curt reply.

The lovers parted with a long embrace. "You are not going, too?" said the Duchess, as she saw Mr. Oakhurst apparently waiting to accompany him. "As far as the cañon," he replied. He turned suddenly, and kissed the Duchess, leaving her pallid face aflame, and her trembling limbs rigid with amazement.

Night came, but not Mr. Oakhurst. It brought the storm again and the whirling snow. Then the Duchess, feeding the fire, found that some one had quietly piled beside the hut enough fuel to last a few days longer. The tears rose

to her eyes, but she hid them from Piney.

The women slept but little. In the morning, looking into each other's faces, they read their fate. Neither spoke; but Piney, accepting the position of the stronger, drew near and placed her arm around the Duchess's waist. They kept this attitude for the rest of the day. That night the storm reached its greatest fury, and, rending asunder the protecting pines, invaded the very hut.

Toward morning they found themselves unable to feed the fire, which gradually died away. As the embers slowly blackened, the Duchess crept closer to Piney, and broke the silence of many hours: "Piney, can you pray?" "No, dear," said Piney, simply. The Duchess, without knowing exactly why, felt relieved, and, putting her head upon Piney's shoulder, spoke no more. And so reclining, the younger and purer pillowing the head of her soiled sister upon her virgin breast, they fell asleep.

The wind lulled as if it feared to waken them. Feathery drifts of snow, shaken from the long pine-boughs, flew like white-winged birds, and settled about them as they slept. The moon through the rifted clouds looked down upon what had been the camp. But all human stain, all trace of earthly travail, was hidden beneath the spotless mantle mercifully

flung from above.

They slept all that day and the next, nor did they waken when voices and footsteps broke the silence of the camp. And when pitying fingers brushed the snow from their wan faces, you could scarcely have told from the equal peace that dwelt upon them, which was she that had sinned. Even the law of Poker Flat recognized this, and turned away, leaving them still locked in each other's arms.

But at the head of the gulch, on one of the largest pinetrees, they found the deuce of clubs pinned to the bark with a bowie-knife. It bore the following, written in pencil, in a

firm hand:-

BENEATH THIS TREE
LIES THE BODY

JOHN OAKHURST,

WHO STRUCK A STREAK OF BAD LUCK ON THE 23D OF NOVEMBER, 1850,

AND

HANDED IN HIS CHECKS ON THE 7TH DECEMBER, 1850.

And pulseless and cold, with a Derringer by his side and a bullet in his heart, though still calm as in life, beneath the snow lay he who was at once the strongest and yet the weakest of the outcasts of Poker Flat.



## THE IDYL OF RED GULCH

ANDY was very drunk. He was lying under an azaleabush, in pretty much the same attitude in which he had fallen some hours before. How long he had been lying there he could not tell, and didn't care; how long he should lie there was a matter equally indefinite and unconsidered. A tranquil philosophy, born of his physical condition, suffused and saturated his moral being.

The spectacle of a drunken man, and of this drunken man in particular, was not, I grieve to say, of sufficient novelty in Red Gulch to attract attention. Earlier in the day some local satirist had erected a temporary tombstone at Sandy's head, bearing the inscription, "Effects of MacCorkle's whiskey,-kills at forty rods," with a hand pointing to Mc-Corkle's saloon. But this, I imagine, was, like most local satire, personal; and was a reflection upon the unfairness of the process rather than a commentary upon the impropriety of the result. With this facetious exception, Sandy had been undisturbed. A wandering mule, released from his pack. had cropped the scant herbage beside him, and sniffed curiously at the prostrate man; a vagabond dog, with that deep sympathy which the species have for drunken men, had licked his dusty boots, and curled himself up at his feet, and lay there, blinking one eye in the sunlight, with a simulation of dissipation that was ingenious and dog-like in its implied flattery of the unconscious man beside him.

Meanwhile the shadows of the pine-trees had slowly swung around until they crossed the road, and their trunks barred the open meadow with gigantic parallels of black and yellow. Little puffs of red dust, lifted by the plunging hoofs of passing teams, dispersed in a grimy shower upon the recumbent man. The sun sank lower and lower; and still

Published under Special Arrangement with The Houghton, Mifflin Company.

Copyright 1892 and 1899 by Bret Harte. All rights reserved.

Sandy stirred not. And then the repose of this philosopher was disturbed, as other philosophers have been, by the in-

trusion of an unphilosophical sex.

"Miss Mary," as she was known to the little flock that she had just dismissed from the log school-house beyond the pines, was taking her afternoon walk. Observing an unusually fine cluster of blossoms on the azalea-bush opposite, she crossed the road to pluck it,—picking her way through the red dust, not without certain fierce little shivers of disgust, and some feline circumlocution. And then she came suddenly upon Sandy!

Of course she uttered the little staccato cry of her sex. But when she had paid that tribute to her physical weakness she became overbold, and halted for a moment,—at least six feet from this prostrate monster,—with her white skirts gathered in her hand, ready for flight. But neither sound nor motion came from the bush. With one little foot she then overturned the satirical head-board, and muttered "Beasts!"—an epithet which probably, at that moment, conveniently classified in her mind the entire male population of Red Gulch. For Miss Mary, being possessed of certain rigid notions of her own, had not, perhaps, properly appreciated the demonstrative gallantry for which the Californian has been so justly celebrated by his brother Californians, and had, as a new-comer, perhaps, fairly earned the reputation of being "stuck up."

As she stood there she noticed, also, that the slant sunbeams were heating Sandy's head to what she judged to be an unhealthy temperature, and that his hat was lying uselessly at his side. To pick it up and to place it over his face was a work requiring some courage, particularly as his eyes were open. Yet she did it and made good her retreat. But she was somewhat concerned, on looking back, to see that the liat was removed, and that Sandy was sitting up and saying something.

The truth was, that in the calm depths of Sandy's mind he was satisfied that the rays of the sun were beneficial and healthful; that from childhood he had objected to lying down in a hat; that no people but condemned fools, past redemption, ever wore hats; and that his right to dispense with them when he pleased was inalienable. This was the statement of his inner consciousness. Unfortunately, its outward expression was vague, being limited to a repetition of the following formula,—"Su'shine all ri'! Wasser maär, eh? Wass up, su'shine?"

Miss Mary stopped, and, taking fresh courage from her vantage of distance, asked him if there was anything that he wanted.

"Wass up? Wasser maär?" continued Sandy, in a very high key.

"Get up, you horrid man!" said Miss Mary, now thor-

oughly incensed; "get up, and go home."

Sandy staggered to his feet. He was six feet high, and Miss Mary trembled. He started forward a few paces and then stopped.

"Wass I go home for?" he suddenly asked, with great

gravity.

"Go and take a bath," replied Miss Mary, eying his grimy

person with great disfavor.

To her infinite dismay, Sandy suddenly pulled off his coat and vest, threw them on the ground, kicked off his boots, and, plunging wildly forward, darted headlong over the hill, in the direction of the river.

"Goodness Heavens!—the man will be drowned!" said Miss Mary; and then, with feminine inconsistency, she ran back to the schoolhouse, and locked herself in.

That night, while seated at supper with her hostess, the blacksmith's wife, it came to Miss Mary to ask, demurely, if her husband ever got drunk. "Abner." responded Mrs. Stidger, reflectively, "let's see: Abner hasn't been tight since last 'lection.' Miss Mary would have liked to ask if he preferred lying in the sun on these occasions, and if a cold bath would have hurt him; but this would have involved an explanation, which she did not then care to give. So she contented herself with opening her gray eyes widely at the redcheeked Mrs. Stidger,—a fine specimen of Southwestern efflorescence,—and then dismissed the subject altogether. The next day she wrote to her dearest friend, in Boston: "I think I find the intoxicated portion of this community the least objectionable. I refer, my dear, to the men, of course.

I do not know anything that could make the women tolerable."

In less than a week Miss Mary had forgotten this episode, except that her afternoon walks took thereafter, almost unconsciously, another direction. She noticed, however, that every morning a fresh cluster of azalea-blossoms appeared among the flowers on her desk. This was not strange, as her little flock were aware of her fondness for flowers, and invariably kept her desk bright with anemones, syringas, and lupines; but, on questioning them, they, one and all, professed ignorance of the azaleas. A few days later, Master Johnny Stidger, whose desk was nearest to the window, was suddenly taken with spasms of apparently gratuitous laughter, that threatened the discipline of the school. All that Miss Mary could get from him was, that some one had been "looking in the winder." Irate and indignant. she sallied from her hive to do battle with the intruder. As she turned the corner of the school-house she came plump upon the quondam drunkard,-now perfectly sober, and inexpressibly sheepish and guilty-looking.

These facts Miss Mary was not slow to take a feminine advantage of, in her present humor. But it was somewhat confusing to observe, also, that the beast, despite some faint signs of past dissipation, was amiable-looking,—in fact, a kind of blond Samson, whose corn-colored, silken beard apparently had never yet known the touch of barber's razor or Delilah's shears. So that the cutting speech which quivered on her ready tongue died upon her lips, and she contented herself with receiving his stammering apology with supercilious eyelids and the gathered skirts of uncontamination. When she re-entered the school-room, her eyes fell upon the azaleas with a new sense of revelation. And then she laughed, and the little people all laughed, and they were all unconsciously very happy.

It was on a hot day—and not long after this—that two short-legged boys came to grief on the threshold of the school with a pail of water, which they had laboriously brought from the spring, and that Miss Mary compassionately seized the pail and started for the spring herself. At the foot of the hill a shadow crossed her path, and a blue-shirted

arm dexterously, but gently relieved her of her burden. Miss Mary was both embarrassed and angry. "If you carried more of that for yourself," she said, spitefully, to the blue arm, without deigning to raise her lashes to its owner, "you'd do better." In the submissive silence that followed she regretted the speech, and thanked him so sweetly at the door that he stumbled. Which caused the children to laugh again,—a laugh in which Miss Mary joined, until the color came faintly into her pale cheek. The next day a barrel was mysteriously placed beside the door, and as mysteriously filled with fresh spring-water every morning.

Nor was this superior young person without other quiet attentions. "Profane Bill," driver of the Slumgullion Stage, widely known in the newspapers for his "gallantry" in invariably offering the box-seat to the fair sex, had excepted Miss Mary from this attention, on the ground that he had a habit of "cussin' on up grades," and gave her half the coach to herself. Jack Hamlin, a gambler, having once silently ridden with her in the same coach, afterward threw a decanter at the head of a confederate for mentioning her name in a bar-room. The over-dressed mother of a pupil whose paternity was doubtful had often lingered near this astute Vestal's temple, never daring to enter its sacred precincts,

but content to worship the priestess from afar.

With such unconscious intervals the monotonous procession of blue skies, glittering sunshine, brief twilights, and starlit nights passed over Red Gulch. Miss Mary grew fond of walking in the sedate and proper woods. Perhaps she believed, with Mrs. Stidger, that the balsamic odors of the firs "did her chest good," for certainly her slight cough was less frequent and her step was firmer; perhaps she had learned the unending lesson which the patient pines are never weary of repeating to heedful or listless ears. And so, one day, she planned a picnic on Buckeye Hill, and took the children with her. Away from the dusty road, the straggling shanties, the yellow ditches, the clamor of restless engines, the cheap finery of shop-windows, the deeper glitter of paint and colored glass, and the thin veneering which barbarism takes upon itself in such localities,—what infinite relief was theirs! The last heap of ragged rock and clay passed, the last unsightly chasm crossed,—how the waiting woods opened their long files to receive them! How the children —perhaps because they had not yet grown quite away from the breast of the bounteous Mother—threw themselves face downward on her brown bosom with uncouth caresses, filling the air with their laughter; and how Miss Mary herself—felinely fastidious and intrenched as she was in the purity of spotless skirts, collar, and cuffs—forgot all, and ran like a crested quail at the head of her brood, until, romping, laughing, and panting, with a loosened braid of brown hair, a hat hanging by a knotted ribbon from her throat, she came suddenly and violently, in the heart of the forest, upon—the luckless Sandy!

The explanations, apologies, and not overwise conversation that ensued, need not be indicated here. It would seem. however, that Miss Mary had already established some acquaintance with this ex-drunkard. Enough that he was soon accepted as one of the party; that the children, with that quick intelligence which Providence gives the helpless, recognized a friend, and played with his blond beard, and long silken mustache, and took other liberties,—as the helpless are apt to do. And when he had built a fire against a tree, and had shown them other mysteries of wood-craft, their admiration knew no bounds. At the close of two such foolish, idle, happy hours he found himself lying at the feet of the schoolmistress, gazing dreamily in her face, as she sat upon the sloping hillside, weaving wreaths of laurel and syringa, in very much the same attitude as he had lain when first they met. Nor was the similitude greatly forced. The weakness of an easy, sensuous nature, that had found a dreamy exaltation in liquor, it is to be feared was now finding an equal intoxication in love.

I think that Sandy was dimly conscious of this himself. I know that he longed to be doing something,—slaying a grizzly, scalping a savage, or sacrificing himself in some way for the sake of this sallow-faced, gray-eyed schoolmistress. As I should like to present him in a heroic attitude, I stay my hand with great difficulty at this moment, being only withheld from introducing such an episode by a strong conviction that it does not usually occur at such times. And I trust

that my fairest reader, who remembers that, in a real crisis, it is always some uninteresting stranger or unromantic policeman, and not Adolphus, who rescues, will forgive the omission.

So they sat there, undisturbed,-the woodpeckers chattering overhead, and the voices of the children coming pleasantly from the hollow below. What they said matters little. What they thought—which might have been interesting—did not transpire. The woodpeckers only learned how Miss Mary was an orphan; how she left her uncle's house, to come to California, for the sake of health and independence: how Sandy was an orphan, too; how he came to California for excitement; how he had lived a wild life, and how he was trying to reform; and other details, which, from a woodpecker's view-point, undoubtedly must have seemed stupid, and a waste of time. But even in such trifles was the afternoon spent; and when the children were again gathered, and Sandy, with a delicacy which the schoolmistress well understood, took leave of them quietly at the outskirts of the settlement, it had seemed the shortest day of her weary life.

As long, dry summer withered to its roots, the school term of Red Gulch-to use a local euphuism-"dried up" also. In another day Miss Mary would be free; and for a season, at least, Red Gulch would know her no more. She was seated alone in the school-house, her cheek resting on her hand, her eves half closed in one of those day-dreams in which Miss Mary-I fear, to the danger of school discipline-was lately in the habit of indulging. Her lap was full of mosses, ferns, and other woodland memories. She was so preoccupied with these and her own thoughts that a gentle tapping at the door passed unheard, or translated itself into the remembrance of far-off woodpeckers. When at last it asserted itself more distinctly, she started up with a flushed cheek and opened the door. On the threshold stood a woman, the self-assertion and audacity of whose dress were in singular contrast to her timid, irresolute bearing.

Miss Mary recognized at a glance the dubious mother of her anonymous pupil. Perhaps she was disappointed, perhaps she was only fastidious; but as she coldly invited her to enter, she half unconsciously settled her white cuffs and collar, and gathered closer her own chaste skirts. It was, perhaps, for this reason that the embarrassed stranger, after a moment's hesitation, left her gorgeous parasol open and sticking in the dust beside the door, and then sat down at the farther end of a long bench. Her voice was husky as she began:—

"I heerd tell that you were goin' down to the Bay tomorrow, and I couldn't let you go until I came to thank you for your kindness to my Tommy."

Tommy, Miss Mary said, was a good boy, and deserved

more than the poor attention she could give him.

"Thank you, miss; thank ye!" cried the stranger, brightening even through the color which Red Gulch knew facetiously as her "war paint," and striving, in her embarrassment, to drag the long bench nearer the schoolmistress. "I thank you, miss, for that! and if I am his mother, there ain't a sweeter, dearer, better boy lives than him. And if I ain't much as says it, thar ain't a sweeter, dearer, angeler teacher lives than he's got."

Miss Mary, sitting primly behind her desk, with a ruler over her shoulder, opened her gray eyes widely at this, but said nothing.

"It ain't for you to be complimented by the like of me, I know," she went on, hurriedly. "It ain't for me to be comin' here, in broad day, to do it, either; but I come to ask a favor,—not for me, miss,—not for me, but for the darling boy."

Encouraged by a look in the young schoolmistress's eye, and putting her lilac-gloved hands together, the fingers downward, between her knees, she went on, in a low voice:—

"You see, miss, there's no one the boy has any claim on but me, and I ain't the proper person to bring him up. I thought some, last year, of sending him away to 'Frisco to school, but when they talked of bringing a schoolma'am here, I waited till I saw you, and then I knew it was all right, and I could keep my boy a little longer. And O, miss, he loves you so much; and if you could hear him talk about you, in his pretty way, and if he could ask you what I ask you now, you couldn't refuse him.

"It is natural," she went on, rapidly, in a voice that trembled strangely between pride and humility,—"it's natural that

he should take to you, miss, for his father, when I first knew him, was a gentleman,—and the boy must forget me, sooner or later,—and so I ain't a goin' to cry about that. For I come to ask you to take my Tommy,—God bless him for the bestest, sweetest boy that lives,—to—to—take him with you."

She had risen and caught the young girl's hand in her own,

and had fallen on her knees beside her.

"I've money plenty, and it's all yours and his. Put him in some good school, where you can go and see him, and help him to—to—to forget his mother. Do with him what you like. The worst you can do will be kindness to what he will learn with me. Only take him out of this wicked life, this cruel place, this home of shame and sorrow. You will; I know you will,—won't you? You will,—you must not, you cannot say no! You will make him as pure, as gentle as yourself; and when he has grown up, you will tell him his father's name,—the name that hasn't passed my lips for years,—the name of Alexander Morton, whom they call here Sandy! Miss Mary!—do not take your hand away! Miss Mary, speak to me! You will take my boy? Do not put your face from me. I know it ought not to look on such as me. Miss Mary!—my God, be merciful!— she is leaving me!"

Miss Mary had risen, and, in the gathering twilight, had felt her way to the open window. She stood there, leaning against the casement, her eyes fixed on the last rosy tints that were fading from the western sky. There was still some of its light on her pure young forehead, on her white collar, on her clasped white hands, but all fading slowly away. The suppliant had dragged herself, still on her knees, beside her.

"I know it takes time to consider. I will wait here all night; but I cannot go until you speak. Do not deny me now. You will!—I see it in your sweet face,—such a face as I have seen in my dreams. I see it in your eyes, Miss

Mary!-you will take my boy!"

The last red beam crept higher, suffused Miss Mary's eyes with something of its glory, flickered, and faded, and went out. The sun had set on Red Gulch. In the twilight and silence Miss Mary's voice sounded pleasantly.

"I will take the boy. Send him to me to-night."

The happy mother raised the hem of Miss Mary's skirts to her lips. She would have buried her hot face in its virgin folds, but she dared not. She rose to her feet.

"Does-this man-know of your intention?" asked Miss

Mary, suddenly.

"No, nor cares. He has never even seen the child to know it."

"Go to him at once,—to-night,—now! Tell him what you have done. Tell him I have taken his child, and tell him—he must never see—see—the child again. Wherever it may be, he must not come; wherever I may take it, he must not follow! There, go now, please,—I'm weary, and—have much yet to do!"

They walked together to the door. On the threshold the

woman turned. "Good night."

She would have fallen at Miss Mary's feet. But at the same moment the young girl reached out her arms, caught the sinful woman to her own pure breast for one brief moment, and then closed and locked the door.

It was with a sudden sense of great responsibility that Profane Bill took the reins of the Slumgullion Stage the next morning, for the school-mistress was one of his passengers. As he entered the high-road, in obedience to a pleasant voice from the "inside," he suddenly reined up his horses and respectfully waited, as "Tommy" hopped out at the command of Miss Mary.

"Not that bush, Tommy,-the next."

Tommy whipped out his new pocket-knife, and, cutting a branch from a tall azalea-bush, returned with it to Miss Mary.

"All right now?"

"All right."

And the stage-door closed on the Idyl of Red Gulch.

# JIM SMILY AND HIS JUMPING FROG

BY
SAMUEL L. CLEMENS
(Mark Twain)



### BIOGRAPHICAL NOTE

AMUEL LANGHORNE CLEMENS, the son of a country merchant from Tennessee, was born at Florida, Missouri, on November 30, 1835. His boyhood was spent in Hannibal. Missouri: but his father's death in 1847 cut short the boy's schooling and sent him out into the world at an early age. He learned type-setting, and in the pursuit of this craft he wandered as far east as New York. When he was seventeen he returned to the west and became a pilot on the Mississippi, an occupation he followed until traffic was interrupted by the war. Drifting farther west to Nevada, he saw something of mining and began to write for the newspapers, using as his pen name "Mark Twain," from a call used in recording soundings on the Mississippi. Finally reaching California, he made the acquaintance of Bret Harte, then in the San Francisco Mint, and told him the story of "The Celebrated Jumping Frog of Calaveras County." It was the publication of this famous varn that first brought him into notice; and a San Francisco newspaper enabled him to join a party which had chartered a steamer for a Mediterranean tour. His first book, "The Innocents Abroad," was made from the letters written on this trip, and it immediately achieved a wide popularity. Availing himself of the publicity thus won, he took to the lecture platform, where he delighted his audiences with his extraordinary talent for story-telling and his droll humor. After a short period as editor of a Buffalo newspaper, he settled with his wife at Hartford, Connecticut, and devoted himself to writing. The chief publications of the next few years were "Roughing It" (1872); "The Gilded Age," in which he collaborated with C. D. Warner and which was successfully dramatized; and "The Adventures of Tom Sawyer" (1875), the first of his novels of the Mississippi Valley. A second trip to Europe produced "A Tramp Abroad" (1880), followed 423

by "The Prince and the Pauper," "Life on the Mississippi,"
"The Adventures of Huckleberry Finn," (1884) a sequel to
"Tom Sawyer;" "A Connecticut Yankee at the Court of

King Arthur;" and "The American Claimant."

Meantime he had become heavily interested in a New York publishing house, which went into bankruptcy about 1893. Like Sir Walter Scott in similar circumstances, he set himself to pay off his indebtedness, and by 1900 he was again clear. In the interval he had produced his third novel of the Mississippi Valley, "The Tragedy of Pudd'nhead Wilson" (1894) and a historical romance, "Personal Recollections of Joan of Arc." He made a tour of the world, lecturing and collecting material for his "Following the Equator," and arranged for a complete edition of his works, issued in 1899-1900.

Though he continued to write almost to the end, his most distinguished work was done, and during the last ten years of his life he reaped the reward he had richly earned. His books brought him in a large income, and he had become the "grand old man" of American letters. Oxford University gave him the degree of doctor of literature in 1907, and his reception in England was marked by great enthusiasm. He

died at Redding, Connecticut, on April 21, 1910.

Mark Twain is most widely known as a humorist, and among American humorists it may fairly be claimed that he stands first. In his comic exaggeration and solemn, inextricable mingling of fact and absurdity he has carried to its highest point the type of humor most characteristic of this country. But he was much more than a humorist. He was a master of simple and effective narrative and of vivid description; and his novels of the Mississippi belong to that valuable class which have fixed for posterity a whole phase of life that has passed away. Moreover, underneath his comedy there lay depths of a somewhat melancholy wisdom, and a great capacity for righteous indignation. More and more America has come to recognize that her chief master of comedy was also a sage.

W. A. N.

## CRITICISMS AND INTERPRETATIONS

Ι

#### By T. EDGAR PEMBERTON

RET HARTE has himself told the story of how while occupied with his secretarial duties at the San Francisco Mint-and his literary work religiously carried on outside mint hours—George Barnes, a brother journalist, introduced him to a young man whose appearance was decidedly interesting. "His head" he writes, "was striking. He had the curly hair, the aquiline nose, and even the aquiline eye-an eye so eagle-like that a second lid would not have surprised me-of an unusual and dominant nature. His eyebrows were very thick and bushy. His dress was careless, and his general manner one of supreme indifference to surroundings and circumstances. Barnes introduced him as Mr. Sam Clemens, and remarked that he had shown a very unusual talent in a number of newspaper articles contributed over the signature of 'Mark Twain.' We talked on different topics, and about a month afterwards Clemens dropped in upon me again. He had been away in the mining districts on some newspaper assignment in the meantime. In the course of conversation he remarked that the unearthly laziness that prevailed in the town he had been visiting was beyond anything in his previous experience. He said the men did nothing all day long but sit around the bar-room stove, spit, and "swop lies." He spoke in a slow, rather satirical drawl, which was in itself irresistible. He went on to tell one of those extravagant stories, and half unconsciously dropped into the lazy tone and manner of the original narrator. was as graphic as it was delicious. I asked him to tell it again to a friend who came in, and then asked him to write it out for "The Californian." He did so, and when published

it was an emphatic success. It was the first work of his that attracted general attention, and it crossed the Sierras for an Eastern reading. The story was "The Jumping Frog of Calaveras," It is known and laughed over, I suppose, wherever the English language is spoken; but it will never be as funny to anyone in print as it was to me, told for the first time by the unknown Twain himself on that morning in San Francisco Mint.-From "Bret Harte" (1000).

#### TT

### By Albert Bigelow Paine

T is difficult to judge the Jumping Frog story to-day.

It has the intrinsic fundamental way. Æsop's Fables.¹ It contains a basic idea which is essentially ludicrous, and the quaint simplicity of its telling is convincing and full of charm. It appeared in print at a time when American humor was chaotic, the public taste unformed. We had a vast appreciation for what was comic. with no great number of opportunities for showing it. We were so ready to laugh that when a real opportunity came along we improved it and kept on laughing and repeating the cause of our merriment, directing the attention of our friends to it. Whether the story of "Jim Smily's Frog." offered for the first time to-day, would capture the public, and become the initial block of a towering fame, is another matter. That the author himself under-rated it is certain. That the public, receiving it at what we now term the psychological moment, may have over-rated it is by no means impossible. In any case, it does not matter now. The stone rejected by the builder was made the corner-stone of his literary edifice. As such it is immortal,-From "Mark Twain" (1912).

¹ The resemblance of the frog story to the early Greek tales must have been noted by Prof. Henry Sidgwick, who synopsized it in Greek form and phrase for his book, Greek Prose Composition. Through this originated the impression that the story was of Athenian root. Mark Twain himself was deceived, until in 1899, when he met Professor Sidgwick, who explained that the Greek version was the translation and Mark Twain's the original; that he had thought it unnecessary to give credit for a story so well known. See The Jumping Frog, Harper & Bros., 1903, p. 64.

#### TIT

#### By Archibald Henderson

ARK TWAIN was a great humorist—more genial than grim, more good-humoured than than grim, more good-humoured than ironic, more given to imaginative exaggeration than to intellectual sophistication, more inclined to pathos than to melancholy. He was a great story-teller and fabulist; and he has enriched the literature of the world with a gallery of portraits so human in their likenesses as to rank them with the great figures of classic comedy and picaresque romance. He was a remarkable observer and faithful reporter, never allowing himself, in Ibsen's phrase, to be "frightened by the venerableness of the institutions"; and his sublimated journalism reveals a mastery of the naïvely comic thoroughly human and democratic. He is the most eminent product of our American democracy, and, in profoundly shocking Great Britain by preferring Connecticut to Camelot, he exhibited that robustness of outlook. that buoyancy of spirit, and that faith in the contemporary which stamps America in perennial and inexhaustible youth. Throughout his long life, he has been a factor of high ethical influence in our civilization, and the philosopher and the humanitarian look out through the twinkling eyes of the humorist.-From "Mark Twain" (1900).



## JIM SMILY AND HIS JUMPING FROG'

R. A. WARD,
DEAR SIR:—Well, I called on good-natured, garrulous old Simon Wheeler, and I inquired after your friend Leonidas W. Smily, as you requested me to do, and I hereunto append the result. If you can get any information out of it you are cordially welcome to it. I have a lurking suspicion that your Leonidas W. Smily is a myth—that you never knew such a personage, and that you only conjectured that if I asked old Wheeler about him it would remind him of his infamous Jim Smily, and he would go to work and bore me nearly to death with some infernal reminiscence of him as long and tedious as it should be useless to me. If that was your design, Mr. Ward, it will gratify you to know that it succeeded.

I found Simon Wheeler dozing comfortably by the barroom stove of the little old dilapidated tavern in the ancient mining camp of Boomerang, and I noticed that he was fat and bald-headed, and had an expression of winning gentleness and simplicity upon his tranquil countenance. He roused up and gave me good-day. I told him a friend of mine had commissioned me to make some inquiries about a cherished companion of his boyhood named Leonidas W. Smily—Rev. Leonidas W. Smily—a young minister of the gospel, who he had heard was at one time a resident of this village of Boomerang. I added that if Mr. Wheeler could tell me anything about this Rev. Leonidas W. Smily, I would feel under many obligations to him.

Simon Wheeler backed me into a corner and blockaded me there with his chair—and then sat down and reeled off the monotonous narrative which follows this paragraph. He never smiled, he never frowned, he never changed his voice from the quiet, gently-flowing key to which he turned the initial sentence, he never betrayed the slightest suspicion of enthusiasm—but all through the interminable narrative there ran a vein of impressive earnestness and sincerity, which showed me plainly that so far from his imagining that there was anything ridiculous or funny about his story, he regarded it as a really important matter, and admired its two heroes as men of transcendent genius in finesse. To me, the spectacle of a man drifting serenely along through such a queer yarn without ever smiling was exquisitely absurd. As I said before, I asked him to tell me what he knew of Rev. Leonidas W. Smily, and he replied as follows. I let him go on in his own way, and never interrupted him once:

There was a feller here once by the name of Jim Smily. in the winter of '49-or maybe it was the spring of '50-I don't recollect exactly, somehow, though what makes me think it was one or the other is because I remember the big flume wasn't finished when he first come to the camp; but anyway, he was the curiosest man about always betting on anything that turned up you ever see, if he could get anybody to bet on the other side, and if he couldn't he'd change sides-any way that suited the other man would suit him-any way just so's he got a bet, he was satisfied. But still, he was lucky-uncommon lucky; he most always come out winner. He was always ready and laying for a chance; there couldn't be no solitary thing mentioned but what that feller'd offer to bet on it-and take any side you please, as I was just telling you; if there was a horse race, you'd find him flush or you'd find him busted at the end of it; if there was a dog-fight, he'd bet on it; if there was a catfight, he'd bet on it; if there was a chicken-fight, he'd bet on it: why if there was two birds setting on a fence, he would bet you which one would fly first-or if there was a camp-meeting he would be there reglar to bet on parson Walker, which he judged to be the best exhorter about here, and so he was, too, and a good man; if he even see a straddle-bug start to go anywheres, he would bet you how long it would take him to get wherever he was going to, and if you took him up he would foller that straddle-bug to

Mexico but what he would find out where he was bound for and how long he was on the road. Lots of the boys here has seen that Smily and can tell you about him. Why, it never made no difference to him—he would bet on anything—the dangdest feller. Parson Walker's wife laid very sick, once, for a good while, and it seemed as if they warn't going to save her; but one morning he come in and Smily asked him how she was, and he said she was considerable better—thank the Lord for his infinite mercy—and coming on so smart that with the blessing of Providence she'd get well yet—and Smily, before he thought, says, "Well, I'll resk two-and-a-half that she don't, anyway."

Thish-yer Smily had a mare—the boys called her the fifteen-minute nag, but that was only in fun, you know, because, of course, she was faster than that—and he use to win money on that horse, for all she was so slow and always had the asthma, or the distemper, or the consumption, or something of that kind. They use to give her two or three hundred yards' start, and then pass her under way; but always at the fag-end of the race she'd get excited and desperate-like, and come cavorting and spraddling up, and scattering her legs around limber, sometimes in the air, and sometimes out to one side amongst the fences, and kicking up m-o-r-e dust, and raising m-o-r-e racket with her coughing and sneezing and blowing her nose—and always fetch up at the stand just about a neck ahead, as near as you could cipher it down.

And he had a little small bull-pup, that to look at him you'd think he warn't worth a cent, but to set around and look onery, and lay for a chance to steal something. But as soon as money was up on him he was a different dog—his under-jaw'd begin to stick out like the for'castle of a steamboat, and his teeth would uncover, and shine savage like the furnaces. And a dog might tackle him, and bully-rag him, and bite him, and throw him over his shoulder two or three times, and Andrew Jackson—which was the name of the pup—Andrew Jackson would never let on but what he was satisfied, and hadn't expected nothing else—and the bets being doubled and doubled on the other side all the time, till the money was all up—and then all of a sudden

he would grab that other dog just by the joint of his hind legs and freeze to it-not chaw, you understand, but only just grip and hang on till they throwed up the sponge, if it was a year. Smily always came out winner on that pup till he harnessed a dog once that didn't have no hind legs, because they'd been sawed off in a circular saw, and when the thing had gone along far enough, and the money was all up, and he came to make a snatch for his pet holt, he saw in a minute how he'd been imposed on, and how the other dog had him in the door, so to speak, and he 'peared surprised, and then he looked sorter discouraged like, and didn't try no more to win the fight, and so he got shucked out bad. He gave Smily a look as much as to say his heart was broke, and it was his fault, for putting up a dog that hadn't no hind legs for him to take holt of, which was his main dependence in a fight, and then he limped off a piece, and laid down and died. It was a good pup, was that Andrew Jackson, and would have made a name for hisself if he'd lived, for the stuff was in him, and he had genius-I know it, because he hadn't no opportunities to speak of, and it don't stand to reason that a dog could make such a fight as he could under them circumstances, if he hadn't no talent. It always makes me feel sorry when I think of that last fight of his'n, and the way it turned out.

Well, thish-yer Smily had rat-terriers and chicken-cocks, and tom-cats, and all them kind of things, till you couldn't rest, and you couldn't fetch nothing for him to bet on but he'd match you. He ketched a frog one day and took him home and said he cal'lated to educate him; and so he never done nothing for three months but set in his back yard and learn that frog to jump. And you bet you he did learn him, too. He'd give him a little hunch behind, and the next minute you'd see that frog whirling in the air like a doughnut—see him turn one summerset, or maybe a couple, if he got a good start, and come down flat-footed and all right, like a cat. He got him up so in the matter of ketching flies, and kept him in practice so constant, that he'd nail a fly every time as far as he could see him. Smily said all a frog wanted was education, and he could do most anything-and I believe him. Why, I've seen him set Dan'l Webster down

here on this floor-Dan'l Webster was the name of the frog—and sing out, "Flies! Dan'l, flies," and quicker'n you could wink, he'd spring straight up, and snake a fly off'n the counter there, and flop down on the floor again as solid as a gob of mud, and fall to scratching the side of his head with his hind foot as indifferent as if he hadn't no idea he'd done any more'n any frog might do. You never see a frog so modest and straightfor'ard as he was, for all he was so gifted. And when it come to fair-and-square jumping on a dead level, he could get over more ground at one straddle than any animal of his breed you ever see. Jumping on a dead level was his strong suit, you understand, and when it come to that, Smily would ante up money on him as long as he had a red. Smily was monstrous proud of his frog, and well he might be, for fellers that had travelled and been everywheres all said he laid over any frog that ever they see.

Well, Smily kept the beast in a little lattice box, and he used to fetch him down town sometimes and lay for a bet. One day a feller—a stranger in the camp, he was—come across him with his box, and says:

"What might it be that you've got in the box?"

And Smily says, sorter indifferent like, "It might be a parrot, or it might be a canary, maybe, but it ain't—it's only just a frog."

And the feller took it, and looked at it careful, and turned it round this way and that, and says, "H'm—so 'tis. Well, what's he good for?"

"Well," Smily says, easy and careless, "He's good enough for one thing I should judge—he can out-jump ary frog in Calaveras county."

The feller took the box again, and took another long, particular look, and give it back to Smily and says very deliberate, "Well—I don't see no points about that frog that's any better'n any other frog."

"Maybe you don't," Smily says. "Maybe you understand

"Maybe you don't," Smily says. "Maybe you understand frogs, and maybe you don't understand 'em; maybe you've had experience, and maybe you ain't only a amature, as it were. Anyways, I've got my opinion, and I'll resk forty dollars that he can outjump ary frog in Calaveras county."

And the feller studied a minute, and then says, kinder sad like, "Well—I'm only a stranger here, and I ain't got no frog—but if I had a frog I'd bet you."

And then Smily says, "That's all right—that's all right—if you'll hold my box a minute I'll go and get you a frog;" and so the feller took the box, and put up his forty dollars

along with Smily's, and set down to wait.

So he set there a good while thinking and thinking to hisself, and then he got the frog out and prized his mouth open and took a teaspoon and filled him full of quail-shot—filled him pretty near up to his chin—and set him on the floor. Smily he went out to the swamp and slopped around in the mud for a long time, and finally he ketched a frog and fetched him in and give him to this feller and says:

"Now if you're ready, set him alongside of Dan'l, with his fore-paws just even with Dan'l's, and I'll give the word." Then he says, "one—two—three—jump!" and him and the feller touched up the frogs from behind, and the new frog hopped off lively, but Dan'l give a heave, and hysted up his shoulders—so—like a Frenchman, but it wasn't no use—he couldn't budge; he was planted as solid as a anvil, and he couldn't no more stir than if he was anchored out. Smily was a good deal surprised, and he was disgusted too, but he didn't have no idea what the matter was, of course.

The feller took the money and started away, and when he was going out at the door he sorter jerked his thumb over his shoulder—this way—at Dan'l, and says again, very deliberate, "Well—I don't see no points about that frog that's

any better'n any other frog."

Smily he stood scratching his head and looking down at Dan'l a long time, and at last he says, "I do wonder what in the nation that frog throwed off for—I wonder if there ain't something the matter with him—he 'pears to look mighty baggy, somehow—and he ketched Dan'l by the nap of the neck, and lifted him up and says, "Why blame my cats if he don't weigh five pound"—and turned him upside down, and he belched out about a double-handful of shot. And then he see how it was, and he was the maddest man—he set the frog down and took out after that feller, but he never ketched him. And—

[Here Simon Wheeler heard his name called from the front-yard, and got up to go and see what was wanted.] And turning to me as he moved away, he said: "Just sit where you are, stranger, and rest easy—I ain't going to be gone a second."

But by your leave, I did not think that a continuation of the history of the enterprising vagabond Jim Smily would be likely to afford me much information concerning the Rev. Leonidas W. Smily, and so I started away.

At the door I met the sociable Wheeler returning, and he

button-holed me and recommenced:

"Well, thish-yer Smily had a yaller one-eyed cow that didn't have no tail only just a short stump like a bannanner, and——"

"O, curse Smily and his afflicted cow!" I muttered, good-naturedly, and bidding the old gentleman good-day, I departed.

Yours, truly,

MARK TWAIN.



### THE MAN WITHOUT A COUNTRY

## BY EDWARD EVERETT HALE



#### BIOGRAPHICAL NOTE

HE name of Edward Everett Hale suggests his distinguished ancestry. The son of Nathan Hale, proprietor and editor of the Boston "Daily Advertiser," he was a nephew of Edward Everett, orator, statesman, and diplomat, and a grandnephew of the Revolutionary hero, Nathan Hale. He was born in Boston on April 3, 1822, and after graduating from Harvard in 1839 became pastor of the Church of the Unity, Worcester, Massachusetts. From 1856 till 1899 he ministered to the South Congregational (Unitarian) Church in Boston; and in 1903 became chaplain of the United States Senate. He died at Roxbury, Massachusetts, June 10, 1909, after a career of extraordinary activity and immense influence.

Hale was a power in many fields besides literature—in religion, politics, and in social betterment. He was one of the most prominent exponents of the liberal theology that was represented by New England Unitarianism. He took an active part in the anti-slavery movement. A great variety of good causes enlisted his sympathy, and he did substantial service in the cause of popular education. In his Lowell Institute lectures in 1860 he first propounded his famous saying, "Look up and not down, look forward and not back, look out and not in, and lend a hand." highly characteristic utterance he took for the motto of his story. "Ten Times One is Ten"; and its influence is testified to by the "Lend-a-Hand Clubs," "Look-up Legions," and the like, formed among the young for moral and social Similarly, his story of the Waldenses, "In improvement. His Name" (1873), provided impetus and a title for the religious organizations "King's Sons" and "King's Daughters."

His literary production was large and varied. He wrote scholarly biography and history, sermons, books of travel, reminiscences, and fiction. Books like his "New England Boyhood" are not only attractive in style, but of serious historical value as pictures of the life of the time. His most serious historical work, apart from his contributions to Justin Winsor's histories, was his "Franklin in France," in which his son, Edward Everett Hale, Jr., collaborated. But it is to his fiction that he owes his wider reputation. He began in 1859 with the amusing satire, "My Double and How He Undid Me," and in 1863 achieved national renown with "The Man Without a Country." He wrote a longer novel as a sequel to this, "Philip Nolan's Friend," in 1876.

In spite of the interest and extent of his other writings, it is more than possible that Hale may be known to posterity as a man of one story, and that story "The Man Without a Country." This powerful and pathetic narrative was produced while the country was in the throes of the Civil War, and it embodied as no other literary production did the sentiment of lovalty to the Union. It was a stroke of genius to attempt this, not by the picture of heroic achievement in the battle field, but by the long-drawn-out chronicle of the life of a man to whom existence is an aching void because of the absolute severance of all national The effect is intensified by the matter-of-fact tone of the narrative. So successful is the realistic method that it is difficult to believe it is not a historical incident that is described; and the restraint with which the slow agony of Nolan is pictured increases the power with which the lesson of patriotism is brought home. Nor is it merely American patriotism that is inculcated: for the impression of truth to human nature that is conveyed is such that it bears its message to the men of all nations.

W. A. N.

#### CRITICISM AND INTERPRETATION

#### By HENRY SEIDEL CANBY

HERE are few tales charged with stronger patriotism than breathes from this narrative of a man who "loved his country as no other man has loved her; but no man deserved less at her hands." Not many poems called forth by the intensities of our war period so well embody the strong loyalty engendered by the struggle. And there are few narratives at whose last line we can say with stronger conviction, Here is a great story. Philip Nolan, lieutenant in the United States Army, "expressed with an oath the wish that he might 'never hear of the United States again.' The Court sentenced him to have his wish fulfilled." This is the plot, and it is worked out with all the ingenuity of a clever story-teller, and all the passion of an ardent patriot. There are splendid climaxes: where poor Nolan, on shipboard, an exile from even the name of home. reads aloud, by unhappy accident, "Breathes there the man, with soul so dead": or when the Kroomen of the captured slave ship beg through his agonized translation, "Take us home, take us to our own country." And yet this story has received scant notice at the hands of historians and critics of the only literature in which Americans can claim distinct originality, that of the short story. . . .

The reason for this neglect is that this tale lacks the perfect structure and the new technique which was to make unity of impression easy, and good short stories abundant. The emphasis is not reserved for the end; there is much that is irrelevant, unplaced, digressive in the narrative; the first paragraph is by no means conscious of the last. Why then successful? Why then not merely a good narrative, but a good short story, with an impression left upon the mind which is single and intensely vivid? Undoubtedly

Mr. Hale was forcible because he felt every word he wrote—but that does not explain why, with so little attempt at structure, he made such an excellent short story. The truth is that he succeeded because he hit upon that other device for making a short story effective; he gripped firmly, not a plot, but, most striking situation—suppose a man, for treason, to be kept ignorant of home and country—and made his story to center upon that from first word to end. This is equivalent, in its result, to structural emphasis, for the impression has to be a unified one. And it seems to account for the effectiveness of Mr. Hale's easily running story.

This choice of a situation as the nucleus for a story had been adopted some twenty years before by Hawthorne, with very different material and for a very different purpose. Inevitably, whether through imitation, or by a natural experimenting with means available for a desired end, it was bound to be continued in the later development. But Mr. Hale was the first, after Hawthorne, to apply the principle for really great results, and, furthermore, he points the way, in his stories, towards the use of situations, not moralphilosophical, like Hawthorne's, but simply interesting as are those chosen by Henry James or Maupassant. "The Man Without a Country" is, therefore, a true milestone. It was an artistic success because of its very vivid impression of a soul's tragedy. The impression made is so vivid because the story which conveys it is not too long for one idea, and one only, to fill it. It was possible to make it short, with a man's life for subject, because, not the plot of Philip Nolan's tragedy, but the poignancy of his situation was the aim of the narrative.-From "The Short Story in English" (1909).

# THE MAN WITHOUT A COUNTRY

SUPPOSE that very few casual readers of the "New York Herald" of August 13, 1863, observed, in an obscure corner, among the "Deaths," the announcement,—

"Nolan. Died, on board U. S. Corvette 'Levant,' Lat. 2° 11' S., Long. 131° W., on the 11th of May, Phillip Nolan."

I happened to observe it, because I was stranded at the old Mission House in Mackinaw, waiting for a Lake Superior steamer which did not choose to come, and I was devouring to the very stubble all the current literature I could get hold of, even down to the deaths and marriages in the "Herald." My memory for names and people is good, and the reader will see, as he goes on, that I had reason enough to remember Philip Nolan. There are hundreds of readers who would have paused at that announcement, if the officer of the "Levant" who reported it had chosen to make it thus: "Died, May II, THE MAN WITHOUT A COUNTRY." For it was as "The Man without a Country" that poor Philip Nolan had generally been known by the officers who had him in charge during some fifty years, as, indeed, by all the men who sailed under them. I dare say there is many a man who has taken wine with him once a fortnight, in a three years' cruise, who never knew that his name was "Nolan," or whether the poor wretch had any name at all.

There can now be no possible harm in telling this poor creature's story. Reason enough there has been till now, ever since Madison's administration went out in 1817, for very strict secrecy, the secrecy of honor itself, among the gentlemen of the navy who have had Nolan in successive charge. And certainly it speaks well for the *esprit de corps* 

of the profession, and the personal honor of its members. that to the press this man's story has been wholly unknown, -and. I think, to the country at large also. I have reason to think, from some investigations I made in the Naval Archives when I was attached to the Bureau of Construction, that every official report relating to him was burned when Ross burned the public buildings at Washington. One of the Tuckers, or possibly one of the Watsons, had Nolan in charge at the end of the war; and when, on returning from his cruise, he reported at Washington to one of the Crowninshields,—who was in the Navy Department when he came home,—he found that the Department ignored the whole business. Whether they really knew nothing about it, or whether it was a "Non mi ricordo." determined on as a piece of policy. I do not know. But this I do know, that since 1817, and possibly before, no naval officer has mentioned Nolan in his report of a cruise.

But, as I say, there is no need for secrecy any longer. And now the poor creature is dead, it seems to me worth while to tell a little of his story, by way of showing young Americans of to-day what it is to be a MAN WITHOUT A

COUNTRY.

Philip Nolan was as fine a young officer as there was in the "Legion of the West," as the Western division of our army was then called. When Aaron Burr made his first dashing expedition down to New Orleans in 1805, at Fort Massac, or somewhere above on the river, he met, as the Devil would have it, this gay, dashing, bright young fellow; at some dinner-party, I think. Burr marked him, talked to him, walked with him, took him a day or two's voyage in his flat-boat, and, in short, fascinated him. For the next year, barrack-life was very tame to poor Nolan. He occasionally availed himself of the permission the great man had given him to write to him. Long, high-worded, stilted letters the poor boy wrote and rewrote and copied. But never a line did he have in reply from the gay deceiver. The other boys in the garrison sneered at him, because he sacrificed in this unrequited affection for a politician the time which they devoted to Monongahela, hazard, and high-low-jack.

Bourbon, euchre, and poker were still unknown. But one day Nolan had his revenge. This time Burr came down the river, not as an attorney seeking a place for his office, but as a disguised conqueror. He had defeated I know not how many district-attorneys; he had dined at I know not how many public dinners; he had been heralded in I know not how many Weekly Arguses, and it was rumored that he had an army behind him and an empire before him. It was a great day-his arrival-to poor Nolan. Burr had not been at the fort an hour before he sent for him. That evening he asked Nolan to take him out in his skiff. to show him a canebrake or a cotton-wood tree, as he said,really to seduce him; and by the time the sail was over, Nolan was enlisted body and soul. From that time, though he did not yet know it, he lived as a MAN WITHOUT A COUNTRY.

What Burr meant to do I know no more than you, dear reader. It is none of our business just now. Only, when the grand catastrophe came, and Jefferson and the House of Virginia of that day undertook to break on the wheel all the possible Clarences of the then House of York, by the great treason trial at Richmond, some of the lesser fry in that distant Mississippi Valley, which was farther from us than Puget's Sound is to-day, introduced the like novelty on their provincial stage; and, to while away the monotony of the summer at Fort Adams, got up, for spectacles, a string of court-martials on the officers there. One and another of the colonels and majors were tried, and, to fill out the list little Nolan, against whom, Heaven knows, there was evidence enough.—that he was sick of the service, had been willing to be false to it, and would have obeyed any order to march any-whither with any one who would follow him had the order been signed, "By command of His Exc. A. Burr." The courts dragged on. The big flies escaped,rightly for all I know. Nolan was proved guilty enough, as I say; yet you and I would never have heard of him, reader, but that, when the president of the court asked him at the close whether he wished to say anything to show that he had always been faithful to the United States, he cried out, in a fit of frenzy,-

"Damn the United States! I wish I may never hear of

the United States again!"

I suppose he did not know how the words shocked old Colonel Morgan, who was holding the court. Half the officers who sat in it had served through the Revolution, and their lives, not to say their necks, had been risked for the very idea which he so cavalierly cursed in his madness. He. on his part, had grown up in the West of those days, in the midst of "Spanish plot," "Orleans plot," and all the rest. He had been educated on a plantation where the finest company was a Spanish officer or a French merchant from Orleans. His education, such as it was, had been perfected in commercial expeditions to Vera Cruz, and I think he told me his father once hired an Englishman to be a private tutor for a winter on the plantation. He had spent half his youth with an older brother, hunting horses in Texas; and, in a word, to him "United States" was scarcely a reality. Yet he had been fed by "United States" for all the years since he had been in the army. He had sworn on his faith as a Christian to be true to "United States." It was "United States" which gave him the uniform he wore, and the sword by his side. Nay, my poor Nolan, it was only because "United States" had picked you out first as one of her own confidential men of honor that "A. Burr" cared for you a straw more than for the flat-boat men who sailed his ark for him. I do not excuse Nolan; I only explain to the reader why he damned his country, and wished he might never hear . her name again.

He never did hear her name but once again. From that moment, Sept. 23, 1807, till the day he died, May 11, 1863, he never heard her name again. For that half-century and

more he was a man without a country.

Old Morgan, as I said, was terribly shocked. If Nolan had compared George Washington to Benedict Arnold, or had cried, "God save King George," Morgan would not have felt worse. He called the court into his private room, and returned in fifteen minutes, with a face like a sheet, to say,—

"Prisoner, hear the sentence of the Court! The Court decides, subject to the approval of the President, that you

never hear the name of the United States again."

Nolan laughed. But nobody else laughed. Old Morgan was too solemn, and the whole room was hushed dead as night for a minute. Even Nolan lost his swagger in a moment. Then Morgan added,—

"Mr. Marshal, take the prisoner to Orleans in an armed boat, and deliver him to the naval commander there."

The marshal gave his orders and the prisoner was taken out of court.

"Mr. Marshal," continued old Morgan, "see that no one mentions the United States to the prisoner. Mr. Marshal, make my respects to Lieutenant Mitchell at Orleans, and request him to order that no one shall mention the United States to the prisoner while he is on board ship. You will receive your written orders from the officer on duty here this evening. The court is adjourned without day."

I have always supposed that Colonel Morgan himself took the proceedings of the court to Washington city, and explained them to Mr. Jefferson. Certain it is that the President approved them,—certain, that is, if I may believe the men who say they have seen his signature. Before the "Nautilus" got round from New Orleans to the Northern Atlantic coast with the prisoner on board, the sentence had been approved, and he was a man without a country.

The plan then adopted was substantially the same which was necessarily followed ever after. Perhaps it was suggested by the necessity of sending him by water from Fort Adams and Orleans. The Secretary of the Navy—it must have been the first Crowninshield, though he is a man I do not remember—was requested to put Nolan on board a government vessel bound on a long cruise, and to direct that he should be only so far confined there as to make it certain that he never saw or heard of the country. We had few long cruises then, and the navy was very much out of favor; and as almost all of this story is traditional, as I have explained, I do not know certainly what his first cruise was.

But the commander to whom he was intrusted,—perhaps it was Tingey or Shaw, though I think it was one of the younger men,—we are all old enough now,—regulated the etiquette and the precautions of the affair, and according to his scheme they were carried out, I suppose, till Nolan died.

When I was second officer of the "Intrepid," some thirty years after, I saw the original paper of instructions. I have been sorry ever since that I did not copy the whole of it. It ran, however, much in this way:—

"Washington (with a date which must have been late in 1807).

"SIR,—You will receive from Lieutenant Neale the person of Philip Nolan, late a lieutenant in the United States Army.

"This person on his trial by court-martial expressed, with an oath, the wish that he might never hear of the United States again."

"The Court sentenced him to have his wish fulfilled.

"For the present, the execution of the order is intrusted by the President to this Department.

"You will take the prisoner on board your ship, and keep him there

with such precautions as shall prevent his escape.

"You will provide him with such quarters, rations, and clothing as would be proper for an officer of his late rank, if he were a passenger on your vessel on the business of his Government.

"The gentlemen on board will make any arrangements agreeable to themselves regarding his society. He is to be exposed to no indignity of any kind, nor is he ever unnecessarily to be reminded that

he is a prisoner.

"But under no circumstances is he ever to hear of his country or to see any information regarding it; and you will especially caution all the officers under your command to take care, that, in the various indulgences which may be granted, this rule, in which his punishment is involved, shall not be broken.

"It is the intention of the Government that he shall never again see the country which he has disowned. Before the end of your cruise you will receive orders which will give effect to this intention.

"Respectfully yours,
"W. SOUTHARD, for the

"Secretary of the Navy."

If I had only preserved the whole of this paper, there would be no break in the beginning of my sketch of this story. For Captain Shaw, if it were he, handed it to his successor in the charge, and he to his, and I suppose the commander of the "Levant" has it to-day as his authority for keeping this man in this mild custody.

The rule adopted on board the ships on which I have met "the man without a country" was, I think, transmitted from the beginning. No mess liked to have him permanently, because his presence cut off all talk of home or of the prospect of return, of politics or letters, of peace or of war,—cut off more than half the talk the men liked to have at sea. But it was always thought too hard that he should never meet the rest of us, except to touch hats, and we finally sank into one system. He was not permitted to talk with the men, unless an officer was by. With officers he had unrestrained intercourse, as far as they and he chose. But he grew shy, though he had favorites: I was one.

Then the captain always asked him to dinner on Monday. Every mess in succession took up the invitation in its turn. According to the size of the ship, you had him at vour mess more or less often at dinner. His breakfast he ate in his own state-room,—he always had a state-room. which was where a sentinel or somebody on the watch could see the door. And whatever else he ate or drank, he ate or drank alone. Sometimes, when the marines or sailors had any special jollification, they were permitted to invite "Plain-Buttons," as they called him. Then Nolan was sent with some officer, and the men were forbidden to speak of home while he was there. I believe the theory was that the sight of his punishment did them good. They called him "Plain-Buttons," because, while he always chose to wear a regulation army-uniform, he was not permitted to wear the army-button, for the reason that it bore either the initials or the insignia of the country he had disowned.

I remember, soon after I joined the navy, I was on shore with some of the older officers from our ship and from the "Brandywine," which we had met at Alexandria. We had leave to make a party and go up to Cairo and the Pyramids. As we jogged along (you went on donkeys then), some of the gentlemen (we boys called them "Dons," but the phrase was long since changed) fell to talking about Nolan, and some one told the system which was adopted from the first about his books and other reading. As he was almost never permitted to go on shore, even though the vessel lay in port for months, his time at the best hung heavy; and everybody was permitted to lend him books, if they were not published in America and made no allusion to it. These

were common enough in the old days, when people in the other hemisphere talked of the United States as little as we do of Paraguay. He had almost all the foreign papers that came into the ship, sooner or later; only somebody must go over them first, and cut out any advertisement or stray paragraph that alluded to America. This was a little cruel sometimes, when the back of what was cut out might be as innocent as Hesiod. Right in the midst of one of Napoleon's battles, or one of Canning's speeches, poor Nolan would find a great hole, because on the back of the page of that paper there had been an advertisement of a packet for New York, or a scrap from the President's message. I say this was the first time I ever heard of this plan, which afterwards I had enough and more than enough to do with. I remember it, because poor Phillips, who was of the party, as soon as the allusion to reading was made, told a story of something which happened at the Cape of Good Hope on Nolan's first voyage; and it is the only thing I ever knew of that voyage. They had touched at the Cape, and had done the civil thing with the English Admiral and the fleet, and then, leaving for a long cruise up the Indian Ocean, Phillips had borrowed a lot of English books from an officer, which. in those days, as indeed in these, was quite a windfall. Among them, as the Devil would order, was the "Lay of the Last Minstrel," which they had all of them heard of, but which most of them had never seen. I think it could not have been published long. Well, nobody thought there could be any risk of anything national in that, though Phillips swore old Shaw had cut out the "Tempest" from Shakespeare before he let Nolan have it, because he said "the Bermudas ought to be ours, and, by Jove, should be one day." So Nolan was permitted to join the circle one afternoon when a lot of them sat on deck smoking and reading aloud. People do not do such things so often now: but when I was young we got rid of a great deal of time so. Well, so it happened that in his turn Nolan took the book and read to the others; and he read very well, as I know. Nobody in the circle knew a line of the poem, only it was all magic and Border chivalry, and was ten thousand years ago. Poor Nolan read steadily through the fifth canto, stopped a minute and drank something, and then began, without a thought of what was coming,—

"Breathes there the man, with soul so dead, Who never to himself hath said,"—

It seems impossible to us that anybody ever heard this for the first time; but all these fellows did then, and poor Nolan himself went on, still unconsciously or mechanically,—

"This is my own, my native land!"

Then they all saw something was to pay; but he expected to get through, I suppose, turned a little pale, but plunged on,—

"Whose heart hath ne'er within him burned, As home his footsteps he hath turned From wandering on a foreign strand?— If such there breathe, go, mark him well,"—

By this time the men were all beside themselves, wishing there was any way to make him turn over two pages; but he had not quite presence of mind for that; he gagged a little, colored crimson, and staggered on,—

> "For him no minstrel raptures swell; High though his titles, proud his name, Boundless his wealth as wish can claim, Despite these titles, power, and pelf, The wretch, concentred all in self."—

and here the poor fellow choked, could not go on, but started up, swung the book into the sea, vanished into his stateroom, "And by Jove," said Phillips, "we did not see him for two months again. And I had to make up some beggarly story to that English surgeon why I did not return his Walter Scott to him."

That story shows about the time when Nolan's braggadocio must have broken down. At first, they said, he took a very high tone, considered his imprisonment a mere farce, affected to enjoy the voyage, and all that; but Phillips said that after he came out of his state-room he never was the same man again. He never read aloud again, unless it was the Bible or Shakespeare, or something else he was sure of. But it was not that merely. He never entered in with the

other young men exactly as a companion again. He was always shy afterwards, when I knew him,—very seldom spoke, unless he was spoken to, except to a very few friends. He lighted up occasionally,—I remember late in his life hearing him fairly eloquent on something which had been suggested to him by one of Fléchier's sermons,—but generally he had the nervous, tired look of a heart-wounded man.

When Captain Shaw was coming home,—if, as I say, it was Shaw,-rather to the surprise of everybody they made one of the Windward Islands, and lay off and on for nearly a week. The boys said the officers were sick of salt-junk, and meant to have turtle-soup before they came home. But after several days the "Warren" came to the same rendezvous: they exchanged signals; she sent to Phillips and these homeward-bound men letters and papers, and told them she was outward-bound, perhaps to the Mediterranean, and took poor Nolan and his traps on the boat back to try his second cruise. He looked very blank when he was told to get ready to join her. He had known enough of the signs of the sky to know that till that moment he was going "home." But this was a distinct evidence of something he had not thought of, perhaps,—that there was no going home for him, even to a prison. And this was the first of some twenty such transfers, which brought him sooner or later into half our best vessels, but which kept him all his life at least some hundred miles from the country he had hoped he might never hear of again.

It may have been on that second cruise,—it was once when he was up the Mediterranean,—that Mrs. Graff, the celebrated Southern beauty of those days, danced with him. They had been lying a long time in the Bay of Naples, and the officers were very intimate in the English fleet, and there had been great festivities, and our men thought they must give a great ball on board the ship. How they ever did it on board the "Warren" I am sure I do not know. Perhaps it was not the "Warren," or perhaps ladies did not take up so much room as they do now. They wanted to use Nolan's state-room for something, and they hated to do it without asking him to the ball; so the captain said

they might ask him, if they would be responsible that he did not talk with the wrong people, "who would give him intelligence." So the dance went on, the finest party that had ever been known, I dare say; for I never heard of a man-of-war ball that was not. For ladies they had the family of the American consul, one or two travellers who had adventured so far, and a nice bevy of English girls and matrons, perhaps Lady Hamilton herself.

Well, different officers relieved each other in standing and talking with Nolan in a friendly way, so as to be sure that nobody else spoke to him. The dancing went on with spirit, and after a while even the fellows who took this honorary guard of Nolan ceased to fear any contretemps. Only when some English lady—Lady Hamilton, as I said, perhaps—called for a set of "American dances," an odd thing happened. Everybody then danced contra-dances. The black band, nothing loath, conferred as to what "American dances" were, and started off with "Virginia Reel," which they followed with "Money-Musk," which, in its turn in those days, should have been followed by "The Old Thirteen." But just as Dick, the leader, tapped for his fiddles to begin, and bent forward, about to say, in true negro state, "'The Old Thirteen,' gentlemen and ladies!" as he had said "'Virginny Reel,' if you please!" and "'Money-Musk,' if you please!" the captain's boy tapped him on the shoulder, whispered to him, and he did not announce the name of the dance; he merely bowed, began on the air, and they all fell to,-the officers teaching the English girls the figure, but not telling them why it had no name.

But that is not the story I started to tell. As the dancing went on, Nolan and our fellows all got at ease, as I said,—so much so, that it seemed quite natural for him to bow to that splendid Mrs. Graff, and say,—

"I hope you have not forgotten me, Miss Rutledge. Shall

I have the honor of dancing?"

He did it so quickly, that Fellows, who was with him, could not hinder him. She laughed and said,—

"I am not Miss Rutledge any longer, Mr. Nolan; but I will dance all the same," just nodded to Fellows, as if to

say he must leave Mr. Nolan to her, and led him off to

the place where the dance was forming.

Nolan thought he had got his chance. He had known her at Philadelphia, and at other places had met her, and this was a Godsend. You could not talk in contra-dances, as you do in cotillions, or even in the pauses of waltzing; but there were chances for tongues and sounds, as well as for eyes and blushes. He began with her travels, and Europe, and Vesuvius, and the French; and then, when they had worked down, and had that long talking time at the bottom of the set, he said boldly,—a little pale, she said, as she told me the story years after,—

"And what do you hear from home, Mrs. Graff?"

And that splendid creature looked through him. Jove!

how she must have looked through him!

"Home!! Mr. Nolan!!! I thought you were the man who never wanted to hear of home again!"—and she walked directly up the deck to her husband, and left poor Nolan alone, as he always was.—He did not dance again. I cannot give any history of him in order; nobody can now; and,

indeed, I am not trying to.

These are the traditions, which I sort out, as I believe them, from the myths which have been told about this man for forty years. The lies that have been told about him are legion. The fellows used to say he was the "Iron Mask;" and poor George Pons went to his grave in the belief that this was the author of "Junius," who was being punished for his celebrated libel on Thomas Jefferson. Pons

was not very strong in the historical line.

A happier story than either of these I have told is of the war. That came along soon after. I have heard this affair told in three or four ways,—and, indeed, it may have happened more than once. But which ship it was on I cannot tell. However, in one, at least, of the great frigate-duels with the English, in which the navy was really baptized, it happened that a round-shot from the enemy entered one of our ports square, and took right down the officer of the gun himself, and almost every man of the gun's crew. Now you may say what you choose about courage, but that is not a nice thing to see. But, as the men who were not

killed picked themselves up, and as they and the surgeon's people were carrying off the bodies, there appeared Nolan, in his shirt-sleeves, with the rammer in his hand, and, just as if he had been the officer, told them off with authority, who should go to the cock-pit with the wounded men. who should stay with him,—perfectly cheery, and with that way which makes men feel sure all is right and is going to be right. And he finished loading the gun with his own hands, aimed it, and bade the men fire. And there he staved, captain of that gun, keeping those fellows in spirits, till the enemy struck,—sitting on the carriage while the gun was cooling. though he was exposed all the time.—showing them easier ways to handle heavy shot,-making the raw hands laugh at their own blunders,—and when the gun cooled again, getting it loaded and fired twice as often as any other gun on the ship. The captain walked forward by way of encouraging the men, and Nolan touched his hat and said,—

"I am showing them how we do this in the artillery, sir."
And this is the part of the story where all the legends

agree; the commodore said,-

"I see you do, and I thank you, sir; and I shall never

forget this day, sir, and you never shall, sir."

And after the whole thing was over, and he had the Englishman's sword, in the midst of the state and ceremony of the quarter-deck, he said,—

"Where is Mr. Nolan? Ask Mr. Nolan to come here."

And when Nolan came, he said,-

"Mr. Nolan, we are all very grateful to you to-day; you are one of us to-day; you will be named in the despatches."

And then the old man took off his own sword of ceremony, and gave it to Nolan, and made him put it on. The man told me this who saw it. Nolan cried like a baby, and well he might. He had not worn a sword since that infernal day at Fort Adams. But always afterwards on occasions of ceremony, he wore that quaint old French sword of the commodore's.

The captain did mention him in the despatches. It was always said he asked that he might be pardoned. He wrote a special letter to the Secretary of War. But nothing ever came of it. As I said, that was about the time when they

began to ignore the whole transaction at Washington, and when Nolan's imprisonment began to carry itself on because there was nobody to stop it without any new orders from home.

I have heard it said that he was with Porter when he took possession of the Nukahiwa Islands. Not this Porter, you know, but old Porter, his father, Essex Porter,—that is, the old Essex Porter, not this Essex. As an artillery officer who had seen service in the West, Nolan knew more about fortifications, embrasures, ravelins, stockades, and all that, than any of them did; and he worked with a right goodwill in fixing that battery all right. I have always thought it was a pity Porter did not leave him in command there with Gamble. That would have settled all the question about his punishment. We should have kept the islands, and at this moment we should have one station in the Pacific Ocean. Our French friends, too, when they wanted this little watering-place, would have found it was preoccupied. But Madison and the Virginians, of course, flung all that away.

All that was near fifty years ago. If Nolan was thirty then, he must have been near eighty when he died. He looked sixty when he was forty. But he never seemed to me to change a hair afterwards. As I imagine his life, from what I have seen and heard of it, he must have been in every sea, and yet almost never on land. He must have known, in a formal way, more officers in our service than any man living knows. He told me once, with a grave smile, that no man in the world lived so methodical a life as he. "You know the boys say I am the Iron Mask, and you know how busy he was." He said it did not do for any one to try to read all the time, more than to do anything else all the time; but that he read just five hours a day. "Then," he said, "I keep up my note-books, writing in them at such and such hours from what I have been reading; and I include in these my scrap-books." These were very curious indeed. He had six or eight, of different subjects. There was one of History, one of Natural Science, one which he called "Odds and Ends." But they were not merely books of extracts from newspapers. They had bits of plants and

ribbons, shells tied on, and carved scraps of bone and wood, which he had taught the men to cut for him, and they were beautifully illustrated. He drew admirably. He had some of the funniest drawing there, and some of the most pathetic, that I have ever seen in my life. I wonder who will have Nolan's scrap-books.

Well, he said his reading and his notes were his profession, and that they took five hours and two hours respectively of each day. "Then," said he, "every man should have a diversion as well as a profession. My Natural History is my diversion." That took two hours a day more. The men used to bring him birds and fish, but on a long cruise he had to satisfy himself with centipedes and cockroaches and such small game. He was the only naturalist I ever met who knew anything about the habits of the house-fly and the mosquito. All those people can tell you whether they are Lepidoptera or Steptopotera; but as for telling how you can get rid of them, or how they get away from you when you strike them,—why Linnæus knew as little of that as John Foy the idiot did. These nine hours made Nolan's regular daily "occupation." The rest of the time he talked or walked. Till he grew very old, he went aloft a great deal. He always kept up his exercise; and I never heard that he was ill. If any other man was ill, he was the kindest nurse in the world; and he knew more than half the surgeons do. Then if anybody was sick or died, or if the captain wanted him to, on any other occasion, he was always ready to read prayers. I have said that he read beautifully.

My own acquaintance with Philip Nolan began six or eight years after the English war, on my first voyage after I was appointed a midshipman. It was in the first days after our Slave-Trade treaty, while the Reigning House, which was still the House of Virginia, had still a sort of sentimentalism about the suppression of the horrors of the Middle Passage, and something was sometimes done that way. We were in the South Atlantic on that business. From the time I joined, I believe I thought Nolan was a sort of lay chaplain,—a chaplain with a blue coat. I never asked about him. Everything in the ship was strange to me.

I knew it was green to ask questions, and I suppose I thought there was a "Plain-Buttons" on every ship. We had him to dine in our mess once a week, and the caution was given that on that day nothing was to be said about home. But if they had told us not to say anything about the planet Mars or the Book of Deuteronomy, I should not have asked why; there were a great many things which seemed to me to have as little reason. I first came to understand anything about "the man without a country" one day when we overhauled a dirty little schooner which had slaves on board. An officer was sent to take charge of her, and, after a few minutes, he sent back his boat to ask that some one might be sent him who could speak Portuguese. We were all looking over the rail when the message came, and we all wished we could interpret, when the captain asked Who spoke Portuguese. But none of the officers did; and just as the captain was sending forward to ask if any of the people could, Nolan stepped out and said he should be glad to interpret, if the captain wished, as he understood the language. The captain thanked him, fitted out another boat with him, and in this boat it was my luck to go.

When we got there, it was such a scene as you seldom see, and never want to. Nastiness beyond account, and chaos run loose in the midst of the nastiness. There were not a great many of the negroes; but by way of making what there were understand that they were free, Vaughan had had their hand-cuffs and ankle-cuffs knocked off, and, for convenience' sake, was putting them upon the rascals of the schooner's crew. The negroes were, most of them, out of the hold, and swarming all round the dirty deck, with a central throng surrounding Vaughan and addressing him in every dialect, and patois of a dialect, from the Zulu click up to the Parisian of Beledeljereed.

As we came on deck, Vaughan looked down from a hogshead, on which he had mounted in desperation, and said:—
"For God's love, is there anybody who can make these wretches understand something? The men gave them rum, and that did not quiet them. I knocked that big fellow down twice, and that did not soothe him. And then I

talked Choctaw to all of them together; and I'll be hanged if they understood that as well as they understood the English."

Nolan said he could speak Portuguese, and one or two fine-looking Kroomen were dragged out, who, as it had been found already, had worked for the Portuguese on the coast at Fernando Po.

"Tell them they are free," said Vaughan; "and tell them that these rascals are to be hanged as soon as we can get rope enough."

Nolan "put that into Spanish,"—that is, he explained it in such Portuguese as the Kroomen could understand, and they in turn to such of the negroes as could understand them. Then there was such a yell of delight, clinching of fists, leaping and dancing, kissing of Nolan's feet, and a general rush made to the hogshead by way of spontaneous worship of Vaughan, as the deus ex machina of the occasion.

"Tell them," said Vaughan, well pleased, "that I will take them all to Cape Palmas."

This did not answer so well. Cape Palmas was practically as far from the homes of most of them as New Orleans or Rio Janeiro was; that is, they would be eternally separated from home there. And their interpreters, as we could understand, instantly said, "Ah, non Palmas," and began to propose infinite other expedients in most voluble language. Vaughan was rather disappointed at this result of his liberality, and asked Nolan eagerly what they said. The drops stood on poor Nolan's white forehead, as he hushed the men down, and said:—

"He says, 'Not Palmas.' He says, 'Take us home, take us to our own country, take us to our own house, take us to our own pickaninnies and our own women.' He says he has an old father and mother who will die if they do not see him. And this one says he left his people all sick, and paddled down to Fernando to beg the white doctor to come and help them, and that these devils caught him in the bay just in sight of home, and that he has never seen anybody from home since then. And this one says," choked out Nolan, "that he has not heard a word from his home in

men who shall have one day to exile themselves from their country because they have attempted her ruin, and shall have at the same time to see the prosperity and honor to which she rises when she has rid herself of them and their iniquities. The wish of poor Nolan, as we all learned to call him, not because his punishment was too great, but because his repentance was so clear, was precisely the wish of every Bragg and Beauregard who broke a soldier's oath two years ago, and of every Maury and Barron who broke a sailor's. I do not know how often they have repented. I do know that they have done all that in them lay that they might have no country,—that all the honors, associations, memories, and hopes which belong to "country" might be broken up into little shreds and distributed to the winds. I know, too, that their punishment, as they vegetate through what is left of life to them in wretched Boulognes and Leicester Squares, where they are destined to upbraid each other till they die, will have all the agony of Nolan's, with the added pang that every one who sees them will see them to despise and to execrate them. They will have their wish. like him.

For him, poor fellow, he repented of his folly, and then, like a man, submitted to the fate he had asked for. He never intentionally added to the difficulty or delicacy of the charge of those who had him in hold. Accidents would happen; but they never happened from his fault. Lieutenant Truxton told me that, when Texas was annexed, there was a careful discussion among the officers, whether they should get hold of Nolan's handsome set of maps and cut Texas out of it,—from the map of the world and the map of Mexico. The United States had been cut out when the atlas was bought for him. But it was voted, rightly enough, that to do this would be virtually to reveal to him what had happened, or, as Harry Cole said, to make him think Old Burr had succeeded. So it was from no fault of Nolan's that a great botch happened at my own table, when, for a short time, I was in command of the George Washington corvette, on the South American station. We were lying in the La Plata, and some of the officers, who had been on shore and had just joined again, were entertaining us with accounts of their misadventures in riding the half-wild horses of Buenos Ayres. Nolan was at table, and was in an unusually bright and talkative mood. Some story of a tumble reminded him of an adventure of his own when he was catching wild horses in Texas with his adventurous cousin, at a time when he must have been quite a boy. He told the story with a good deal of spirit,—so much so, that the silence which often follows a good story hung over the table for an instant, to be broken by Nolan himself. For he asked perfectly unconsciously:—

"Pray, what has become of Texas? After the Mexicans got their independence, I thought that province of Texas would come forward very fast. It is really one of the finest regions on earth; it is the Italy of this continent. But I have not seen or heard a word of Texas for near twenty

years."

There were two Texan officers at the table. The reason he had never heard of Texas was that Texas and her affairs had been painfully cut out of his newspapers since Austin began his settlements; so that, while he read of Honduras and Tamaulipas, and, till quite lately, of California,—this virgin province, in which his brother had travelled so far, and, I believe, had died, had ceased to be to him. Waters and Williams, the two Texas men, looked grimly at each other and tried not to laugh. Edward Morris had his attention attracted by the third link in the chain of the captain's chandelier. Watrous was seized with a convulsion of sneezing. Nolan himself saw that something was to pay, he did not know what. And I, as master of the feast had to say.—

"Texas is out of the map, Mr. Nolan. Have you seen Captain Back's curious account of Sir Thomas Roe's Welcome?"

After that cruise I never saw Nolan again. I wrote to him at least twice a year, for in that voyage we became even confidentially intimate; but he never wrote to me. The other men tell me that in those fifteen years he aged very fast, as well he might indeed, but that he was still the same gentle, uncomplaining, silent sufferer that he ever was, bearing as best he could his self-appointed punishment,—rather

less social, perhaps, with new men whom he did not know, but more anxious, apparently, than ever to serve and befriend and teach the boys, some of whom fairly seemed to worship him. And now it seems the dear old fellow is dead. He has found a home at last, and a country.

Since writing this, and while considering whether or no I would print it, as a warning to the young Nolans and Vallandighams and Tatnalls of to-day of what it is to throw away a country, I have received from Danforth, who is on board the "Levant," a letter which gives an account of Nolan's last hours. It removes all my doubts about telling

this story.

To understand the first words of the letter, the non-professional reader should remember that after 1817, the position of every officer who had Nolan in charge was one of the greatest delicacy. The government had failed to renew the order of 1807 regarding him. What was a man to do? Should he let him go? What, then, if he were called to account by the Department for violating the order of 1807? Should he keep him? What, then, if Nolan should be liberated some day, and should bring an action for false imprisonment or kidnapping against every man who had had him in charge?

I urged and pressed this upon Southard, and I have reason to think that other officers did the same thing. But the Secretary always said, as they so often do at Washington, that there were no special orders to give, and that we must act on our own judgment. That means, "If you succeed, you will be sustained; if you fail, you will be disavowed." Well, as Danforth says, all that is over now, though I do not know but I expose myself to a criminal prosecution on the evidence of the very revelation I am

making.

Here is the letter:-

LEVANT, 2° 2' S. @ 131° W.

"Dear Fred:—I try to find heart and life to tell you that it is all over with dear old Nolan. I have been with him on this voyage more than I ever was, and I can understand wholly now the way in which you used to speak of the dear

old fellow. I could see that he was not strong, but I had no idea the end was so near. The doctor has been watching him very carefully, and yesterday morning came to me and told me that Nolan was not so well, and had not left his state-room,-a thing I never remember before. He had let the doctor come and see him as he lay there,—the first time the doctor had been in the state-room,—and he said he should like to see me. Oh, dear! do you remember the mysteries we boys used to invent about his room in the old 'Intrepid' days? Well, I went in, and there, to be sure, the poor fellow lay in his berth, smiling pleasantly as he gave me his hand, but looking very frail. I could not help a glance round, which showed me what a little shrine he had made of the box he was lying in. The stars and stripes were triced up above and around a picture of Washington, and he had painted a majestic eagle, with lightnings blazing from his beak and his foot just clasping the whole globe, which his wings overshadowed. The dear old boy saw my glance, and said, with a sad smile, 'Here, you see, I have a country!' And then he pointed to the foot of his bed, where I had not seen before a great map of the United States, as he had drawn it from memory, and which he had there to look upon as he lay. Quaint, queer old names were on it, in large letters: 'Indiana Territory,' 'Mississippi Territory,' and 'Louisiana Territory,' as I suppose our fathers learned such things: but the old fellow had patched in Texas, too; he had carried his western boundary all the way to the Pacific. but on that shore he had defined nothing.

"'O Danforth,' he said, 'I know I am dying. I cannot get home. Surely you will tell me something now?—Stop! stop! Do not speak till I say what I am sure you know, that there is not in this ship, that there is not in America.—God bless her!—a more loyal man than I. There cannot be a man who loves the old flag as I do, or prays for it as I do, or hopes for it as I do. There are thirty-four stars in it now, Danforth. I thank God for that, though I do not know what their names are. There has never been one taken away: I thank God for that. I know by that that there has never been any successful Burr. O Danforth, Danforth,' he sighed out, 'how like a wretched night's dream a boy's

Greenough's Washington: Ingham, I told him everything I could think of that would show the grandeur of his country and its prosperity; but I could not make up my mouth to tell him a word about this infernal rebellion!

"And he drank it in and enjoyed it as I cannot tell you. He grew more and more silent, yet I never thought he was tired or faint. I gave him a glass of water, but he just wet his lips, and told me not to go away. Then he asked me to bring the Presbyterian 'Book of Public Prayer,' which lay there, and said, with a smile, that it would open at the right place,—and so it did. There was his double red mark down the page; and I knelt down and read, and he repeated with me. 'For ourselves and our country, O gracious God, we thank Thee, that, notwithstanding our manifold transgressions of Thy holy laws, Thou hast continued to us Thy marvellous kindness.'—and so to the end of that thanksgiving. Then he turned to the end of the same book, and I read the words more familiar to me: 'Most heartily we beseech Thee with Thy favor to behold and bless Thy servant, the President of the United States, and all others in authority,'-and the rest of the Episcopal collect. 'Danforth,' said he, 'I have repeated those prayers night and morning, it is now fifty-five years.' And then he said he would go to sleep. He bent me down over him and kissed me: and he said. 'Look in my Bible, Danforth, when I am gone,' And I went away.

"But I had no thought it was the end. I thought he was tired and would sleep. I knew he was happy, and I wanted

him to be alone.

"But in an hour, when the doctor went in gently, he found Nolan had breathed his life away with a smile. He had something pressed close to his lips. It was his father's badge of the Order of the Cincinnati.

"We looked in his Bible, and there was a slip of paper at

the place where he had marked the text:-

"They desire a country, even a heavenly: wherefore God is not ashamed to be called their God: for He hath prepared for them a city.'

"On this slip of paper he had written:

"'Bury me in the sea; it has been my home, and I love

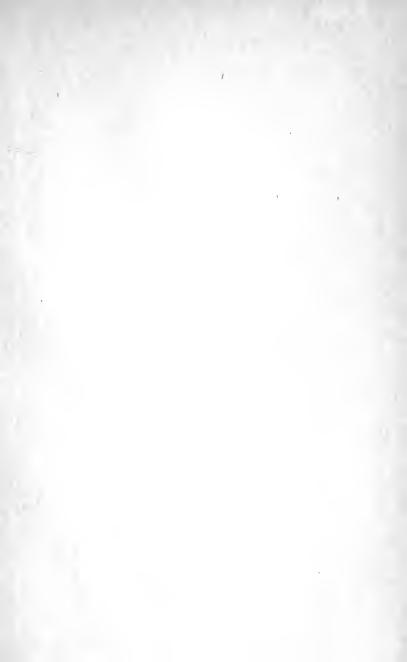
it. But will not some one set up a stone for my memory at Fort Adams or at Orleans, that my disgrace may not be more than I ought to bear? Say on it:—

"'In Memory of
"'PHILIP NOLAN.

"'Lieutenant in the Army of the United States.

"'HE LOVED HIS COUNTRY AS NO OTHER MAN HAS LOVED HER; BUT
NO MAN DESERVED LESS AT HER HANDS.'"





#### UNIVERSITY OF CALIFORNIA LIBRARY Los Angeles

This book is DUE on the last date stamped below.

1012 Form L9-50m-7,'54(5990)444



